GURU GRANTH SAHIB KI PRAMUKH VAANIYA (HINDI)

अनुक्रमणिका

੧ੳ

जपु जी साहिब

(यह आदि श्री गुरुग्रन्थ साहिब
की सर्वप्रथम वाणी है।)

प्रातः कालीन वन्दना

[मनोनिग्रह और नाम स्मरण द्वारा आत्मा को परमात्मा
में लीन करके जीवनमुक्त कराने वाली वाणी]

जपुजी साहिब

१ ओंकार

सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

ओंकार एक है, सत्य उसका नाम है। वह सृष्टि का रचयिता पुरुष है। वह भय से रहित है, उसे किसी से वैर नहीं; (भय और वैर द्वैत की उत्पत्ति हैं), वह कालातीत (अर्थात् भूत, भविष्य, वर्तमान से परे) है, इसलिए नित्य है। वह अयोनि है अर्थात् जन्म-मरण के चक्र से मुक्त है, वह स्वयंभू है (स्वयं प्रकट होनेवाला है), उसकी लब्धि मात्र सतिगुरु की कृपा से ही सम्भव है।

॥ जपु ॥

यह इस वाणी का नाम (शीर्षक) है अथवा दूसरा अर्थ है कि याद कर।

आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ १ ॥*

वह प्रभु (वाहिगुरु) ही एकमात्र सत्यस्वरूप है। जब कुछ नहीं था, तो भी उसकी सत्ता थी, चारों युगों (सतियुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलियुग) से भी पूर्व वह सत्य-स्वरूप परमात्मा विद्यमान था, आज भी (वर्तमान में) वही है और भविष्य में भी उसी की सत्ता स्थिर रहेगी।

---

* [टिप्पणी : यह गुरुमत का मूल-मन्त्र है, इसमें गुरु नानक देव जी ने परमात्मा के शाब्दिक संकल्प को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। यद्यपि गुरुमत की मान्यतानुसार ब्रह्म निर्गुण है, इसलिए उसके किसी भी रूपाकार को शब्दों में बद्ध नहीं किया जा सकता; तथापि उसकी अतीतता, व्यापकता और स्वायत्तता बताने के लिए कतिपय शब्दों का चयन-मात्र इस मूल-मन्त्र में किया गया है।]

❊ १ ❊

सोचै सोचि न होवई जे सोची लखवार।
चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिवतार।
भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार।
सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि।
किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।

शुचिकरण (सोचै) द्वारा कोई पवित्र नहीं हो सकता अर्थात् शौचादि से यथार्थ ज्ञान की उपलब्धि नहीं होती, चाहे कोई लाखों बार भौतिक सफाई करता रहे। ज्ञान-लब्धि मन की निर्मलता से सम्भव है, भौतिक निर्मलता (शौच) से सत्य की प्राप्ति नहीं। वाणी की चुप्पी से मन के संकल्प-विकल्प शांत नहीं होते; चाहे कोई चित्त-वृत्तियों को कितना भी संयमित करने का प्रयास करे, उसका मन भटकता ही रहता है। (भूखा रहने अर्थात् व्रत-उपवास करने से तृष्णा रूपी भूख का दमन नहीं होता।) सृष्टि की पुरियों (बैकुण्ठपुरी, इन्द्रपुरी आदि) के यदि सब वैभव भी प्राप्त कर लिए जाएँ तो भी तृष्णा का कहीं अन्त नहीं। यदि मनुष्य के पास असंख्य बौद्धिक तर्क और विश्लेषण मौजूद हों, परमात्मा की राह पर एक भी सहयोगी नहीं होता—तब (ऐसे में) सांसारिक मनुष्य कैसे सत्य-पथ-गमन कर सकता है? झूठ से निस्तार कैसे सम्भव है? माया का आवरण किस प्रकार विदीर्ण होगा? (इसके उत्तर में) गुरुनानक जी कहते हैं कि जीव को परमात्मा के हुकुम

*[टिप्पणी : गुरुनानक-काल में कर्मकाण्ड बढ़ गया था, इसलिए इस पद में व्रत, उपवास, मौन, तर्क आदि को हटाकर गुरुजी ने परमात्मा का सहारा खोजने की शिक्षा दी है।]

(अनुशंसा) में रहना चाहिए, सत्य की सत्ता की अनुभूति का यही एक-मात्र मार्ग है—जो अनन्त काल से जीव की उत्पत्ति से लेकर आज तक चला आ रहा है।

❊ २ ❊

हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई।
हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि।
इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि।
हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ।
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।

परमात्मा के हुकुम की कोई व्याख्या सम्भव नहीं है, परम की इच्छा की कोई शाब्दिक अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। विश्व के सभी रूप-आकार उसी की इच्छा द्वारा सृजित हैं। उसी के हुकुम से विभिन्न जीवों को अलग-अलग योनियों को धारण करना होता है और उसकी स्वेच्छा से ही जीव बड़े-छोटे आकार और पद प्राप्त करते हैं। हुकुमी अर्थात् परमात्मा (हुकुम देनेवाला, इच्छुक) की इच्छा से ही जीव उत्तम-नीच योनी में आता और दुःख-सुख को प्राप्त होता है। परमात्मा जिस पर कृपा कर देता है, उसे आत्म-पद देकर मुक्त करता है और अन्य को जन्म-मरण के आवागमन में भी उसी की ही इच्छा से रहना होता है। तात्पर्य यह कि विश्व का प्रत्येक कार्य-व्यापार और व्यवहार उसके हुकुम में बंधा है, उससे बाहर कुछ भी नहीं। यदि जीवात्मा इस तथ्य को सही परिप्रेक्ष्य में पहचान ले और सब दशाओं में ईश्वर का हुकुम सिर-माथे पर धारण करे, तो वह अहंकार के परिवेश (मैं करता हूँ, मैं करूँगा आदि) से मुक्त होता है।

❋ ३ ❋

गावै को ताणु होवै किसै ताणु।

गावै को दाति जाणै नीसाणु।

गावै को गुण वडिआईआ चार।

गावै को विदिआ विखमु वीचारु।

गावै को साजि करे तनु खेह।

गावै को जीअ लै फिरि देह।

गावै को जापै दिसै दूरि।

गावै को वेखै हादरा हदूरि।

कथना कथी न आवै तोटि।

कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि।

देदा दे लैदे थकि पाहि।

जुगा जुगंतरि खाही खाहि।

हुकमी हुकमु चलाए राहु।

नानक विगसै बेपरवाहु।

अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार, प्रत्येक जीव उस परमसत्ता के बल का वर्णन कर रहा है अर्थात् जिसमें जितना अधिक आत्मिक बल है वह उतने ही अधिक उत्साह से उतना ही अधिक घट-घट में बस रही उसकी सत्ता को अपने अन्दर अनुभव करता है। कोई उसकी दी

हुई विभूतियों को उसी का स्वरूप समझकर उसके गुण गाता है। कोई उसके बड़प्पन का गायन उसके बिरद प्रतिपालक रूप को ध्यान में रखकर करता है (हर युग में प्रभुसत्ता ने अधर्म का नाश किया है और भक्तों, संतों एवं साधारण जनों का उद्धार किया है)। कोई बौद्धिक ज्ञान के आधार पर उसके द्वारा क्रियाशील विषम नियमों की व्याख्या करता है और उसके गुण गाता है। कोई उसको सृजनात्मक एवं संहारक सत्ता के रूप में गाता है। कोई उसको घट-घट में प्राण फूँकने और प्राणों को अपने में लीन करनेवाले के रूप में गाता है। कोई उसको अगम्य अगोचर होने के कारण गाता है और कोई उसको अपने आगे-पीछे, नीचे-ऊपर दसों दिशाओं में अंग-संग अनुभव करके उसके गुणानुवाद करता है। उसके 'हुकुम' के गुणों का कथन करनेवाले करोड़ों ही जीव हैं पर उसके विधान का अन्त नहीं पाया जा सकता। दाता प्रभु की विभूतियाँ अनन्त हैं फिर भी वह सदैव देता ही रहता है। लेने वाले थक जाते हैं पर देनेवाले परमात्मा के दिये चले जाने का अन्त नहीं। युगों-युगान्तरों तक समाप्त न होनेवाली अक्षय निधियाँ वह इस संसार को नित्य देता ही जाता है। प्रभुसत्ता अपने ढंग से संसार का कार्य-व्यवहार अनादिकाल से ही चलाती चली आ रही है। हे नानक, वह निरंकार स्वयं इच्छा-रहित (बे-परवाहु) होने के कारण जीवों की अज्ञानता पर प्रसन्न होता है, अर्थात् माया-बन्धनों में पड़े जीव अहंकार-वश प्रभु के कार्य-व्यापार को अपना किया बताते हैं, तो भी वह परमात्मा उन पर क्रुद्ध न होकर उनकी नासमझी पर मुस्कराता है।

❊ ४ ❊

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु।

आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु।

फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु।
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु।
अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु।
करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु।
नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु।

वह सबका स्वामी (साहिब) परमात्मा परम सत्य है, और उसका नाम भी उतना ही सत्य है। नाम की व्याख्या करनेवाले (सन्त-महात्मा) वे महापुरुष हैं, जिन्हें प्रभु से अपार प्रेम था और जिन्होंने नामी (परमात्मा) का ज्ञान प्राप्त किया था। नाम की माँग परमात्मा से सब करते हैं और वह भी जीवों के कर्मानुसार यथोचित सबको देता है। (अब प्रश्न उठता है कि) उस अकाल प्रभु के आगे क्या भेंट करें, जिससे वह दर्शन देकर हमें कृतार्थ करे अथवा क्योंकर उसका यशोगान करें कि जिससे वह हमें प्यार का दान दे? (उत्तर स्पष्ट है) अमृत समय (प्रभातवेला) उस प्रभु के सच्चे नाम का जाप तथा उसकी महानता को जानकर उसका विरद-गान करने से ईश्वर का प्यार लब्ध होता है। अलग कर्मों के कारण आत्मा विभिन्न शरीरों का जामा धारण करती रहती है, मोक्ष तो केवल उसकी दया (नदरी) से ही सम्भव है। अत: हे नानक! ऐसा ज्ञान प्राप्त करो कि (सब संशय नष्ट हो जायँ) और उसके सर्वव्यापक तथा सर्वकर्त्ता होने में विश्वास जाग्रत हो।

❊ ५ ❊

थापिआ न जाइ कीता न होई।
आपे आपि निरंजनु सोइ॥

जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु।

नानक गावीऐ गुणी निधानु॥

गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ।

दुखु परहरि सुखु घरि लै जाइ॥

गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई।

गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई।

जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई।

गुरा इक देहि बुझाई।

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।

(शायद यहाँ यह प्रश्न उठा हो कि उस अकाल पुरुष को किसने बनाया है? उसी के उत्तर में कहा जा रहा है) उस परमात्मा को किसी ने स्थापित नहीं किया (किसी ने नहीं बनाया), और न ही किसी के द्वारा वह उत्पन्न किया गया है—अर्थात् वह नाद और बिंदु दोनों से अतीत है। वह 'नि:अंजन' अर्थात् मायातीत है, स्वयं-सिद्ध है, अनादि और अनंत है। जिन सुजनों ने उसकी सेवा धारण की है, उन्हें नित्य सम्मान प्राप्त है—ऐसा मानकर उस गुण-खान परमात्मा का भजन करना चाहिए। (प्रश्न उठा कि भजन किसे सुनाएँ? वाणी उत्तर देती है—) प्रभु-भजन का गान, श्रवण तथा मन में प्रेम-भाव बनाने से सांसारिक दु:खों का नाश और सुखों की उपलब्धि होती है। जीव आनन्द में विचरण करता है। गुरु-मुख के शब्द द्वारा जब सच्चा शिष्य परमात्मा को जानता है, तो वह उस प्रभु में ही समा जाता है अर्थात् उससे अभेद हो जाता। (परमात्मा को बता, मिला सकनेवाला गुरु कौन हो सकता है?) गुरु बहुत बड़ी शक्ति है; बिना उसके शिव, विष्णु,

ब्रह्मा या पार्वती, लक्ष्मी, सरस्वती आदि देवियों को भी कोई ठौर नहीं। गुरु में इन सभी के गुण मौजूद होते हैं—शिव-रूप में वह शिष्यों का कल्याण करता है, विष्णु-रूप में वह शुभगुणों की पालना करता है, ब्रह्मा-रूप में वह गुणों का सृजनकर्ता है। इसी प्रकार पार्वती की नाईं अवगुण-नाशक, लक्ष्मी की भाँति दैवी-संपदा का दाता और सरस्वती की तरह ज्ञान-प्रदाता है। ऐसे गुरु के अनन्त गुणों को जानकर भी कहा नहीं जा सकता, अर्थात् मैं उसके समस्त गुण कह सकने में असमर्थ हूँ; कहना भी चाहूँ, तो मेरे लिए सम्भव नहीं होगा। गुरु बस एक ऐसी सूझ दे कि जगत के सभी जीवों के एक ही मालिक को कभी विस्मृत नहीं करूँ।

❋ ६ ❋

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी।
जेती सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई।
मति विचि रतन जवाहर माणिक
जे इकगुर की सिख सुणी।
गुरा इक देहि बुझाई।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।

(लोग तीर्थादि नहाने की बात करते हैं, गुरुजी कहते हैं) परमेश्वर को स्वीकार हो, तभी तीर्थ-स्नानादि सम्भव है; और यदि स्वीकृति के बिना तीर्थ कर भी लें तो उसका क्या लाभ होगा? (तीर्थ-स्नान का आयोजन परमात्मा की प्रसन्नता के लिए ही तो करते हैं, उसे मंजूर न हुआ, तो क्या लाभ?) यह जो सृष्टि है इसमें बिना कर्मों के किसी को कभी कोई फल प्राप्त हुआ है? जीव क्या अपनी शक्ति से कुछ पा सकता है? तात्पर्य यह कि जो भी हमारे कर्मों में होगा, वह अवश्य

मिलेगा— इसलिए तीर्थादि कर्मकाण्ड से क्या प्रयोजन! एक गुरु की शिक्षाओं पर आचरण करनेवालों को तो वैराग्य रूपी रत्न-जवाहर अपने ही भीतर लब्ध हो जाते हैं। हे गुरु! जगत के जीवों के एक ही मालिक प्रभु कभी विस्मृत नहीं हो।

❊ ७ ❊

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ।
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ।
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ।
जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के।
कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे।
नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे।
तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे।

(योगादि साधनों से अवस्था बढ़ भी जाय तो··· !) यदि व्यक्ति की आयु चतुर्युग के बराबर हो जाय, बल्कि उससे भी दस गुणा अधिक हो; नौ खण्डों, चौदह भुवनों में उसे ख्याति प्राप्त हो जाय, समूचा विश्व उसकी आज्ञा में चलने लगे। उसकी कीर्ति देश-देशान्तर में फैल जाय और सब लोग उसका यशोगान करने लगें, तो भी यदि परमात्मा की कृपा-दृष्टि उस पर न हो तो उसे कहीं सहारा नहीं। तात्पर्य यह कि व्यक्ति की उक्त समूची भौतिक सम्पन्नता उसे ईश्वर की निकटता नहीं दे सकती। भगवद्भक्तों के सम्मुख ऐसा वैभवशाली व्यक्ति कौड़ी का भी नहीं। वह व्यक्ति कीड़ों में भी कीड़े के समान (अर्थात् क्षुद्रतम कीट) है और स्वयं दोषी लोग भी उसे दोषपूर्ण मानेंगे (अर्थात् वह नीचतम होगा)। गुरुजी कहते हैं कि हे नानक! वह सर्वशक्तिमान

परमात्मा निर्गुणियों को गुणवान और गुणवानों को समर्थ बनाने की शक्ति रखता है। मुझे ऐसा कोई दीख नहीं पड़ता जो उस सर्वगुण में कोई गुण-वृद्धि कर सकता हो! भाव यह कि उसके किसी भी कार्य में मनुष्य का कोई हस्तक्षेप सम्भव नहीं।

❊ ८ ❊

सुणिऐ सिध पीर सुरिनाथ।
सुणिऐ धरति धवल आकास॥
सुणिऐ दीप लोअ पाताल।
सुणिऐ पोहि न सकै कालु॥
नानक भगता सदा विगासु।
सुणिऐ दूख पाप का नास॥

अब गुरुदेव नाम-श्रवण की महिमा कहते हैं। सिद्धों, पीरों, देवताओं और नाथों को (सामान्य मनुष्य से ऊँचा) जो पद प्राप्त है, वह नाम-श्रवण के ही कारण है। धरती पर धर्म की सत्ता और आकाश की स्थिति नाम ही के कारण है। (सातों) दीप, (सातों) लोक और (सातों) पाताल नाम-श्रवण से ही स्थित हैं।* नाम का श्रवण करनेवाले के पास मृत्यु (काल) भी नहीं पहुँचती (पोहि), अर्थात् वह चिरंजीवी (अमर) हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि नाम की भक्ति करने वाला निरन्तर खिला रहता है; नाम-श्रवण से सब प्रकार के कष्ट और पाप कट जाते हैं।

---

* [टिप्पणी : सात द्वीप—जंबू, शालिमल, पलाक्ष्य, कोच, साक, कुश, पुष्कर। सात लोक—भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्। सात पाताल—अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल, पाताल।]

※ ९ ※

सुणिऐ ईसरु बरमा इंदु।
सुणिऐ मुखि सालाहण मंदु॥
सुणिऐ जोग जुगति तनि भेद।
सुणिऐ सासत सिम्रिति वेद॥
नानक भगता सदा विगासु।
सुणिऐ दूख पाप का नासु॥

शिव (ईसर), ब्रह्मा तथा इन्द्र (या चन्द्र) का वर्तमान पद नाम-श्रवण का ही प्रतिफल है। मंद जाति (नीच) के लोग भी नाम-श्रवण से सराहनीय हो गये हैं (बाल्मीकि) सरीखे नीचे डाकू भी आज पूज्य और श्रद्धेय हैं। योग-भक्ति द्वारा शरीर के भीतर का भेद (षट्चक्रादि) जान लेना भी नाम-श्रवण के तुल्य होता है। वेद, शास्त्र और स्मृतियों के सिद्धान्त श्रवण में ही उपलब्ध हैं। इसीलिए गुरुजी का कथन है कि हे नानक! नाम की भक्ति करनेवाला निरन्तर खिला रहता है; नाम-श्रवण से सब प्रकार के कष्ट और पाप कट जाते हैं।

※ १० ※

सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु।
सुणिऐ अठसठि का इसनानु॥
सुणिऐ पड़ि पड़ि पावहि मानु।
सुणिऐ लागै सहजि धिआनु॥
नानक भगता सदा विगासु।
सुणिऐ दूख पाप का नासु॥

पावन नाम के श्रवण से (मानवता के मूल धर्मों) सत्य, सन्तोष

और विवेक की लब्धि होती है। नाम के अध्ययन से प्राप्य सम्मान का आधार भी नाम-श्रवण ही है; सहज में अन्तर्मुखी लगन की सम्भावना भी प्रभु-नाम-श्रवण में हैं। अतः गुरुजी कहते हैं कि हे नानक! नाम की भक्ति करनेवाला निरन्तर खिला रहता है; नाम-श्रवण से सब प्रकार के कष्ट और पाप कट जाते हैं।

❋ ११ ❋

सुणिऐ सरा गुणा के गाह।
सुणिऐ सेख पीर पातिसाह॥
सुणिऐ अंधे पावहि राहु।
सुणिऐ हाथ होवै असगाहु॥
नानक भगता सदा विगासु।
सुणिऐ दूख पाप का नासु॥

गुणों के (रस-समुद्र) सागर का मंथन (गाहि) भी श्रवण से ही सम्भव हो सका है। शेख, पीर और बादशाह नाम-श्रवण से ही अस्तित्व में हैं, अंधे (अज्ञानी) को ज्ञान-नेत्रों की प्राप्ति श्रवण से ही होती है अर्थात् पथ-भ्रष्ट व्यक्ति श्रवण से ही सत्पथ को पाता है। नाम-श्रवण से ही अगाध सागर बित्ते (हाथ) भर का हो जाता है—तात्पर्य यह कि कठिनतम समस्या भी नाम-श्रवण के कारण सुगम हो जाती है। इसीलिए गुरुजी कहते हैं कि हे नानक! नाम की भक्ति करनेवाला निरन्तर खिला रहता है; नाम-श्रवण से सब प्रकार के कष्ट और पाप कट जाते हैं।

* [टिप्पणी : उपर्युक्त चारों पद गुरुजी ने प्रेम-पूर्वक प्रभु-नाम का श्रवण करने के माहात्म्य को चित्रित करने के लिए कहे हैं। इनमें सिद्धों-नाथों आदि को गुरुजी ने स्पष्ट शब्दों में बताने का प्रयास किया है कि उनकी पद-स्थिति प्रभु-नाम के श्रवण से ही बनी है। यदि वे मालिक से टूटकर जीने लगते, तो इतिहास में भी उनकी कोई स्थिति न होती।]

❋ १२ ❋

मंने की गति कही न जाइ।

जे को कहै पिछै पछुताइ॥

कागदि कलम न लिखणहारु।

मंने का बहि करनि वीचारु॥

ऐसा नामु निरंजनु होइ।

जे को मंनि जाणै मनि कोइ॥

(श्रवणोपरांत मनन की स्थिति है। आगे के कुछ पदों में गुरुजी नाम के मनन का चित्रण करते हैं) जो जीव नाम का श्रवण करके, बाद में उसका मनन भी करता है, उसकी गति (आनन्दोल्लास) का अनुमान नहीं किया जा सकता। क्योंकि नाम का स्वरूप मन और वाणी से इतर है, इसलिए इसका कथन सम्भव नहीं; यदि कोई रहस्योद्‌घाटन का प्रयास करता भी है तो उसे पीछे पश्चाताप करना पड़ता है। (सच तो यह है कि) अभी वह कागज, कलम और लेखक पैदा ही नहीं हुए जो लिख-बोलकर नाम-मनन की महिमा का विचार कर सकें। निरंजन (मायातीत) परब्रह्म का नाम ऐसा महिमाशाली है कि बस स्वयं मनन करनेवाले का मन ही जानता है, (कोई दूसरा शब्दों में इसे व्यक्त नहीं कर सकता)।

❋ १३ ❋

मंनै सुरति होवै मनि बुधि।

मंनै सगल भवण की सुधि॥

मंनै मुहि चोटा न खाइ।
मंनै जम कै साथि न जाइ॥
ऐसा नामु निरंजनु होइ।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ॥

प्रभु-नाम का मनन करने से मन में प्रभु-प्रीति (सु-रति) जाग्रत होती है, और बुद्धि निर्मल हो जाती है। मननशील जीव को चौदहों लोकों की जानकारी मिलती है, अर्थात् वे पूर्ण ज्ञान को प्राप्त होतें हैं। मनन करनेवाला जीव (मुँह पर पड़ती हुई) काल की चोटों से सुरक्षित रहता है। ऐसा जीव उस मार्ग से नित्य बचता है, जिस पर उसे यम के हाथ पड़ने की सम्भावना होती है। सचमुच निरंजन (मायातीत) परब्रह्म का नाम इतना महिमाशाली है कि बस मनन करनेवाले का मन ही जानता है, (कोई दूसरा, शब्दों में इसे व्यक्त नहीं कर सकता)।

❊ १४ ❊

मंनै मारगि ठाक न पाइ।
मंनै पति सिउ परगटु जाइ॥
मंनै मगु न चलै पंथु।
मंनै धरम सेती सनबंधु॥
ऐसा नामु निरंजनु होइ।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ॥

मननशील प्राणी को (प्रभु-प्राप्ति के) मार्ग में कोई अड़चन (ठाक) नहीं आती। परमात्मा का मनन करने से जीव प्रतिष्ठा सहित विराजते हैं, वे धर्म में विश्वास करते हैं (पंथों के अभिमान या बाह्याडम्बर

से दूर रहते हैं)। मननशील व्यक्ति आनन्द और उल्लास में जीवनपथ तय करता है, उसका सम्बन्ध यथार्थ धर्म (सदाचार, परोपकारादि सद्‌गुण) से होता है। इसीलिए तो कहा है कि निरंजन परब्रह्म का नाम इतना महत्त्वपूर्ण है कि बस मननशील का मन ही जानता है (कोई दूसरा शब्दों में इसे व्यक्त नहीं कर सकता)।

❋ १५ ❋

मंनै पावहि मोखु दुआरु।
मंनै परवारै साधारु॥
मंनै तरै तारे गुरु सिख।
मंनै नानक भवहि न भिख॥
ऐसा नामु निरंजनु होइ।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ॥

प्रभु-नाम का मनन करनेवाले मुक्ति के द्वार अर्थात् सत्य-ज्ञान को पा जाते हैं। अपने सगे-सम्बन्धियों, मित्र-कुटुम्बियों को भी सुधार लेते हैं (या आधार-सहित बनाते अर्थात् प्रभु-शरण में ले आते हैं)। मननशील प्राणी स्वयं तो संसार-सागर से तिरते ही हैं, पथ-प्रदर्शक बनकर दूसरों के मोक्ष का भी कारण बनते हैं। गुरु नानक जी कहते हैं कि नाममनन करनेवाला जीव चौरासी के आवागमन (चौरासी लाख योनियों का चक्र) से सुरक्षित हो जाता है, उसे किसी वस्तु की अपेक्षा (भिख) नहीं रह जाती। निरंजन (मायातीत) परब्रह्म का नाम इतना महिमाशाली है कि बस मननशील का मन ही जानता है (कोई दूसरा शब्दों में इसे व्यक्त नहीं कर सकता)।

✲ १६ ✲

पंच परवाण पंच परधानु।
पंचे पावहि दरगहि मानु॥
पंचे सोहहि दरि राजानु।
पंचा का गुरु एकु धिआनु॥
जे को कहै करै वीचारु।
करते कै करणै नाही सुमारु॥
धौलु धरमु दइआ का पूतु।
संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति॥
जे को बुझै होवै सचिआरु।
धवलै उपरि केता भारु॥
धरती होरु परै होरु होरु।
तिस ते भारु तलै कवणु जोरु॥
जीअ जाति रंगा के नाव।
सभना लिखिआ वुड़ी कलाम॥
एहु लेखा लिखि जाणै कोइ।
लेखा लिखिआ केता होइ॥
केता ताणु सुआलिहु रूपु।
केती दाति जाणै कौणु कूतु॥

कीता पसाउ एको कवाउ।

तिस ते होए लख दरीआउ॥

कुदरति कवण कहा वीचारु।

वारिआ न जावा एक वार॥

जो तुधु भावै साई भली कार।

तू सदा सलामति निरंकार॥

परमात्मा के दरबार में सन्त-जनों की प्रतिष्ठा है (सत्, संतोष, धैर्य, धर्म तथा दया आदि पाँच गुणों को धारण करनेवाले महात्मा की प्रतिष्ठा है), वे ही वहाँ प्रधान (मुख्य) हैं। (पाँचों विषयों—शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गन्ध—का निरोध करनेवाली आत्मा ही परमात्मा का प्रिय है)। सन्त-जनों को प्रभु के सम्मुख भी आदर मिलता है (अर्थात् वे महानात्माएँ जिनमें आकाश, धरती, जल, वायु और अग्नि के निहित गुण क्रमशः निवृत्ति, धैर्य, निर्मलता, समानता और यथालाभ सन्तोष, प्राप्त हैं, उन्हें प्रभु-शरण में सत्कार लब्ध होता है)। सन्तों को ही परमेश्वर के द्वार पर मुक्ति मिलती है (अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकारादि पाँचों वासनाओं पर विजय पानेवाला पावन जीव ही मुक्ति पाता है)। सन्त-महात्माओं का ध्यान निरन्तर उस परम गुरु (परमात्मा) में स्थिर रहता है। ऐसे में भी यदि उनमें स्वाभिमान के कारण भटक कर कोई यह कहे कि वह कर्त्ता (परमात्मा) के कार्यों का विचार कर सकेगा, तो यह कभी सम्भव नहीं हो सकता; क्योंकि कर्त्ता की रचना का तो कोई शुमार ही नहीं, वह अनन्त है।

---

* [इस पद में 'पंच' शब्द की महिमा दी गयी है। पंच चुने हुए या मुख्तिआर को भी कहते हैं, पाँच की संख्या को भी। चुने हुए के रूप में करोड़ों-अरबों की जन-संख्या में से परमात्मा को प्यार करनेवाले कुछ जीव अर्थात् 'संत-जन' इसका अर्थ ठहरता है, जबकि पाँच की संख्या का भी बड़ा मधुर श्लेष साथ-साथ चलता है।]

यदि कोई यह निष्कर्ष निकाल ले कि धरती का अन्त बैल के सहारे रहना ही है, तो क्या वह धरती-सम्बन्धी विचार का अन्त होगा? प्रश्न उठेगा कि वह बैल क्या है? गुरुजी कहते हैं कि वास्तव में वह बैल धर्म है, जिसकी जननी दया है, अर्थात् धरती बैल के सहारे नहीं, दया के पुत्र धर्म के सहारे स्थिर है। और यह धर्म भी संतोष रूपी सूत्र से बँधा है। यदि कोई यह कहे कि बैल के सहारे पृथ्वी है और उस पर जगत की रचना हुई है, यही रचना का अन्त है। इतना ही मानकर यदि कोई प्रवीण (सचिआर) बनने लगे, तो उससे पूछना होगा कि उक्त बैल पर कितना बोझ होगा! तार्किक का उत्तर धरती के बोझ का संकेत करेगा (वह कहेगा कि बैल पर धरती का बोझ है); इस पर भी वह अपनी ही बात में फँसता है, क्योंकि ऐसे तो कई धरतियों का अस्तित्व प्रमाणित होता है। इस धरती के नीचे यदि बैल है, तो उसके खड़ा होने को नीचे और धरती होगी, और उससे आगे उक्त धरती को सहारा देने को पुनः कोई बैल और फिर धरती होगी। तात्पर्य यह कि इस प्रकार तो अनेक बैल और अनेक धरतियाँ सिद्ध होती हैं। यदि किसी धरती को अन्तिम मान भी लो, तो प्रश्न होगा कि उसके नीचे बैल को सहारा देनेवाली शक्ति कौन-सी है? (अन्त में यदि यही कहना पड़े कि वह धरती परमेश्वर के सहारे खड़ी है, तो अभी इस अपनी धरती को ही परमात्मा का कौतुक मान लो।)

(परमात्मा की सृष्टि में) अनेक जातियों और रंगों के जीव विद्यमान हैं। सबके मस्तक पर ईश्वराज्ञा (बुड़ी कलाम) से कर्मालेख लिखे गये हैं। यदि कोई इस रहस्य को जानने का दावा भी करे, (तो हम पूछेंगे) कि वह कर्मालेख कितना लिखा हुआ है—उसमें कितना बल (ताणु) है, कितना रूप-सौंदर्य है तथा कितनी उसकी देन है? कौन है, जो इस समूचे तथ्य का सही मूल्यांकन कर सके? (यदि उनसे पूछा जाय, तो गुरुजी कहते हैं, कि) सृष्टि का सम्पूर्ण प्रसार परमात्मा के एक शब्द (अर्थात् एक से अनेक होने के संकल्प) से हुआ है।

उसीसे सृष्टि-रचना की अनेक धाराएँ फैली हैं (संकल्प-मात्र से वह असंख्य पहलुओं में बँट गया प्रतीत होता है।) उस परमात्मा की प्रकृति को परखने का सामर्थ्य मुझमें नहीं; मेरी क्या हस्ती है कि मैं उस अनन्त शक्तिशाली पर विचार भी कर सकूँ? मैं (इतना तुच्छ हूँ कि) एक बार भी उस प्रभु पर समर्पित होने योग्य नहीं हूँ। हे निराकार, तुम्हें रिझा सकनेवाले कार्य ही भले हैं। (केवल) तुम (ही) सदैव स्थिर हो।

❋ १७ ❋

असंख जप असंख भाउ।
असंख पूजा असंख तप ताउ॥
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ।
असंख जोग मनि रहहि उदास॥
असंख भगत गुण गिआन वीचार।
असंख सती असंख दातार॥
असंख सूर मुह भख सार।
असंख मोनि लिव लाइ तार॥
कुदरति कवण कहा वीचारु।
वारिआ न जावा एक वार॥
जो तुधु भावै साई भली कार।
तू सदा सलामति निरंकार॥

उस परमात्मा के विभिन्न नामों से किए जानेवाले जाप अगणित हैं। जाप में अपेक्षित भाव-भक्ति भी अगणित है। पूजा के साधन

असंख्य हैं और साधनार्थ उठाए गये कष्टों की भी कोई सीमा नहीं। परमात्मा की स्तुति में लिखे गये ग्रंथों की कोई निश्चित संख्या नहीं और उन ग्रंथों अर्थात् वेद-शास्त्रों का पाठ करनेवाले कण्ठों की गणना भी सम्भव नहीं है। ऐसे योगियों की भी कोई गिनती नहीं, जो तरह-तरह के योग कमाते हैं और इस संसार से विरत बने रहते हैं। भक्तों की भी क्या कमी है, वे सब अपने-अपने विवेक से परमात्मा का गुणगान कर रहे हैं। सत्य के रक्षकों और दानियों की भी कोई गिनती नहीं (हरिश्चन्द्र और दधीची जैसे सत्यव्रती और आत्मदानी भी बहुत हुए हैं)। बड़े-बड़े शूरवीर भी हैं, जो मुँह पर लोहे की चोट खाते हैं (अर्थात् पीठ नहीं दिखाते) और मौन-व्रतियों की भी कोई गिनती नहीं, जो चुपचाप परमात्मा के ध्यान में लीन रहते हैं, समाधिस्थ होते हैं। किन्तु फिर भी परमात्मा की प्रकृति को परखने का सामर्थ्य किसी में नहीं; उस अनन्त शक्तिशाली पर विचार भी नहीं किया जा सकता। मैं (इतना तुच्छ हूँ कि) एक बार भी उस प्रभु पर समर्पित होने योग्य नहीं हूँ। हे निराकार, तुम्हें रिझा सकनेवाले कार्य ही भले हैं। (केवल) तुम (ही) सदैव स्थिर हो।

❋ १८ ❋

असंख मूरख अंध घोर।
असंख चोर हरामखोर॥
असंख अमर करि जाहि जोर।
असंख गलवढ हतिआ कमाहि॥
असंख पापी पापु करि जाहि।
असंख कूड़िआर कूड़े फिराहि॥

असंख मलेछ मलु भखि खाहि।

असंख निंदक सिरि करहि भारु॥

नानकु नीचु कहै वीचारु।

वारिआ न जावा एक वार॥

जो तुधु भावै साई भली कार।

तू सदा सलामति निरंकार॥

(पिछले पद में सतोगुणी सृष्टि की बात थी, अब तमोगुणी भावनावाले लोगों की चर्चा है) परमात्मा की सृष्टि में असंख्य मूढ़-अज्ञानी बसते हैं, भयानक क्रियाओं में लीन रहनेवालों की भी कोई गिनती नहीं। चोरों हरामखोरों (कर्त्तव्य-च्युत) की क्या कमी है, अत्याचार का सिक्का चलानेवाले और दूसरों का गला काटकर हत्या कर देनेवालों की भी क्या गिनती है। संसार में अनेक प्रकार के पाप करनेवाले असंख्य प्राणी हैं, झूठ का प्रसार करनेवाले मिथ्यावादियों की भी विपुल संख्या है; ऐसे दुष्ट मलेच्छ भी असंख्य हैं जो अभक्ष्य भक्षण करते हैं। निंदकों की बड़ी संख्या है, जो बिना प्रयोजन दूसरों की निंदा करके अपने सिर पाप का बोझ ढोते हैं। गुरुजी विनम्रतावश अपने को 'नीच' सम्बोधन करते हुए कहते हैं कि नीच नानक के खूब विचार-पूर्वक ही ये बातें कही हैं (१७ वें पद में सात्विकी वृत्ति के प्राणियों की चर्चा करके इस १८ वें पद में वे राजसी तथा तामसी वृत्ति के लोगों की बात इसलिए कहते हैं कि जन-साधारण ग्राह्य-अग्राह्य को पहचान सकें और जान लें कि) मैं (इतना तुच्छ हूँ कि) एक बार भी उस प्रभु पर समर्पित होने योग्य नहीं हूँ। हे निराकार, तुम्हें रिझा सकनेवाले कार्य ही भले हैं। (केवल) तुम (ही) सदैव स्थिर हो।

✻ १९ ✻

असंख नाव असंख थाव।
अगंम अगंम असंख लोअ॥
असंख कहहि सिरि भारु होइ।
अखरी नामु अखरी सालाह॥
अखरी गिआनु गीत गुण गाह।
अखरी लिखणु बोलणु बाणि॥
अखरा सिरि संजोगु वखाणि।
जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि॥
जिव फुरमाए तिव तिव पाहि।
जेता कीता तेता नाउ॥
विणु नावै नाही को थाउ।
कुदरति कवण कहा वीचारु॥
वारिआ न जावा एक वार।
जो तुधु भावै साई भली कार॥
तू सदा सलामति निरंकार॥

उस अकालपुरुष परमात्मा के नाम और स्थान (तीर्थ–मन्दिर, स्वर्गादि वे जगहें, जहाँ हम परमात्मा का निवास मानते हैं) भी असंख्य हैं। इन्द्रलोक, देवलोक, बैकुंठलोक, आदि अगम्य लोकों की भी गिनती नहीं। फिर भी अक्षरों (शब्दों) के माध्यम से ही प्रभु–नाम जाना जाता है और अक्षरों से ही उसकी स्तुति की जाती है। अक्षरों द्वारा ही ज्ञान

गीतों की सहायता से उस (प्रभु) के गुणों का गायन किया जा सकता है। अक्षरों के माध्यम से ही लिखना सम्भव है। ललाट पर का भाग्यलेख भी अक्षरों से ही अंकित है। जिसने यह हिसाब (कर्मालेख) लिखा है, उसके सिर पर कोई हिसाब लिखनेवाला नहीं (वह स्वयं निरंकुश है, अन्य सब पर कर्मों का अंकुश रखता है)। परमात्मा जीव के कर्मों के अनुसार जैसे-जैसे हुकुम करता है, वैसे-वैसे उसका हिसाब लिखा जाता है। परमात्मा की समूची सृष्टि नाम-रूप ही है, कोई स्थान नाम से वंचित नहीं। इसलिए परमात्मा की प्रकृति को परखने का सामर्थ्य किसी में नहीं, उस अनन्त शक्तिशाली पर विचार भी नहीं किया जा सकता। परमात्मा के एक रोम का वर्णन भी सम्भव नहीं। जो उसे रुचिकर है, वही उत्तम है। वह सदा-सदा के लिए विद्यमान है, मायातीत है और अनश्वर है।

❋ २० ❋

भरीऐ हथु पैरु तनु देह।
पाणी धोतै उतरसु खेह॥
मूत पलीती कपड़ु होइ।
दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ॥
भरीऐ मति पापा कै संगि।
ओहु धोपै नावै कै रंगि॥
पुंनी पापी आखणु नाहि।
करि करि करणा लिखि लै जाहु॥
आपे बीजि आपे ही खाहु।
नानक हुकमी आवहु जाहु॥

(अब प्रश्न उठा कि नाम ही क्योंकर मल-निवारक है ? गुरु जी कहते हैं), यदि मनुष्य के हाथ-पैर और शरीर में धूल की मलिनता होती है, तो उसके निवारण के लिए शरीर को पानी से धो लेना उचित है। अर्थात् शरीर पर की धूल पानी से धुल जाती है। यदि कपड़ा मूत्रादि के स्पर्श से मलिन हो जाय, तो उसे साबुन लगाकर धोया जा सकता है; अर्थात् मलिन कपड़े को साफ करने का साधन साबुन है, किन्तु यदि बुद्धि या विवेक पापों के कारण मलिन हो, तो उसके शुद्धिकरण का एकमात्र उपाय नाम का प्रेमपूर्वक जाप (रंग) ही है। तात्पर्य यह कि बुद्धि की मलिनता नाम से ही धुल सकती है—(सांसारिक पानी और साबुन आदि यहाँ व्यर्थ हैं)। पुण्यात्मा एवं पापात्मा केवल तथाकथित ही नहीं है। जो कुछ प्राणी अपने हाथों (स्वयं) करता है, उसका समूचा हिसाब-किताब धर्मराज लिख लेता है। तात्पर्य यह कि प्राणी के पाप और पुण्य उसके अपने ही उद्यम का फल हैं। इसलिए अपना बीजा हुआ कर्मफल आप ही (खाना) भोगना पड़ता है। गुरुजी कहते हैं कि संसार में जीव का आवागमन उस अकालपुरुष की आज्ञा से ही होता है। (परमात्मा की इस आज्ञा का मूलाधार जीव के अच्छे-बुरे कर्म होते हैं)।

※ २१ ※

तीरथु तपु दइआ दतु दानु।
जे को पावै तिल का मानु॥
सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ।
अंतरगति तीरथि मलि नाउ॥
सभि गुण तेरे मै नाही कोइ।
विणु गुण कीते भगति न होइ॥

सुअसति आथि बाणी बरमाउ।
सति सुहाणु सदा मनि चाउ॥
कवणु सु वेला वखतु कवणु।
कवण थिति कवणु वारु॥
कवणि सि रुती माहु कवणु।
जितु होआ आकारु॥
वेल न पाईआ पंडती।
जि होवै लेखु पुराणु॥
वखतु न पाइओ कादीआ।
जि लिखनि लेखु कुराणु॥
थिति वारु ना जोगी जाणै।
रुति माहु ना कोई॥
जा करता सिरठी कउ साजे।
आपे जाणै सोई॥
किव करि आखा किव सालाही।
किउ वरनी किव जाणा॥
नानक आखणि सभु को आखै।
इकदू इकु सिआणा॥
वडा साहिबु वडी नाई।
कीता जा का होवै॥

नानक जे को आपौ जाणै।
अगै गइआ न सोहै॥

तपस्या, तीर्थयात्रा, दान देकर और दयालु बनने पर यदि किसी को सम्मान प्राप्त होता है तो वह केवल तिल भर है। (तात्पर्य यह है कि तीर्थ-तपादि से उन्हें स्वर्गादि फल मिलता है और पुण्य के क्षीण होने पर उन्हें पुन: मर्त्यलोक में आना होता है।) केवल वे ही जीव परमात्मा से अभेद ज्ञान का लाभ प्राप्त करते हैं, जो सही अर्थों में नाम का श्रवण, मनन और निदिध्यासन (मनि कीता) करते हैं। वे अन्तर्मुखी होकर नाम के सच्चे तीर्थ-सरोवर में नहाते तथा परम निर्मल होते हैं। (यह पावनता, परम निर्मलता परमात्मा से अभेद होने पर आती है—इस अभेद का साधन क्या है।) इसका साधन है परमात्मा के सम्मुख पूर्ण समर्पण, तू सर्वगुणसम्पन्न है, मुझमें कोई गुण नहीं। (यह समर्पण या विनम्रता भी एक गुण है) इस गुण को पैदा किए बिना भक्ति सम्भव नहीं। कल्याण-स्वरूप सविशेष (आथि) ईश्वर ने एक से अनेक होने के संकल्प रूप वाणी का उच्चारण किया, तभी ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि (बरमाऊ) का समूचा प्रपंच अस्तित्व में आया। वास्तव में स्वयं परमात्मा सदैव सत्य (सति), चेतन (सुहाणु) तथा आनन्द (मनिचाऊ) ही है; उसमें मूलत: कोई परिवर्तन नहीं आता। परमात्मा ने यह प्रपंच कब रचा, किसी को मालूम नहीं। विश्व के समस्त आकारों को किस समय, किस दिन, किस तिथि, किस वार, किस ऋतु या किस महीने रूपायित किया गया था, कौन जानता है! सृष्टि-निर्माण के समय को बड़े-बड़े पण्डित-विद्वान लोग नहीं जान पाए। यदि उन्होंने जाना होता तो निश्चय ही पुराणादि ग्रंथों में लिखा होता। मुस्लिम क़ाज़ियों-मुल्लाओं को भी वह ज्ञात नहीं हो सका, अन्यथा वे क़ुरआन आदि में लिख देते। बड़े-बड़े योगी सृष्टि-आरम्भ की तिथि, वार, ऋतु या मास नहीं जान पाए। (यह सब मानवीय पहुँच से बाहर का ज्ञान है) जिस रचयिता ने सृष्टि को

बनाया है, वह स्वयं ही इस रहस्य को जानता है (और कोई नहीं जान सकता)। उस प्रभु के सृजन, पोषण और संहार के रहस्यों को क्योंकर कहा जा सकता है? क्या उपमा (सालाही) दी जा सकती है? कौन उसका वर्णन कर सकता है? नानक कहते हैं कि सब जन एक से एक ज्ञानवान् (सियाना) बनकर यह कथा-प्रसंग कहते हैं, किन्तु यथार्थ को जान लेने में सब अक्षम हैं। अत: (यही कहना चाहिए कि) उस महान् परमात्मा के ही किए यह महान् कार्य हो सका होगा। उसी के नाम को सब श्रेय प्राप्त है। यदि कोई अपने को जाने अर्थात् अपनी जानकारी का झूठा गुमान करे, वह निश्चय ही आगे गया सुशोभित नहीं होगा। तात्पर्य यह कि उसे परलोक में कोई शोभा नहीं मिल सकती। (वह पतनोन्मुखी होगा)।

❋ २२ ❋

पाताला पाताल लख आगासा आगास।
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात॥
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु।
लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु।
नानक वडा आखीऐ आपे जाणै आपु॥

(प्रभु की रचना का परिमाण खोजना भूल है। इसी संदर्भ में गुरु जी पुन: कहते हैं कि) पातालों-आकाशों की गणना सात-सात तक ही सीमित नहीं, धरती के नीचे लाखों पाताल और आकाश के ऊपर लाखों आकाश मौजूद हैं। वेदों में भी यह बात स्पष्ट है कि सृष्टि-रचना का रहस्य (खोजनेवाले) खोजकर थक गये हैं, किन्तु (उन्हें मिला नहीं)। कतेब (मुसलमानों-ईसाइयों के धर्मग्रंथ) में सृष्टि के अठारह हजार अंग हैं, जिन सबका आरम्भ प्रभु से ही हुआ है। सृष्टि

का हिसाब असम्भव है, प्राणी के लिए यह सम्भव नहीं—हिसाब करने और रहस्य जानने का प्रयास करनेवाला स्वयं मिट जाता है (सृष्टि का कोई अन्त उसके हाथ नहीं लगता)। अतः (गुरु) नानक कहते हैं कि उस परमात्मा (सृष्टि-रचयिता) का यशोगान करो, अपने रहस्यों को वह आप ही जानता है।

❋ २३ ❋

सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ।
नदीआ अतै वाह पवहि समुंदि न जाणीअहि।
समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु।
कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसु मनहु न वीसरहि॥

(परमात्मा का यशोगान करनेवाले भी उसका अन्त तो नहीं पा सकते, किन्तु उस परम में लीन होकर उसके अभेदज्ञान को तो पा ही लेते हैं) उस गुणवान् प्रियतम प्रभु का गुण गाकर भी भक्तजन उसके परिमाण को नहीं पा सकते; वे उसमें लीन हो जाते हैं। उन भक्तों की स्थिति उन नदी-नालों जैसी होती है, जो समुद्र से मिलकर अपनी अलग सत्ता तो खो देते हैं, किन्तु समुद्र के विस्तार की जानकारी प्राप्त नहीं कर सकते। सच तो यह है कि समुद्रों के स्वामी सम्राट्, जिनके पास पर्वतों सरीखी ढेरों दौलत हो, वे उस च्यूँटी के बराबर भी नहीं, जिसे परमात्मा ने अविस्मृत नहीं किया होता।

❋ २४ ❋

अंतु न सिफती कहणि न अंतु।
अंतु न करणै देणि न अंतु॥

अंतु न वेखणि सुणणि न अंतु।
अंतु न जापै किआ मनि मंतु॥
अंतु न जापै कीता आकारु।
अंतु न जापै पारावारु॥
अंत कारणि केते बिललाहि।
ता के अंत न पाए जाहि॥
एहु अंतु न जाणै कोइ।
बहुता कहीऐ बहुता होइ॥
वडा साहिबु ऊचा थाउ।
ऊचे उपरि ऊचा नाउ॥
एवडु ऊचा होवै कोइ।
तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ॥
जेवडु आपि जाणै आपि आपि।
नानक नदरी करमी दाति॥

(उपर्युक्त तथ्य को और अधिक स्पष्ट करते हुए गुरुजी कहते हैं कि) परमात्मा के गुणों का कोई अन्त नहीं, असंख्य गुण कहने पर भी परमात्मा के गुणों की समाप्ति नहीं हो जाती। प्रभु के कौतुकों का कोई अन्त नहीं, उसकी दी हुई सुविधाओं की भी कोई सीमा नहीं। देखने या सुनने में आनेवाले पदार्थों का कोई हिसाब ही नहीं। ईश्वर क्या करना चाहता है, या भी कभी नहीं जाना जा सकता। समूचे दृश्यमान् जगत की भी कोई अन्तिम सीमा दीख नहीं पड़ती। सृष्टि का आर-पार भी

नहीं सूझता। परमात्मा का अन्त पाने के लिए कितने ही प्राणी विकल हैं, किन्तु वे असमर्थ और असफल रहे हैं। वास्तव में ईश्वर का अन्त कोई नहीं पा सकता। जितना बड़प्पन हम ईश्वर के नाम के साथ जोड़ देंगे, वह उससे और भी बड़ा प्रतीत होने लगता है। बड़प्पन ही उसका मूल गुण है, उसका वास भी ऊँचा है और उसका नाम तो उससे भी महान् है। इतने ऊँचे को वही जान सकता है, जो उसके बराबर ऊँचा उठे। (अर्थात् जो प्राणी उससे अभेद प्राप्त करके उसी का रूप हो जाय, वही उसके रहस्यों का जानकार हो सकता है) सच तो यह है कि अपने बड़प्पन को वह प्रभु स्वयं ही जानता है। हे नानक! प्रभु-कृपादृष्टि और अनुकम्पा से ही सब कुछ प्राप्त होता है।

❊ २५ ❊

बहुता करमु लिखिआ ना जाइ।
वडा दाता तिलु न तमाइ॥
केते मंगहि जोध अपार।
केतिआ गणत नही वीचारु॥
केते खपि तुटहि वेकार॥
केते लै लै मुकरु पाहि।
केते मूरख खाही खाहि॥
केतिआ दूख भूख सद मार।
एहि भि दाति तेरी दातार॥
बंदिखलासी भाणै होइ।
होरु आखि न सकै कोइ॥

जे को खाइकु आखणि पाइ।
ओहु जाणै जेतीआ मुहि खाइ॥
आपे जाणै आपे देइ।
आखहि सि भि केई केइ॥
जिसनो बखसे सिफति सालाह।
नानक पातिसाही पातिसाहु॥

(इस पद में भी गुरुजी ने बेअंत परमात्मा की असीमता को ही भिन्न पहलू से चित्रित किया है) ईश्वर की दया-दृष्टि ही इतनी अधिक है कि उसका अन्त नहीं पाया जा सकता। तात्पर्य यह कि ईश्वर की दया का उल्लेख ही सम्भव नहीं। वह सर्वप्रदाता है, उसे तिल भर भी लोभ नहीं; अर्थात् वह निस्स्वार्थ दानी है, बदले में दान-पात्र से वह कुछ नहीं चाहता। कितने ही युद्धवीर उसके आगे हाथ पसारते हैं, माँगनेवाले असंख्य हैं, उन पर विचार करना भी सम्भव नहीं। ऐसे विकृत-चित्त लोग भी अगणित हैं जो प्रभु की बख्शीश को पापों में लगाते और बरबाद होते हैं। कितने ही लोग परमात्मा के प्रदेय को पाकर भी मुकर जाते हैं अर्थात् वे परमात्मा की देन को अपनी अर्जित सम्पत्ति समझने लगते हैं। अनेक मूर्ख प्रभु की देन पर गुलछर्रे उड़ाते हैं (बदले में उसका आभार स्वीकार नहीं करते), ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जो सदैव दुःख और भूख की चोटें सहते रहते हैं। किन्तु हे परमात्मा, ये (दुःख-भूखादि) भी तुम्हारी ही देन हैं, (इसे भी शिरोधार्य करना ही पड़ता है); बंधन या छुटकारा (माया का माया से) तुम्हारी इच्छा पर ही आश्रित है। इससे उलट कोई कुछ नहीं कह सकता, कोई कुछ नहीं कर सकता। यदि कोई मूर्ख रहस्योद्घाटन करने का प्रयास भी करता है, तो बस वही जानता है कि उसके मुँह पर कितने जूते

पड़ते हैं (उस पर असंख्य चोटें पहुँचती हैं)। सच तो यह है कि परमात्मा स्वयं जीवों की जरूरतों को पहचानता और औचित्यानुसार दया-दृष्टि करता है। ऐसे यथार्थ को पहचान लेनेवाले लोग भी अगणित हैं। स्थापना यही है कि स्वयं प्रभु जिसे अपने नाम-जाप का सामर्थ्य देता है, गुरुजी कहते हैं कि हे नानक! उसे सृष्टि के बादशाहों का भी बादशाह मान लिया जाना चाहिए।

※ २६ ※

अमुल गुण अमुल वापार।
अमुल वापारीए अमुल भंडार॥
अमुल आवहि अमुल लै जाहि।
अमुल भाइ अमुला समाहि॥
अमुलु धरमु अमुलु दीबाणु।
अमुलु तुलु अमुलु परवाणु॥
अमुलु बखसीस अमुलु नीसाणु।
अमुलु करमु अमुलु फुरमाणु॥
अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ।
आखि आखि रहे लिव लाइ॥
आखहि वेद पाठ पुराण।
आखहि पड़े करहि वखिआण॥
आखहि बरमे आखहि इंद।
आखहि गोपी तै गोविंद॥

आखहि ईसर आखहि सिध।
आखहि केते कीते बुध॥
आखहि दानव आखहि देव।
आखहि सुरि नर मुनि जन सेव॥
केते आखहि आखणि पाहि।
केते कहि कहि उठि उठि जाहि॥
एते कीते होरि करेहि।
ता आखि न सकहि केई केइ॥
जेवडु भावै तेवडु होइ।
नानक जाणै साचा सोइ॥
जे को आखै बोलुविगाड़ु।
ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारु॥

(यहाँ सांसारिक उपलब्धियों के उपरांत सामाजिक और आधिभौतिक प्रदेय की चर्चा है) परमात्मा के गुण अमूल्य हैं, इन गुणों पर आचरण और भी अमूल्य है। (गुरु नानकदेवजी की एक प्रसिद्ध पंक्ति वाणी में आगे आती है—'सचहु ओरै सभु कोइ, ऊपर सच आचार।' अर्थात् सत्य महान् है किन्तु सत्याचरण महान्तर है)। परमात्मा के गुणों का व्यापार करनेवाले भी अमूल्य हैं ही। परमात्मा से प्यार करने वाले तथा उसी में लीन हुए जीव अमूल्य हैं। ईश्वर का कानून भी अनमोल है, और उसका दरबार, जहाँ वह कानून लागू होता है, अमूल्यतर है। वे तराजू और बट्टे अमूल्य हैं, (जिनसे गुणों का कोष तोला जा सकता है)। प्रभु की देन तथा उसकी स्वीकृति, सब अनमोल है।

परमात्मा की बख्शीश और उसका हुकम अमूल्य है। परमात्मा का प्रत्येक पहलू अमूल्य है, उसका वर्णन सम्भव नहीं (कि उसका क्या और कितना मोल होगा)। अनेक जीव परमात्मा के अमूल्यन का गान करते-करते उसी में लीन हो गये हैं। कुछ 'बुद्धिमान लोग' वेदों और पुराणों के माध्यम से उसका विश्लेषण करते हैं। अनेक विद्वान उस परम के वर्णन का प्रयास करते एवं दूसरों का पथ-प्रदर्शन करते हैं। परमात्मा का वर्णन असंख्य ब्रह्मा तथा इन्द्र भी करें, गोपियाँ तथा कृष्ण भी मिलकर उसकी चर्चा करें, स्वयं शिवजी तथा सिद्ध-पुरुष भी उसकी पुनर्जांच करके देखें, (किन्तु उसका मूल्य-निर्धारित नहीं किया जा सकता)। परमात्मा के द्वारा बनाए अनेक बुद्ध, दैत्य और देवता, सब उसका गुण गाते हैं। भले नैतिक लोग तथा मुनि-जन भी उसके अस्तित्व का वर्णन कर रहे हैं। अनेक जीव उसका वर्णन करते और अनेक करने का यत्न करते हैं। असंख्य लोग उसका गुणगान करके जगत से उठ जाते हैं, किन्तु यदि वह परमात्मा पूर्व-रचित सृष्टि का विस्तार द्विगुणित कर दे, तो भी कोई उसका सही वर्णन करने के योग्य नहीं हो सकेगा। परमात्मा का बड़प्पन उसकी इच्छा से बढ़ता-घटता है; गुरुजी कहते हैं कि हे नानक! वह परमात्मा अपने बड़प्पन का वास्तविक पारखी स्वयं ही है। यदि कोई गर्वीला व्यक्ति यह दावा करे भी कि वह परमात्मा का परिमाण जानता है तो उसे मूर्खों का भी मूर्ख (महामूर्ख) गिना जाना चाहिए।

❋ २७ ❋

सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ॥
वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे ॥
केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे ॥
गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे ॥

गावहि चितुगुपतु लिखि जाणहि
लिखि लिखि धरम वीचारे॥
गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे॥
गावहि इंद इदासणि बैठे देवतिआ दरि नाले॥
गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे॥
गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे॥
गावनि पंडित पड़नि रखीसर जुगु जुगु वेदा नाले॥
गावहि मोहणीआ मनु मोहनि सुरगा मछ पइआले॥
गावनि रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले॥
गावहि जोध महाबल सूरा गावहि खाणी चारे॥
गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे॥
सेई तुधुनो गावहि जो तुधु भावनि
रते तेरे भगत रसाले॥
होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि
नानकु किआ वीचारे॥
सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई॥
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई॥
रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई॥
करि करि वेखै कीता आपणा जिव तिस दी वडिआई॥

जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई ॥
सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई ॥

(अब गुरुजी परमात्मा की महानता का दिग्दर्शन करवाने के लिए सृष्टि की सभी शक्तियों को उसके दरबार में कोर्निश करती हुई दिखाते हैं) (हे परमात्मा) वह कौन-सा घर-दर है, जहाँ बैठकर तुम समस्त (जीवों की) सम्भाल करते हो? (वहाँ) अनेक वादनों का स्वर मुखरित है, असंख्य वादक भी वहाँ अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। कितने ही राग अपनी परियों (रागिनियों) सहित वहाँ गाये जा रहे हैं, कितने ही गायक उन्हें गा रहे हैं। पवन, पानी, अग्नि आदि सृष्टि के मूल तत्त्व एवं धर्मराज स्वयं, सब तुम्हारे दरबार में तुम्हारा यश गाते हैं। जीवों के कर्मों का आलेख रखनेवाला चित्रगुप्त भी (हे ईश्वर) तेरा ही गुणगान करता है—उसी के कर्मालेख के अनुसार धर्मराज जीवों के (पाप-पुण्य का) विचार करता है। शिवजी, ब्रह्मा तथा देवी (भगवती) सब तुम्हारे द्वारा निर्मित हैं, तुम्हारा नाम गा रहे हैं। कई इन्द्र अपनी देव प्रजा सहित तुम्हारा यशोगान करते हैं। सिद्ध अपनी समाधियों और साधु भगवद्कथा में तुम्हें ही खोज रहे हैं। यती, सती, संतोषी, सब प्रकार के जीव तुम्हारा विरद गाते हैं, बड़े-बड़े शूरवीर भी तुम्हारा ध्यान लगाते हैं। विद्वज्जन, ऋषि-मुनि आदि वेदाध्ययन करते हुए भी तुम्हारा ही गुणगान करते हैं। स्वर्ग, इह एवं पाताललोकों की मोहिनी सुन्दरियाँ तुम्हारे ही नाम का गान कर रही हैं। सृष्टि के अड़सठ तीर्थ एवं चौदह रत्न, सब तेरे अपने बनाए हुए हैं और वे सब तुम्हारा ही गुण गाते हैं। बली, शूर और योद्धा, सब तुम्हारा नाम लेते हैं, चारों सृष्टियाँ (अंडज, जेरज, स्वेदज तथा उद्भुज) तुम्हारा यशोगान करती हैं। समूचा ब्रह्माण्ड, उसके खण्ड-मण्डल, सब तेरी रचना है, तेरा नाम पुकारते हैं। तेरा नाम-जाप वास्तव में वे ही कर सकते हैं, जो तुम्हें स्वीकार हैं; वे तुम्हारे नाम-रस के मतवाले हैं, तुम्हारे भक्त हैं। और अनेक ऐसे

गुणगायक भी होंगे, जो इस समय मेरे ध्यान में नहीं आ रहे। गुरु नानकजी कहते हैं कि उनका कहाँ तक विचार किया जाय? वह परमपिता परमात्मा ही सत्य है, उसकी विरद भी सच है। उसका अस्तित्व है, वह भविष्य में भी रहेगा। सृष्टि का रचयिता वह परमात्मा न कभी मरता है, न जन्म लेता है। परमात्मा ने अनेक रंगों, प्रकारों एवं वस्तुओं की रचना की है, माया भी उसी ने बनाई है। वह जीवों का निर्माण करके स्वयं ही उनको संरक्षण भी दे रहा है, यही बड़े के अनुकूल बड़प्पन है। वह वही करता है, जो उसे रुचता है। (कोई उसका प्रतिद्वन्द्वी नहीं)। वह सबका शासक है, शासकों का भी शासक है, गुरु नानकदेव कहते हैं कि उसकी आशंसा में ही रहे बनता है, (जीव उसे कदापि चुनौती नहीं दे सकता)।

* २८ *

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति॥
खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति।
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु।
आदेसु तिसै आदेसु।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥

(हे योगी, योग की यथार्थ महत्ता पाने के लिए तुम) सन्तोष की

* [टिप्पणी : आगामी चार पद योगियों को सम्बोधन किए गये हैं। गुरुजी योगियों के चिह्नों की यथार्थता बताते हुए धर्म के सही स्वरूप को चित्रित करना चाहते हैं। यह सही है कि इन पदों में योगियों को सम्बोधित किया गया है, उनके चक्र-चिह्नों की चर्चा भी हुई है, किन्तु उपदेश सबके लिए समान है। बताया गया है कि चिह्नों में भ्रमित होने से मोक्ष-पथ नहीं मिलता; चिह्न तो प्रतीक हैं, उनके यथार्थ को समझो, वही मानव का मूल धर्म है।]

मुद्राएँ धारण करो (अर्थात् कान चिरवाकर काँच की मुद्राएँ योग का बाहरी चिह्न है, वास्तविकता जीवन-संतोष में है, उसी को मुद्रा के नाते धारण करो), श्रम का खप्पर लो (अर्थात् निष्कर्म जीवन बिताने की अपेक्षा कर्मशील जीवन जिओ), प्रभु-ध्यान की विभूति लगाओ (अर्थात् शरीर पर राख मलने की अपेक्षा परमात्मा में अनुरक्ति पैदा करो), मृत्यु के नित्य स्मरण को खिंथा (कफ़नी) बनाओ, शरीर को निर्मल रखो (ब्रह्मचर्य का पालन करो) और हाथ में निश्चय का दण्ड धारण करो (तात्पर्य यह कि बाहरी खिंथा, दण्ड आदि की अपेक्षा मृत्यु की स्मृति, शारीरिक ब्रह्मचर्य तथा दृढ़ निश्चय को अंगीकार करो—उसी में योग का यथार्थ तत्त्व है)। समूची मानवीय चेतना को अपने समान मान लेने में ही तुम्हारा आईपंथ (योगियों का एक प्रसिद्ध सम्प्रदाय) का प्रतिनिधित्व है। इसी में मन की जीत है और मन की जीत में संसार की विजय मौजूद है। (हे योगी!) तुम्हें उसी मालिक के सम्मुख प्रणमन करना चाहिए, जो प्रणाम का (आदेसु) सही अधिकारी है। वह परमात्मा आदि है, अनादि है, अनन्त है, पावन-निर्मल है और युग-युग से वह एक ही रूप में स्थित है (वह अपरिवर्तनीय है)।

❋ २९ ❋

भुगति गिआनु दइआ भंडारणि घटि घटि वाजहि नाद।
आपि नाथु नाथी सभ जा की रिधि सिधि अवरा साद।
संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि लेखे आवहि भाग।
आदेसु तिसै आदेसु।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥

(अब गुरुजी योगियों के भंडारे की चर्चा करते हैं और कहते हैं कि भण्डारी भण्डारे की रसद लाने-बाँटने वाले सब लोग अपने-अपने स्वार्थ में लीन होते हैं। परमात्मा के भण्डारे की ओर देखो, वहीं भोजन

पाओ। यदि तुम अन्तर्मुखी होकर परमात्मा की ओर वृत्ति लगा लो तो वहाँ तुम्हें) प्रभु-ज्ञान का भोजन मिलेगा। इस भोजन को परोसनेवाली भण्डारिन परमात्मा की दया है और भोजन के समय गीत-संगीत के तौर पर घट-घट में नाद ध्वनित होता है। (यह नाद-श्रवण की शक्ति नाम के परम भक्त को ही लब्ध होती है। उस भण्डार का (नाथ) स्वामी वह परमात्मा स्वयं है, उसने समूची दुनिया नाथी (नथी हुई) है। इस स्थिति में रिद्धि-सिद्धि का आस्वादन भुलावा मात्र लगता है। (तुम्हारे द्वारा रिद्धियों-सिद्धियों की खोज मोह-माया का रूप है, परमात्मा द्वारा प्रदत्त सिद्धि जीवन का स्वाद बदल देती है।) संसार का काम-धंधा संयोग-वियोग की संवेदनाओं से चलता है (प्रभु-प्रेम ही संयोग है, माया-प्रवृत्ति ही वियोग है); एक से जीवात्मा-परमात्मा के बीच सम्बन्ध बढ़ते हैं, दूसरे से वे सम्बन्ध टूट जाते हैं। परमात्मा के उक्त भण्डार से कर्मानुसार सब जीवों को उनका उपयुक्त प्राप्य मिलता है। (अतः हे योगी!) तुम्हें उसी मालिक के सम्मुख प्रणमन करना चाहिए, जो प्रणाम का (आदेस का) सही अधिकारी है। वह परमात्मा आदि है, अनादि है, अनन्त है, पावन-निर्मल है और युग-युग से वह एक ही रूप में विद्यमान है (वह अपरिवर्तनीय है)।

❋ ३० ❋

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु।
आदेसु तिसै आदेसु।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥

(यह विचार सामान्यतः सब जगह मान्य है कि) ब्रह्म तथा माया (अर्थात् शिव और शक्ति) का मिलन होने से माया युक्ति-विशेष से प्रस्विनी हुई और उसने तीन पुत्रों को जन्म दिया। (उनमें से) एक संसारी अर्थात् संसार को रचनेवाला (ब्रह्मा) हुआ, एक भण्डारी अर्थात् संसार का पालन करनेवाला (विष्णु) एवं तीसरा संहार की अदालत लगाने और मृत्यु का हुकुम देनेवाला (शिव) हुआ। (तात्पर्य यह कि शिव और शक्ति या चेतन और प्रकृति के मेल से संसार को ऐसा यांत्रिक चलन दे दिया गया कि वह बनता, फैलता और मिटता रहे।) यह सब उसी पूर्णब्रह्म अकाल पुरुष की इच्छा से ही होता है (शिव-शक्ति स्वतन्त्र तत्त्व नहीं है), वही सब प्रकार की आज्ञाएँ देता है। आश्चर्य तो यह है कि परमात्मा (वाहिगुरु स्वयं सब कुछ करनेवाला है) सबको देखता है, सब जीवों की सम्भाल करता है, किन्तु उसे कोई नहीं देख पाता। (कारण शायद यह है कि सांसारिक जीव शिव-शक्ति तथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश की रंगीन मायावी प्रक्रिया में खो जाते हैं, उसके पीछे के सशक्त अवलम्ब को भूल बैठते हैं।) (अतः हे योगियो!) तुम्हें उसी मालिक का प्रणमन करना चाहिए, जो प्रणाम का (आदेस का) सही अधिकारी है। वह परमात्मा आदि है, अनादि है, अनन्त है, पावन-निर्मल है और युग-युग से वह एक रूप में विद्यमान है—(सदैव अपरिवर्तनीय है।)।

॥ ३१ ॥

आसणु लोइ लोइ भंडार, जो किछु पाइआ सु एका वार।
करि करि वेखै सिरजणहारु, नानक सचे की साची कार॥
आदेसु तिसै आदेसु।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥

उस परमात्मा का निवास सब लोकों (सब जगह) में है, (किसी विशेष स्थान बैकुण्ठादि में नहीं) और सब लोकों में ही उसका भण्डारा

है (अर्थात् सब जगह वह सबका पालनकर्ता है, सबको भोजन देता है)। इन भंडारों में उसने जो संग्रह करना था, वह एक ही बार कर दिया है (अर्थात् उसके भंडार अक्षय हैं)। (पुनः) वह सृष्टि का निरन्तर निर्माण करता एवं जीवों की सदैव सम्हाल करता है। हे नानक! वही एकमात्र सत्य है और सत्य की रचना होने के कारण उसकी बनाई सृष्टि भी सत्य ही है। (अतः हे योगियो!) तुम्हें उस सत्यस्वरूप परमात्मा का प्रणमन करना चाहिए, वही प्रणाम (आदेस) का सच्चा अधिकारी है। वह प्रभु आदि-अनादि-अनन्त है, पावन-निर्मल है और युग-युग से वह एक रूप में विद्यमान है (सदैव अपरिवर्तनीय है)।

❊ ३२ ❊

इकदू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस।
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस।
एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस।
सुणि गला आकास की कीटा आई रीस।
नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस॥

(ऊपर कहा जा चुका है कि नाम-जाप सर्वोत्तम धर्म है, यहाँ नाम का स्वरूप स्पष्ट करते हुए गुरुजी कहते हैं कि) यदि एक जिह्वा से लाख जिह्वाएँ हो जायँ, लाख की भी बीस गुणा हों और प्रत्येक जिह्वा से उस परमात्मा के नाम की लाख-लाख रट लगाई जाय अर्थात् निरन्तर प्रत्येक जिह्वा से नाम का स्मरण किया जाय—तभी पति (प्रभु) को मिला जा सकता है, यह कहने और माननेवाला भी कोरी गप्प हाँकता है। नाम-स्मरण परमात्मा को मिलने की सीढ़ी है, इस पर चढ़ने के लिए एक-मात्र उसी का सहारा लेना होता है (अर्थात् समर्पणात्मक दृष्टि से ही प्रभु-पथ पर चलना सम्भव है।) यों तो

परमात्मा की ऊँची बातें सुनकर नीच जीवों (कीटों) की भी उस तक पहुँचने की इच्छा प्रबल होती है, वे भी चाहते हैं कि परमात्मा को प्राप्त कर सकें, किन्तु हे नानक! उसकी प्राप्ति उसी की कृपा से सम्भव है। (यह कृपा केवल समर्पित जीवों पर ही होती है), झूठे लोगों के झूठे दावे अनाधारित हैं—वे सही अर्थों में परमार्थी नहीं होते।

❊ ३३ ❊

आखणि जोरु चुपै नह जोरु।
जोरु न मंगणि देणि न जोरु॥
जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु।
जोरु न राजि मालि मनि सोरु॥
जोरु न सुरती गिआनि वीचारि।
जोरु न जुगती छुटै संसारु॥
जिसु हथि जोरु करि वेखै सोइ।
नानक उतमु नीचु न कोइ॥

(अब गुरुजी बताते हैं कि परमात्मा की इच्छा के बिना कुछ भी सम्भव नहीं—मानवी सामर्थ्य परमात्मा की इच्छा के सम्मुख शून्य है।) बोलने या चुप रहने में किसी का जोर (बल) नहीं, अर्थात् अपनी इच्छा से तो कोई बोल भी नहीं सकता, न ही चुप रह सकता है। मांगने या देने में भी किसी का वश नहीं, न ही अपने सामर्थ्य से कोई जी या मर सकता है। सम्पन्नता-समृद्धि (राज-माल) की प्राप्ति या विनाश में किसी का जोर नहीं, बेकार ही मनुष्य इसे पाकर अभिमान करता है। ऊँचे विचार, विवेक और ज्ञान को पाने या उनमें रहने का भी निजी सामर्थ्य नहीं। इस संसार से मुक्त होने की युक्ति पा जाने में भी अपना

वश नहीं। जोर, वश, सामर्थ्य या बल केवल उस परमात्मा का ही है, और वही सृष्टि-निर्माण करके जीवों की सम्भाल भी कर रहा है। गुरु नानकदेव कहते हैं कि अपने से तो कोई भी उत्तम या नीच, कुछ भी नहीं बन सकता। (अर्थात् उसकी कृपा हो जाय तो नीच भी उत्तम बन सकता है, उपेक्षा हो जाय तो उत्तम भी नीचतम हो जाता है)।

*** ३४ ***

राती रुती थिती वार।
पवण पाणी अगनी पाताल॥
तिसु विचि धरती थापि।
रखी धरमसाल॥
तिसु विचि जीअ जुगति के रंग।
तिन के नाम अनेक अनंत॥
करमी करमी होइ वीचारु।
सचा आपि सचा दरबारु॥
तिथै सोहनि पंच परवाणु।
नदरी करमि पवै नीसाणु॥
कच पकाई ओथै पाइ।
नानक गइआ जापै जाइ॥

---

* [यहाँ से आगे ३४-३८ पदों में आत्मा के परमात्मा के लोक—सत्लोक—तक पहुँचने के पाँच पड़ावों का चित्रण है। इन पड़ावों को गुरुजी ने खण्ड कहा है। नाम, नीचे से ऊपर, इस प्रकार हैं—धरमखंड, ज्ञानखंड, सरमखंड, करमखंड तथा सचखंड। आत्मा परमात्मा के प्रति समर्पिता होकर उसी का नाम स्मरण करते हुए धरम (धर्म) खंड से सचखण्ड तक की यात्रा पूर्ण करती और वहाँ परमात्मा में लीन हो जाती है।]

रात-दिन, ऋतुओं, तिथियों, वारों आदि, एवं हवा, पानी, अग्नि, पाताल आदि के बीच परमेश्वर ने धरती को स्थापित किया है, जो जीव के लिए कर्तव्य-पालन का स्थान है। तात्पर्य यह कि भौतिक नियमों में बद्ध धरती जीव के लिए कर्तव्य-लोक है; उसे यहाँ रहते धर्म-पालन करना होता है (यह पहला खण्ड अर्थात् धर्मखण्ड है)। इस धरती पर अनेक प्रकार-भेद के जीव हैं, उन जीवों के असंख्य नाम हैं और जो कर्म वे जीव इस धर्मलोक में कमाते हैं, उन्हीं के अनुसार प्रभु के दरबार में उन्हें दण्ड या पुरस्कार मिलता है। परमेश्वर सत्यस्वरूप है, इसलिए उसका दरबार भी सत्य है (जहाँ उचित न्याय होता है)। (प्रभु के दरबार में) वहाँ सन्तजन ही समादृत होते हैं, उनका समादर भी प्रभु-कृपा से ही होता है। इसी खण्ड पर जीवों के (कर्मानुसार) कच्चे या पक्के (सद्गुणी या निर्गुणी) होने की परख होती है। गुरु नानकजी कहते हैं कि कच्ची-पक्की स्थिति का पता वहाँ पहुँच कर ही लगता है।

* ३५ *

धरम खंड का एहो धरमु। गिआन खंड का आखहु करमु।
केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस।
केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस।
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस।
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस।
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस।
केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद।
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद।
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु॥

'धर्मखंड' यही नियम है (जो ऊपर बताया गया है, अर्थात् गुण वृद्धि), अब ज्ञान-खंड का वर्णन कहते हैं। (इस खंड में पहुँचकर अर्थात् ज्ञानावस्था को प्राप्त करके ही पता चलता है कि) पवन, पानी, अग्नि के भी असंख्य रूप हैं, कृष्ण और शिव भी अनेक हैं। परमात्मा कितने ही अलग-अलग रंग, रूप और वेश के ब्रह्मा बना रहा है। कर्म कमाने की धरतिओं (कर्मक्षेत्रों) की संख्या भी निश्चित नहीं, कितने ही सुमेरु पर्वत हैं, कितने ही ध्रुव-भक्त तथा उनके उपदेश हैं। कितने ही चन्द्र, इन्द्र और सूर्य हैं, कितने ही खंड-मंडल और देश हैं; सिद्धों, बुद्धों, नाथों की संख्या नहीं, अनेक तो देवी के ही रूप हैं (दुर्गा, चण्डी, काली, लक्ष्मी, सरस्वती, भगवती आदि)। अनेक देव, दैत्य और ऋषि-मुनि हैं; कितने ही समुद्र हैं और (समुद्र से निकलनेवाले) कितने ही रत्न भी हैं। अनेक लोक-मण्डल हैं, अनेक वाणियाँ हैं, असंख्य शासक हैं। कितने ही तत्त्वों का ध्यान किया जाता है, कितने ही ध्यानस्थ सेवक हैं। नानक कहते हैं कि इन सब का कोई अन्त नहीं (इस अनन्तता का पता ज्ञान-खंड में पहुँचकर ही चलता है, तभी जीव ज्ञानवान् होता है)।

* ३६ *

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु।
तिथै नाद विनोद कोड अनंदु॥
सरम खंड की बाणी रूपु।
तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु॥
ता कीआ गला कथीआ ना जाहि।
जे को कहै पिछै पछुताइ॥

तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि।

तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि॥

'ज्ञानखंड' में ज्ञान ही प्रचंड होता है, किन्तु इस अवस्था में राग-रंग, कौतुक-चमत्कार आदि से लब्ध आनन्द का अस्तित्व बना रहता है। सरमखंड (श्रमखंड) की रचना सौंदर्यात्मक है। इस खंड के निर्माण में (जीव का सौंदर्य बढ़ता है, कर्मशील होने से वह सुयोग्य बनता है) सुन्दरता का विशेष स्थान है। उस अवस्था की बातों का वर्णन सम्भव नहीं। (यदि) कोई वर्णन का प्रयत्न करेगा, उसे बाद में पश्चाताप करना होगा (अर्थात् यह अनिर्वचनीय स्थिति है)। यहाँ मन और बुद्धि, चित्त और आत्मा विशिष्ट स्तर पर एक हो जाते हैं तथा जीव को देवताओं अथवा सिद्धों सरीखी पावन सूझ प्राप्त होती है। (वास्तव में तीसरा पड़ाव 'श्रमखंड' है। गुरुजी की दृष्टि में कर्तव्यपालन तथा ज्ञानोदय के उपरांत जीव को परिश्रम से प्रभु का साक्षात् करना होता है—यहाँ श्रम से तात्पर्य समर्पण, मेहनत और अनथक नाम-स्मरण है)।

❊ ३७ ❊

करम खंड की बाणी जोरु।

तिथै होरु न कोई होरु॥

तिथै जोध महा बल सूर।

तिन महि रामु रहिआ भरपूर॥

तिथै सीतो सीता महिमा माहि।

ताके रूप न कथने जाहि॥

ना ओहि मरहि न ठागे जाहि।

जिन कै रामु वसै मन माहि॥

तिथै भगत वसहि के लोअ।

करहि अनंदु सचा मनि सोइ॥

सच खंडि वसै निरंकारु।

करि करि वेखै नदरि निहाल॥

तिथै खंड मंडल वरभंड।

जे को कथै त अंत न अंत॥

तिथै लोअ लोअ आकार।

जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार॥

वेखै विगसै करि वीचारु।

नानक कथना करड़ा सारु॥

'करमखण्ड' की रचना आत्म-बल से हुई है (अर्थात् ईश्वर-कृपा पाकर जीव में आत्मबल बढ़ जाता है)। इस स्थिति में हर रंग में परमात्मा ही परमात्मा दृश्यमान् होता है (अर्थात् प्रभु-कृपा होने से जीव प्रभुमय हो जाता है, जिधर भी उसकी दृष्टि उठती है, उसे प्रभु-दर्शन होता है)। इस स्थिति की प्राप्ति आत्मबल वाले शूरवीरों और योद्धाओं को होती है, जिनके भीतर स्वयं राम (परमात्मा) भरपूर समाया रहता

---

* [चौथी मंजिल 'करमखंड' है, जहाँ सच्चे सेवक पर परमात्मा का करम (कृपा) होता है और वह ज्ञानी होने के साथ-साथ पराभक्ति (प्रपत्ति-भाव) ग्रहण करता है। ऐसा ज्ञानी-भक्त ही नाम-स्मरण द्वारा पाँचवीं मंजिल अर्थात् 'सचखण्ड' में प्रवेश का अधिकारी बनता है।]

है। वहाँ व्याप्त राम की महिमा कपड़े में बिंधे हुए धागे के समान तल्लीन रहता है और ऐसे भक्तों की आध्यात्मिक सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। जिनके मन में राम बस जाता है वे अमर और निर्भ्रम हो जाते हैं। करमखंड में वे पावन भक्तजन निवसित हैं, जो हृदयासन पर परमात्मा को आसीन कर सदैव आनन्द-मग्न रहते हैं। इस (करमखंड) से आगे 'सचखंड' है, जिसमें परमात्मा स्वयं रहता है। वह परमात्मा सृष्टि करता और अतीव कोमल कृपा-दृष्टि से सदैव उसे देखता है। प्रभु की रचना के अनेक खंड, मंडल, ब्रह्माण्ड उस अवस्था में भी मौजूद हैं, उनके वर्णन के प्रयास में भी उनका अन्त नहीं मिलता। (अर्थात् वे भी अनन्त हैं)। वहाँ अनेक लोक और अनेक आकार हैं; निरंकार के हुकुम के अनुसार ही वहाँ सब नियमित और नियन्त्रित है। स्वयं परब्रह्म उन समर्पित भक्तों के कर्मालेख पर विचार करता, उन्हें आत्मलीन करता एवं प्रसन्न होता है। गुरु नानक कहते हैं कि इस (परम) अवस्था का चित्रण कर सकना लोहे के चने चबाने के समान है (लोहे की तरह कठिन है)।

※ ३८ ※

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु।
अहरणि मति वेदु हथीआरु॥
भउ खला अगनि तपताउ।
भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि॥
घड़ीऐ सबदु सची टकसाल।
जिन कउ नदरि करमु तिन कार॥
नानक नदरी नदरि निहाल॥

(ऊपर जिस उच्चावस्था का आध्यात्मिक चित्रण हुआ है, वहाँ पहुँचने के लिए निर्मल आचरण की आवश्यकता होती है। उसी आचरण को पाकर जीव नाम-स्मरण करता और उस अवस्था को प्राप्त होता है, जहाँ सच्ची वाणी का स्फोट होता है। यहाँ उक्त निर्मल आचरण की प्राप्ति का नुस्खा बताया जा रहा है—जैसे सुनार स्वर्ण को भट्ठी पर चढ़ाता और उसे ठोक-पीटकर शुद्ध करता है, वैसे ही जिज्ञासु जीव को आचरण के शुद्धिकरण की प्रक्रिया करनी पड़ती है)।

यतीत्व (इन्द्रिय-निग्रह) की भट्ठी हो, धैर्य का सुनार हो, बुद्धि की अहरण हो, ज्ञान का हथौड़ा हो, प्रेम की कुठाली हो और इस कुठाली में अमृतमय नाम को गलाया जाय तो उसी सच्ची टकसाल में शब्द (सच्ची वाणी) का स्फोट होता है। [तात्पर्य यह कि यदि जीव इन्द्रिय-निग्रह, धैर्य, विवेक, ज्ञान और प्रेम को मन में बसाकर सद्भावपूर्ण ढंग से नाम का जाप करे, तो वह अनाहत शब्द (नाद) की लहरियों को पकड़कर नामी (परमात्मा) को पा सकता है।] जिन जीवों पर प्रभु की कृपा-दृष्टि होती है, वे ही ये कार्य कर सकते हैं कि ऐसे जीव परमात्मा की दया-दृष्टि से निहाल हो जाते हैं (अर्थात् वे प्रभु में ही लीन हो जाते हैं)।

✣ सलोकु ✣

पवणु गुरु पाणी पिता माता धरति महतु।
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु।
चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि।
करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि।
जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥

(जपुजी साहब के इस अन्तिम श्लोक में गुरुजी ने मानव-जीवन के अस्तित्व, स्थिति और स्वरूप को एक सुन्दर रूपक द्वारा समझाया है। मानव-जीवन का यथार्थ लक्ष्य क्या है और उसकी उपलब्धि क्योंकर हो सकती है, यह भी इस श्लोक में स्पष्ट किया गया है)। सांसारिक जीवों के लिए पवन गुरु है, पानी पिता है तथा धरती माँ है (गुरु का कार्य मार्गदर्शन कराना है, पवन शरीर को चलाता है, इसलिए गुरु है। पानी जनक है, उसीके प्रवेश से धरती से वनस्पतियाँ फूटती हैं; धरती जननी है)। दिन और रात, दोनों इन जीवों को खेल-खिलानेवाले सेवक-सेविका हैं (अर्थात् सब जीव रात-दिन की गोद में खेलते या कार्य-रत रहते हैं)। परलोक में परमात्मा के सम्मुख धर्मराज इन जीवों का कर्मालेख जाँचता है और अपने-अपने कर्मों के अनुसार कई जीव प्रभु-नैकट्य पा लेते हैं और कई उससे दूर भी हट जाते हैं। गुरुनानक कहते हैं कि सत्कर्मी जीव प्रभु की शरण में विलीन हो जाते हैं; (इतना ही नहीं) बहुत-से दूसरे जीव भी इन मुक्तात्माओं से जुड़कर (मोह-माया के बंधनों से) छूट जाते हैं।

(गुरुग्रन्थ साहिब पृष्ठ—१ से ८)

੧ੳ

रहिरास साहिब

सायंकालीन वन्दना

गुरु ग्रन्थ साहिब के विभिन्न स्थानों से संकलित इस 'रहिरास' में परमात्मा की स्तुति का गान है तथा दशम ग्रन्थ से संकलित **'चौपई'** इस वाणी में ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि जीव की रक्षा करके उसे दोषों से बचा लो फिर परमात्मा के स्मरण-सुख के आनन्द के बाद उससे कृपा करने की प्रार्थना है।

रहिरास साहिब

॥ सलोकु महला १ ॥

दुखु दारू सुखु रोगु भइआ जा सुखु तामि न होई।
तूं करता करणा मै नाही जा हउ करी न होई।
बलिहारी कुदरति वसिआ तेरा
अंतु न जाई लखिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
जाति महि जोति जोति महि जाता
अकल कला भरपूरि रहिआ।
तूं सचा साहिबु सिफति सुआल्हिउ
जिनि कीती सो पारि पइआ।
कहु नानक करते कीआ बाता
जो किछु करणा सु करि रहिआ ॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ४६९)

(प्रभु-प्राप्ति के मार्ग पर) सुख रोग है और दुख उसका उपचार, क्योंकि सुख में स्मरण नहीं होता। हे परमात्मा! तुम रचयिता हो, सब कुछ स्वयं करते हो; यदि मैं अपने बल से कुछ करना भी चाहूँ, तो वह नहीं होता। मैं तुम्हारी क्षमताओं पर बलिहार हूँ, तुम समूची सृष्टि में व्याप्त हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीवों की प्रत्येक जाति में तुम्हारा आलोक है और तुम्हारे आलोक से ही समस्त जीव-जातियों का अस्तित्व है; हे मालिक! तुम कला-विहीन होकर भी व्याप्ति की कला से उन सबमें विद्यमान हो। तुम सक्षम स्वामी हो, तुम्हारी महत्ती महिमा का गान करनेवाले का उद्धार हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि कर्ता सर्वत्र सक्षम है, जो उसे रुचता है वह कर रहा है ॥ २ ॥

॥ सो दरु रागु आसा महला १ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले।
वाजे तेरे नाद अनेक असंखा केते तेरे वावणहारे।
केते तेरे राग परी सिउ कहीअहि केते तेरे गावणहारे।
गावनि तुधनो पवणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे।
गावनि तुधनो चितु गुपतु लिखि जाणनि
लिखि लिखि धरमु बीचारे।
गावनि तुधनो ईसरु ब्रह्मा देवी सोहनि तेरे सदा सवारे।
गावनि तुधनो इंद्र इंद्रासणि बैठे देवतिआ दरि नाले।
गावनि तुधनो सिध समाधी अंदरि गावनि तुधनो साध बीचारे।
गावनि तुधनो जती सती संतोखी गावनि तुधनो वीर करारे।
गावनि तुधनो पंडित पड़नि रखीसुर जुगु जुगु वेदा नाले।
गावनि तुधनो मोहणीआ मनु मोहनि सुरगु मछु पइआले।
गावनि तुधनो रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले।
गावनि तुधनो जोध महाबल सूरा गावनि तुधनो खाणी चारे।
गावनि तुधनो खंड मंडल ब्रहमंडा करि करि रखे तेरे धारे।
सेई तुधनो गावनि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले।
होरि केते तुधनो गावनि से मै चिति न आवनि
नानकु किआ बीचारे।
सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई।
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई।

रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई।
करि करि देखै कीता आपणा जिउ तिस दी वडिआई।
जो तिसु भावै सोई करसी फिरि हुकमु न करणा जाई।
सो पातिसाहु साहा पतिसाहिबु नानक रहणु रजाई॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८)

(अब गुरुजी परमात्मा की महानता का दिग्दर्शन करवाने के लिए सृष्टि की सभी शक्तियों को उसके दरबार में कोर्निश करती हुई दिखाते हैं) (हे परमात्मा) वह कौन-सा घर-दर है, जहाँ बैठकर तुम समस्त (जीवों की) सम्भाल करते हो? (वहाँ) अनेक वादनों का स्वर मुखरित है, असंख्य वादक भी वहाँ अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। कितने ही राग अपनी परियों (रागिनियों) सहित वहाँ गाये जा रहे हैं, कितने ही गायक उन्हें गा रहे हैं। पवन, पानी, अग्नि आदि सृष्टि के मूल तत्त्व एवं धर्मराज स्वयं, सब तुम्हारे दरबार में तुम्हारा यश गाते हैं। जीवों के कर्मों का आलेख रखनेवाला चित्रगुप्त भी (हे ईश्वर) तेरा ही गुणगान करता है—उसी के कर्मालेख के अनुसार धर्मराज जीवों के (पाप-पुण्य का) विचार करता है। शिवजी, ब्रह्मा तथा देवी (भगवती) सब तुम्हारे द्वारा निर्मित हैं, तुम्हारा नाम गा रहे हैं। कई इन्द्र अपनी देव प्रजा सहित तुम्हारा यशोगान करते हैं। सिद्ध अपनी समाधियों और साधु भगवद्कथा में तुम्हें ही खोज रहे हैं। यती, सती, संतोषी, सब प्रकार के जीव तुम्हारा विरद गाते हैं, बड़े-बड़े शूर-वीर भी तुम्हारा ध्यान लगाते हैं। विद्वज्जन, ऋषि-मुनि आदि वेदाध्ययन करते हुए भी तुम्हारा ही गुणगान करते हैं। स्वर्ग, इह एवं पाताललोकों की मोहिनी सुन्दरियाँ तुम्हारे ही नाम का गान कर रही हैं। सृष्टि के अड़सठ तीर्थ एवं चौदह रत्न, सब तेरे अपने बनाए हुए हैं और वे सब तुम्हारा ही गुण गाते हैं। बली, शूर और योद्धा, सब तुम्हारा नाम लेते हैं, चारों सृष्टियाँ (अंडज, जेरज, स्वेदज तथा उद्‌भुज) तुम्हारा यशोगान करती हैं। समूचा ब्रह्माण्ड, उसके खण्ड-मण्डल, सब तेरी रचना है, तेरा नाम पुकारते

हैं। तेरा नाम-जाप वास्तव में वे ही कर सकते हैं, जो तुम्हें स्वीकार हैं; वे तुम्हारे नाम-रस के मतवाले हैं, तुम्हारे भक्त हैं। और अनेक ऐसे गुणगायक भी होंगे, जो इस समय मेरे ध्यान में नहीं आ रहे। गुरु नानकजी कहते हैं कि उनका कहाँ तक विचार किया जाय? वह परमपिता परमात्मा ही सत्य है, उसकी विरद भी सच है। उसका अस्तित्व है, वह भविष्य में भी रहेगा। सृष्टि का रचयिता वह परमात्मा न कभी मरता है, न जन्म लेता है। परमात्मा ने अनेक रंगों, प्रकारों एवं वस्तुओं की रचना की है, माया भी उसी ने बनाई है। वह जीवों का निर्माण करके स्वयं ही उनको संरक्षण भी दे रहा है, यही बड़े के अनुकूल बड़प्पन है। वह वही करता है, जो उसे रुचता है। (कोई उसका प्रतिद्वन्द्वी नहीं)। वह सबका शासक है, शासकों का भी शासक है, गुरु नानकदेव कहते हैं कि उसकी आशंसा में ही रहे बनता है, (जीव उसे कदापि चुनौती नहीं दे सकता)।

॥ आसा महला १ ॥

सुणि वडा आखै सभु कोइ।
केवडु वडा डीठा होइ।
कीमति पाइ न कहिआ जाइ।
कहणै वाले तेरे रहे समाइ॥ १ ॥
वडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा।
कोइ न जाणै तेरा केता केवडु चीरा॥ १ ॥ रहाउ॥
सभि सुरती मिलि सुरति कमाई।
सभ कीमति मिलि कीमति पाई।
गिआनी धिआनी गुर गुरहाई।
कहणु न जाई तेरी तिलु वडिआई॥ २ ॥

सभि सत सभि तप सभि चंगिआईआ।
सिधा पुरखा कीआ वडिआईआ।
तुधु विणु सिधी किनै न पाईआ।
करमि मिलै नाही ठाकि रहाईआ॥ ३॥
आखण वाला किआ वेचारा।
सिफती भरे तेरे भंडारा।
जिसु तू देहि तिसै किआ चारा।
नानक सचु सवारणहारा॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९)

उसका नाम सुन-सुनकर सब उसे (परमात्मा) को महान कहते हैं। किन्तु वह कितना महान है, (यह तो वही बता सकेगा), जिसने (उसे) देखा होगा! हे परमेश्वर, कोई तुम्हारा मोल नहीं जानता और न उसका कथन ही कर सकता है। जो तुम्हारा बड़प्पन बता सकने में समर्थ होते हैं (अर्थात् जो तुम्हें साक्षात् कर लेते हैं), वे तुम्हीं में लीन हो जाते हैं। हे मेरे महान प्रभु, हे गहन-गम्भीर, हे गुणों के अथाह कोष; कोई नहीं जानता कि तुम्हारा कितना विशाल विस्तार है (तुम कितने व्यापक हो)। आध्यात्मिक शक्ति-सम्पन्न महापुरुषों ने (तुम्हारा अन्त खोजने के लिए) समाधियाँ लगाईं; बड़े-बड़े सौदागरों (मोल डालनेवालों) ने मिलकर तुम्हारी कीमत लगाने का प्रयास किया; ज्ञानी, ध्यानी, गुरु और गुरुओं के भी गुरु यह प्रयत्न करते रहे, किन्तु तुम्हारी महानता का तिल-भर भी वे अनुमान नहीं कर सके। सतत्त्व, तपस्या, श्रेष्ठता, सिद्ध लोगों की प्राप्तियाँ, इन सबके होते हुए भी, तुम्हारी कृपा के बिना किसी को सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकी। (यदि तुम्हारी कृपा हो जाय) तो कोई राह रोक नहीं सकता। (तुम्हारे गुणों का) कथन करनेवाले बेचारे की क्या बिसात? तुम्हारे गुणों के तो भण्डार भरे हैं। जिसे तुम

(उन गुणों में से) थोड़ा भी प्रदान कर दो, उसे फिर किसी अन्य सहारे की अपेक्षा नहीं रह जाती। गुरु नानक कहते हैं कि वह गुण ही (जीव को) सँवारनेवाला है।

॥ आसा महला १ ॥

आखा जीवा विसरै मरि जाउ।
आखणि अउखा साचा नाउ।
साचे नाम की लागै भूख।
उतु भूखै खाइ चलीअहि दूख॥ १ ॥
सो किउ विसरै मेरी माइ।
साचा साहिबु साचै नाइ॥ १ ॥ रहाउ॥
साचे नाम की तिलु वडिआई।
आखि थके कीमति नहीं पाई।
जे सभि मिलि कै आखण पाहि।
वडा न होवै घाटि न जाइ॥ २ ॥
ना ओहु मरै न होवै सोगु।
देदा रहै न चूकै भोगु।
गुणु एहो होरु नाही कोइ।
ना को होआ ना को होइ॥ ३ ॥
जेवडु आपि तेवड तेरी दाति।
जिनि दिनु करि कै कीती राति।
खसमु विसारहि ते कमजाति।
नानक नावै बाझु सनाति॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९)

जब तक मैं (तेरे नाम का) कथन करता हूँ, जीवित हूँ (वही जीवन है), (तेरा नाम) विस्मृत करने में ही मृत्यु निहित है। किन्तु सच्चे नाम का कथन बड़ा कठिन है। जीव को जब सच्चे नाम की भूख लगती है, और वह उस भूख में (नाम का) भोजन करता है, तो उसके सब दुःख निवृत्त हो जाते हैं। अतः हे माँ, जीव को वह सच्चा नाम कभी विस्मृत नहीं होना चाहिए, उसी नाम से तो परमात्मा प्राप्त होता है। सच तो यह कि सब कथन कर-करके थक गये, किन्तु वे सच्चे नाम की तिल-भर भी महिमा नहीं पा सके। यदि समस्त जीव मिलकर भी उसका महात्म्य कहने लगें, तो वह बड़ा नहीं बन जाता, (और यदि न कहें तो) वह छोटा भी नहीं होता। उसका कोई अन्त नहीं (वह अनन्त-अमर है), (उसके सेवकों को) कभी (उसकी मृत्यु का) शोक नहीं होता। वह महान् दानेश्वर है, उसकी दान-शक्ति कभी नहीं चूकती। उसकी यही विशेषता है कि उसके समान और कोई नहीं, न हुआ है, न भविष्य में होगा। जितना महान् वह परमात्मा है, उतनी ही महान् उसकी बख्शीश है। यह रात और दिन उसी के द्वारा निर्मित है। जो जीव ऐसे परमात्मा (पति) को भुला देते हैं, वे नीच हैं। नानक कहते हैं कि नाम से विमुख जीव अपावन होते हैं।

॥ राग गूजरी महला ४ ॥

हरि के जन सतिगुर सतपुरखा
बिनउ करउ गुर पासि।
हम कीरे किरम सतिगुर
सरणाई करि दइआ नामु परगासि ॥ १ ॥
मेरे मीत गुरदेव मोकउ राम नामु परगासि ॥ १ ॥
गुरमति नामु मेरा प्रान सखाई हरि कीरति हमरी रहरासि ॥
१ ॥ रहाउ ॥

हरिजन के वड भाग वडेरे
जिन हरि हरि सरधा हरि पिआस।
हरि हरि नामु मिलै त्रिपतासहि
मिलि संगति गुण परगासि॥ २॥
जिन हरि हरि हरिरसु नामु न पाइआ
ते भागहीण जम पासि।
जो सतिगुर सरणि संगति नही आए
ध्रिगु जीवे ध्रिगु जीवासि॥ ३॥
जिन हरिजन सतिगुर संगति पाई
तिन धुरि मसतकि लिखिआ लिखासि।
धनु धंनु सतसंगति जितु हरिरसु पाइआ
मिलि जन नानक नामु परगासि॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १०)

हे सतिगुरु, हे सतिपुरुष पूर्णगुरु (हरि-जन), मेरी (आपके चरणों में) यह विनती है कि मैं नीच कीट के समान हूँ, तुम्हारी शरण में हूँ, कृपा करके मेरे अन्त:करण में नाम का आलोक प्रदान करो। हे मेरे सच्चे सखा गुरुदेव, मुझे उस हरिनाम का आलोक दरकार है, जो गुरु के मतानुसार हो। वही मेरे प्राणों का सही अवलम्ब है, उस परमात्मा का गुणगान ही मेरे जीवन की दिनचर्या है। (मैंने तो यही जाना है कि) जो जीव हरि में श्रद्धा रखते हैं और जिन्हें हरिनाम की ही प्यास है, उन हरिजनों का अहोभाग्य है। वही हरिनाम मुझे भी प्रदान कीजिए, ताकि मेरी तृप्ति हो और मैं भी सतिसंगत में मिलकर उस परमात्मा के गुणों का प्रकाश (हृदय में धारण कर सकूँ)। जिन जीवों को परमात्मा के नाम का सच्चा रस उपलब्ध नहीं हुआ, वे भाग्यहीन हैं और यम के

पंजों में (रह रहे) हैं। जो सतिगुरु की शरण में नहीं आए, उनके जीवन पर धिक् है, उनका भावी जीवन भी व्यर्थ है। जिन श्रद्धालुओं ने सतिगुरु की शरण पा ली है, उनके भाग्य में शुरू से ही (कृपा का) लेख मौजूद है। वे जीव धन्य हैं जिन्होंने हरिजनों का दामन थामकर हरि-रस को पा लिया है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जन (हरि के सम्मुख समर्पित होते हैं), उन्हें नाम का आलोक प्राप्त होता है।

॥ रागु गूजरी महला ५ ॥

काहे रे मन चितवहि उदमु
जा आहरि हरि जीउ परिआ।
सैल पथर महि जंत उपाए
ता का रिजकु आगै करि धरिआ॥ १॥
मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सु तरिआ।
गुर परसादि परमपदु पाइआ सूके कासट हरिआ॥ १॥ रहाउ॥
जननि पिता लोक सुत बनिता
कोइ न किस की धरिआ।
सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु
काहे मन भउ करिआ॥ २॥
ऊडे ऊडि आवै सै कोसा
तिसु पाछै बचरे छरिआ।
तिन कवणु खलावै कवणु
चुगावै मन महि सिमरनु करिआ॥ ३॥
सभि निधान दसअसट सिधान
ठाकुर करतल धरिआ।

जन नानक बलि बलि सद
बलि जाईऐ तेरा अंतु न पारावरिआ ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १०)

हे मन (हे जीव), तू क्यों चिन्ता करता है (अपने जीवन के यत्नों में क्यों लीन है?) इसके प्रबन्ध में तो स्वयं परमात्मा संलग्न है। (अर्थात् जब परमात्मा सबके लिये, भाव तुम्हारे लिये भी, सब प्रबन्ध कर रहा है, तो तू क्यों यत्नों की चिन्ता करता है?) उस परमात्मा ने तो पत्थर में रहनेवाले जीव के लिये भी भोजन दिया है। हे मेरे माधव (परमेश्वर), मुझे तो सतिसंगत प्रदान करो, उसी में मोक्ष है। जिसे गुरु की कृपा से परम-पद लब्ध हुआ है (जिसे नाम-रहस्य ज्ञात हो गया है), वह तो (समझो कि) सूखी लकड़ी से हरा-भरा (पेड़) हो गया है। (तात्पर्य यह कि परम-पद प्राप्त करनेवालों के पाप धुल जाते हैं और वे पावन-आत्मा हो जाते हैं।)। संसार में माता, पिता, पुत्र, पत्नी, कोई किसी का सहारा नहीं बनता। वह परमात्मा ही सबको भोजन पहुँचाता है, इसलिए (हे मन) तू क्यों भय करता है। (अब यहाँ कूँज पक्षी का दृष्टांत देते हैं) उड़-उड़कर सैकड़ों कोस वे (कूँजें) आगे निकल जाती हैं, बच्चे पीछे छोड़ आती हैं। कभी तुमने सोचा है कि उन्हें (पीछे) कौन खिलाता-पिलाता है! वह ठाकुर (परमात्मा) ही नौ निधियाँ, अठारह सिद्धियों को देनेवाला है। नानक कहते हैं, इसीलिए उस परब्रह्म के हम बलिहार हैं, उसकी महानता का कोई अन्त नहीं (अर्थात् उसकी व्यापकता या विस्तार हमारी कल्पना से बहुत बड़ा है)।

---

* [नौ निधियाँ : पद्म, महापद्म, संख, मकर, कच्छप, कुन्द, नील, मुकुन्द, खरब]
* [अठारह सिद्धियाँ : अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, ईशिता, वशिता, अनूरमि, दूर-श्रवण, दूर-दर्शन, मनोवेग, कामरूप, परकाय प्रवेश, स्वेच्छ मृत्यु, सुरक्रीड़ा, संकल्प सिद्धि, अप्रतिहत-गति]

सो पुरखु

(यह वाणी का नाम है और इसके चार पदों में परमात्मा का स्तुति गान है।)

॥ रागु आसा महला ४ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सो पुरखु निरंजनु हरि पुरखु निरंजनु
हरि अगमा अगम अपारा।
सभि धिआवहि सभि धिआवहि
तुधु जी हरि सचे सिरजणहारा।
सभि जीअ तुमारे जी तूं जीआ का दातारा।
हरि धिआवहु संतहु जी सभि दूख विसारणहारा।
हरि आपे ठाकुरु हरि आपे सेवकु जी
किआ नानक जंत विचारा॥ १॥

वह परब्रह्म मायातीत, मन-वाणी से परे है, भूतकाल में भी अगम था और भविष्य में भी अगम्य रहेगा। हे सच्चे परमात्मा, तू सबका रचयिता है, सब केवल तुम्हारा ध्यान ही करते हैं, अतीत में तेरा ही ध्यान लगाते थे और भविष्य में भी तुझे स्मरण करते रहेंगे। सब जीव तुम्हारे द्वारा ही निर्मित हैं, तू ही उनका पोषक और रक्षक है। इसलिए हे सन्तजनो, उस दुःखमोचन हरि का स्मरण करो। वास्तव में परमात्मा स्वयं स्वामी है, सेवक भी स्वयं ही है, गुरु नानक जी कहते हैं कि बेचारे जीव तो तुच्छ हैं, (उसकी गहनता को नहीं पहचान सकते)।

तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी
हरि एको पुरखु समाणा।
इकि दाते इकि भेखारी जी सभि तेरे चोज विडाणा।

तूं आपे दाता आपे भुगता जी
हउ तुधु बिनु अवरु न जाणा।
तूं पारब्रहमु बेअंतु बेअंतु जी
तेरे किआ गुण आखि वखाणा।
जो सेवहि जो सेवहि तुधु जी
जनु नानकु तिन कुरबाणा॥ २॥

परमात्मा सब जीवों के अन्तःकरण में समाया हुआ है। (फिर भी यदि) कोई दाता है और कोई भिखारी, वह सब उस (परमात्मा) के विस्मयकारक कौतुक ही हैं। (हे परमेश्वर!) तू ही देनेवाला है और तू ही भोगनेवाला; मैं तुम्हारे अतिरिक्त और किसी को नहीं जानता। तू परब्रह्म है, अनादि और अनन्त है, तेरे गुणों का बखान कर सकने का सामर्थ्य मुझमें नहीं। गुरु नानक जी कहते हैं कि जो जीव तुम्हारा स्मरण करते हैं, तुम्हारी सेवा में समर्पित हैं, वे उनके बलिहार जाते हैं।

हरि धिआवहि हरि धिआवहि तुधु जी
से जन जुग महि सुखवासी।
से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ जी
तिन तूटी जम की फासी।
जिन निरभउ जिन हरि निरभउ धिआइआ जी
तिन का भउ सभु गवासी।
जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि जी
ते हरि हरि रूपि समासी।
से धंनु से धंनु जिन हरि धिआइआ जी
जनु नानकु तिन बलि जासी॥ ३॥

हे प्रभु, जो जीव तुम्हारा ध्यान करते हैं, तुम्हें स्मरण करते हैं, वे

सदैव सुख में वास करते हैं। हरि का स्मरण करनेवाले जीव मोक्ष-लाभ करते हैं, वे यम के फंदे से भी मुक्त हो जाते हैं। जिन जीवों ने निर्भयतापूर्वक उस परम निर्भय भगवान का ध्यान किया, उनका जागतिक भय मूलतः नष्ट हो जाता है। जो हरि की सेवा में आत्मसमर्पित होते हैं, वे तो उसी के रूप में विलीन हो जाते हैं। हरि-स्मरण करनेवाले जीव धन्य हैं, नानक उनपर बलिहार है।

तेरी भगति तेरी भगति भंडार जी भरे बिअंत बेअंता।

तेरे भगत तेरे भगत सलाहनि तुधु जी
हरि अनिक अनेक अनंता।

तेरी अनिक तेरी अनिक करहि हरि पूजा जी
तपु तापहि जपहि बेअंता।

तेरे अनेक तेरे अनेक पड़हि बहु सिम्रिति सासत जी
करि किरिआ खटु करम करंता।

से भगत से भगत भले जन नानक जी
जो भावहि मेरे हरि भगवंता॥४॥

हे अनन्त हरि जी, भक्तों के हृदयों में तीनों काल तुम्हारी भक्ति के अनन्त कोष भरे पड़े हैं। तुम्हारे भक्त निरन्तर अनेक प्रकार की पूजा-विधियों से तुम्हारे चरणों में अनन्त वन्दना अर्पण करते हैं। अनेक प्रकार से तुम्हारी उपासना होती है, योगी-जती आदि जप-जाप और अनन्त तपस्याओं के माध्यम से तुम्हारी प्रशस्ति करते हैं। तुम्हारे अनेक जीव स्मृतियों-शास्त्रों आदि धार्मिक ग्रन्थों का वाचन करते और षट्कर्म (मनुस्मृति के अनुसार पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना, आदि छः कार्य) की दिनचर्या को अपनाते हैं, किन्तु नानक जी कहते हैं कि इन सब प्रकार के भक्त जीवों में वे ही सफल हैं, जो परमात्मा को प्रिय हैं।

तूं आदि पुरखु अपरंपरु करता जी
तुधु जेवडु अवरु न कोई।
तूं जुगु जुगु एको सदा सदा तूं एको जी
तूं निहचलु करता सोई।
तुधु आपे भावै सोई वरतै जी तूं आपे करहि सु होई।
तुधु आपे स्रिसटि सभ उपाई जी
तुधु आपे सिरजि सभ गोई।
जनु नानकु गुण गावै करते के जी
जो सभसै का जाणोई॥ ५॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १०)

हे प्रभु तुम आदि पुरुष हो, असीम हो, तुम्हारी महानता को पा सकना किसी और के बूते में नहीं। तुम भूत, भविष्य और वर्तमान में सदैव एक ही हो। तुम्हीं एक-मात्र अपरिवर्तनीय हो, (शेष सब संसार परिवर्तनशील है)। जो तुम्हें प्रिय है, वही होता है; तुम्हारे करने से ही सबका अस्तित्व है। यह समूची सृष्टि तुमने स्वयं निर्मित की है (और इच्छा होने पर), स्वयं ही इसे अपने में लीन भी कर लेते हो। गुरु नानक कहते हैं कि इसीसे हमें उस कर्त्तार का स्तुति-गान मात्र करना चाहिए। जो सबका आधार है, उसकी जाँच-पड़ताल सम्भव नहीं (आशय यह कि जाँच-पड़ताल तो वह करे, जो उस परमात्मा की सीमा से बाहर रहकर उसे देखे! यह असम्भव है)॥ ५॥

॥ आसा महला ४॥

तूं करता सचिआरु मैडा सांई।
जो तउ भावै सोई थीसी जो तूं देहि सोई हउ पाई॥
१॥ रहाउ॥

सभ तेरी तूं सभनी धिआइआ।

जिस नो क्रिपा करहि तिनि नाम रतनु पाइआ।

गुरमुखि लाधा मनमुखि गवाइआ।

तुधु आपि विछोड़िआ आपि मिलाइआ॥ १॥

तूं दरीआउ सभ तुझ ही माहि।

तुझ बिनु दूजा कोई नाहि।

जीअ जंत सभि तेरा खेलु।

विजोगि मिलि विछुड़िआ संजोगी मेलु॥ २॥

जिस नो तू जाणाइहि सोई जनु जाणै।

हरिगुण सद ही आखि वखाणै।

जिनि हरि सेविआ तिनि सुखु पाइआ।

सहजे ही हरिनामि समाइआ॥ ३॥

तू आपे करता तेरा कीआ सभु होइ।

तुधु बिनु दूजा अवरु न कोइ।

तू करि करि वेखहि जाणहि सोइ।

जन नानक गुरमुखि परगटु होइ॥४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ११)

हे प्रभु, तुम्हीं सच्चे स्रष्टा हो, तुम मेरे स्वामी हो। जो तुम्हें स्वीकार है, वही होता है और जो तुम देते हो, वही मेरी प्राप्ति है॥ १॥ रहाउ॥ ('रहाउ' शब्द पद के पाठ में उक्त पंक्ति को दोहराने का सूचक है अर्थात् टेक की पंक्ति)। समूची सृष्टि तुम्हारी रचना है, सब जीव तुम्हारा ही स्मरण करते हैं, किन्तु (जिनकी सेवा से प्रसन्न होकर) तुम कृपा कर देते हो, वे तुम्हारे पावन नाम को पा जाते हैं। गुरु का आश्रय लेनेवाला जीव नाम-रत्न प्राप्त करता है, किन्तु मन-मुखी जीव

(गुरु से विमुख, मन के भ्रमों में पड़ा हुआ व्यक्ति) उस नाम-धन से वंचित रह जाता है। जीवों का मिलन या वियोग तुम्हारी ही कृपा-अकृपा का परिणाम है (यह जीव के सामर्थ्य से बाहर है) ॥ १ ॥ हे मालिक, तुम गहरे सागर हो, (संसार के कौतुक) सब सागर की तरंगों के समान हैं; मूलतः तुम्हारे बिना और कोई नहीं। विश्व के समस्त जीव-जन्तु तुम्हारा खेल हैं; यह वियोग और संयोग के नियम तुम्हारी ही रचना हैं, जिनसे मिले हुए बिछुड़ते और बिछुड़े हुए मिल जाते हैं ॥ २ ॥ अपने अस्तित्व की जानकारी जिसे तुम स्वयं देते हो, वही तुम्हें जान सकता है। (वह भी जानने के पश्चात् तुम्हारा बयान नहीं कर सकता,) केवल तुम्हारे गुणों का गान करता हुआ ही तुम्हारे बखान का प्रयास करता है। हे हरि, वे तुम्हारी सेवा में आत्म-समर्पण कर देते हैं, वे सहज में ही (प्रकृतिस्थ रूप में ही) हरिनाम में लीन हो जाते हैं ॥ ३ ॥ तुम स्वयं स्रष्टा हो, तुम्हारे करने से ही सब होता है। तुम्हारे सिवा दूसरा और कोई (समर्थ) नहीं। तुम सृजन करते हो, इसलिए स्वयं ही रचना के भेदों के ज्ञाता हो। (भाग्यशाली भक्त जीवों पर) इन रहस्यों का उद्‌घाटन सतिगुरु के माध्यम से ही होता है ॥ ४ ॥

॥ आसा महला १ ॥

तितु सरवरड़ै भईले निवासा पाणी पावकु तिनहि कीआ।
पंकजु मोह पगु नही चालै हम देखा तह डूबीअले ॥ १ ॥
मन एकु न चेतसि मूड़ मना।
हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
ना हउ जती सती नही पड़िआ मूरख मुगधा जनमु भइआ।
प्रणवति नानक तिन की सरणा
जिन तू नाही वीसरिआ ॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १२)

हम सब जीव ऐसे संसार में निवास करते हैं, जिसमें (प्रभु ने) पानी की जगह (तृष्णा की) अग्नि भर रखी है। (इस संसार-सागर में) मोह का कीचड़ है, जिस कारण पैर नहीं चलते (फिसलते हैं)। हमने उसमें कई जीवों को डूबते भी देखा है (अर्थात् मोह और तृष्णा के वश में पड़े देखा है)। हे मूढ़ मन, फिर भी तू परमात्मा को याद नहीं करता। परमेश्वर को भुला देने के ही कारण तुम्हारे आध्यात्मिक गुण नष्ट हो गये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, मैं यति, सती या विद्वान नहीं हूँ, मेरा मूर्ख, गँवारों जैसा जीवन है; इसलिये मुझे (गुरुजी कहते हैं) हे दाता, उन महानात्माओं की शरण प्रदान करो, जो तुम्हें कदापि विस्मृत नहीं करते अर्थात् सदैव तुम्हारा नाम-स्मरण करते हैं ॥ २ ॥

॥ आसा महला ५ ॥

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।
अवरि काज तेरै कितै न काम।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥ १ ॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै।
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥ १ ॥ रहाउ ॥
जपु तपु संजमु धरमु न कमाइआ।
सेवा साध न जानिआ हरि राइआ।
कहु नानक हम नीच करंमा।
सरणि परे की राखहु सरमा॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १२)

(अब गुरुजी जीव को उद्‌बोधन करते हुए कहते हैं) हे जीव, तुम्हें (परमात्मा की कृपा से) मानव-शरीर अर्थात् मनुष्य जन्म प्राप्त

हुआ है; यही परमात्मा को मिल सकने का स्वर्ण-अवसर है। (तात्पर्य यह कि मनुष्य शरीर में ही नाम-स्मरण द्वारा परमात्मा में लीन हुआ जा सकता है, अन्य योनियों में मोक्ष सम्भव नहीं।) इस जन्म में और सब काम तुम्हारे लिये व्यर्थ हैं; तुम्हें तो मनुष्य योनि में आकर केवल साधु-संगति और नाम-स्मरण ही में संलग्न होना चाहिए॥ १ ॥ (इस स्वर्णावसर का लाभ उठाते हुए) तुम्हें संसार-सागर तिरने अर्थात् मोक्ष-लब्धि का प्रबन्ध करना चाहिए; ऐसा न हो कि माया के आकर्षणों में ही तुम इस जन्म को व्यर्थ गँवा दो॥ १ ॥ रहाउ ॥ (इस श्रेष्ठतम योनि में, मनुष्य शरीर पाकर भी) हमने जप, तप नहीं किया, विषय-विकारों से मन को नहीं हटाया, धर्म का कोई भी कार्य नहीं किया, साधुजनों की सेवा में भी रति नहीं की और न ही परमात्मा को पहचानने का प्रयास किया। गुरु नानक जी कहते हैं कि हम ऐसे नीच-कर्मी हैं (करणीय कुछ भी नहीं कर पाये), फिर भी हे परमेश्वर, तुम्हारी शरण में हैं, कृपा करके अपने विरद की लाज रख लो (अर्थात् हम पर दया करके हमें अपने चरणों में स्थान दो) ॥ २ ॥

॥ कबियो बाच बेनती ॥

॥ चौपई ॥

हमरी करो हाथ दै रच्छा।
पूरन होइ चित्त की इच्छा।
तव चरनन मन रहै हमारा।
अपना जान करो प्रतिपारा ॥ ३७७ ॥
हमरे दुशट सभै तुम घावहु।
आपु हाथ दै मोहि बचावहु।
सुखी बसै मोरो परिवारा।
सेवक सिख्य सभै करतारा ॥ ३७८ ॥

कवि उवाच विनती। चौपाई। मेरी अपने हस्त के द्वारा रक्षा करो ताकि मेरे चित्त की इच्छा पूर्ण हो सके। मेरा मन आपके चरणों में लीन रहे; मुझे अपना समझकर मेरा उद्धार करो॥ ३७७॥ मेरे सभी शत्रुओं का संहार करो और अपना हाथ देकर मुझे बचाओ। मेरा परिवार—सेवक, शिष्य सभी सुखी रहें॥ ३७८॥

मो रच्छा निजु कर दै करियै।

सभ बैरिन कौ आज सँघरियै।

पूरन होइ हमारी आसा।

तोरि भजन की रहै पियासा॥ ३७९॥

तुमहि छाडि कोई अवर न ध्याऊँ।

जो बर चाहौ सु तुमते पाऊँ।

सेवक सिख्य हमारे तारियहि।

चुन चुन शत्रु हमारे मारियहि॥ ३८०॥

अपना हाथ देकर मेरी रक्षा करो और सभी शत्रुओं का संहार कर दो। मेरी यह आशा पूर्ण हो कि मुझे सदैव तुम्हारी भक्ति की प्यास बनी रहे॥ ३७९॥ मैं तुम्हें छोड़ अन्य किसी का स्मरण न करूँ और जो इच्छा करूँ तुम्हीं से उसका वरदान प्राप्त करूँ। मेरे सेवकों और सिक्खों को तार लो और चुन-चुनकर हमारे शत्रुओं को मार डालो॥ ३८०॥

आपु हाथ दै मुझै उबरियै।

मरन काल का त्रास निवरियै।

हूजो सदा हमारे पच्छा।

स्त्री असिधुज जू करियहु रच्छा॥ ३८१॥

राखि लेहु मुहि राखनहारे।

साहिब संत सहाइ पियारे।

दीनबंधु दुशटन के हंता।

तुमहो पुरी चतुरदस कंता॥ ३८२॥

अपने कृपाहस्त से मेरा उद्धार करो और मृत्यु के भय का निवारण करो। आप सदैव हमारे पक्ष में रहो और हे श्री असिध्वज जी! आप हमारी रक्षा करो॥ ३८१॥ हे रक्षक! मेरी रक्षा करो। तुम संतों के सहायक और प्रिय हो। तुम दीनों के बंधु और दुष्टों के नाशक हो। तुम चौदह पुरियों के स्वामी हो॥ ३८२॥

काल पाइ ब्रहमा बपु धरा।

काल पाइ शिवजू अवतरा।

काल पाइ करि बिशन प्रकाशा।

सकल काल का किया तमाशा॥ ३८३॥

जवन काल जोगी शिव कीयो।

बेद राज ब्रहमा जू थीयो।

जवन काल सभ लोक सवारा।

नमशकार है ताहि हमारा॥ ३८४॥

काल की परिधि में ही ब्रह्मा शरीर धारण करता है और काल के वशीभूत शिव अवतरित होता है। काल में ही विष्णु प्रकाशित होता है। परन्तु (हे महाकाल!) तुमने सारे कालों का तमाशा बना दिया है अर्थात् तुम्हारे सामने काल भी कुछ नहीं है॥ ३८३॥ तुमने जिस काल में शिव को योगी बनाया और ब्रह्मा को वेद-सम्राट् बनाया तथा सारे लोकों का निर्माण किया उस समय को मेरा प्रणाम है॥ ३८४॥

जवन काल सभ जगत बनायो।

देव दैत जच्छन उपजायो।

आदि अंति एकै अवतारा।

सोई गुरु समझियहु हमारा॥ ३८५॥

नमशकार तिस ही को हमारी।

सकल प्रजा जिन आप सवारी।

सिवकन को सवगुन सुख दीयो।

शत्रुन को पल मो बध कीयो॥ ३८६॥

तुमने जिस काल में विश्व की रचना की और देवों-दैत्यों को बनाया (उसे भी मेरा प्रणाम है)। जो आदि-अन्त में प्रकाशित है वही मेरा गुरु है॥ ३८५॥ मेरा उसी को प्रणाम है जिसने सारी प्रजा को बनाया है। सेवकों को तु मने सौ गुना अधिक सुख दिया है और शत्रुओं का पल भर में वध कर दिया है॥ ३८६॥

घट घट के अंतर की जानत।

भले बुरे की पीर पछानत।

चीटी ते कुंचर असथूला।

सभ पर क्रिपा द्रिशटि करि फूला॥ ३८७॥

संतन दुख पाए ते दुखी।

सुख पाए साधन के सुखी।

एक एक की पीर पछानै।

घट घट के पट पट की जानै॥ ३८८॥

तुम प्रत्येक के हृदय की बात जानते हो और भले-बुरे सबका दुख पहचानते हो। चींटी से लेकर विशालकाय हाथी तक पर तुम प्रसन्नतापूर्वक कृपादृष्टि करते हो॥ ३८७॥ संत दुखी होते हैं तो तुम दुखी होते हो और साधु जब सुख पाते हैं तो तुम भी सुखी होते हो। तुम प्रत्येक की पीड़ा को पहचानते हो और घट-घट की आंतरिक बात भी जानते हो॥ ३८८॥

जब उदकरख करा करतारा।

प्रजा धरत तब देह अपारा।

जब आकरख करत हो कबहूँ।

तुम मै मिलत देह धर सभहूँ॥ ३८९॥

जेते बदन स्त्रिशटि सभ धारै।

आपु आपुनी बूझि उचारै।

तुम सभ ही ते रहत निरालम।

जानत बेद भेद अरु आलम॥ ३९०॥

जब हे कर्ता! तुम उत्कर्षण करते हो अर्थात् फैलते हो तो यह सारी प्रजा आकार ग्रहण करती है। जब तुम आकर्षण-क्रिया अर्थात् विलीनीकरण की क्रिया करते हो तो सभी आकर तुझमें लीन हो जाते हैं॥ ३८९॥ सृष्टि ने जितने भी मुख धारण किए हैं सब अपनी समझ के अनुसार (तुम्हारे गुणों का) उच्चारण करते हैं। तुम सबसे निर्लिप्त और निराले रहते हो, परन्तु फिर भी सारे विश्व का ज्ञान और रहस्य तुम जानते हो॥ ३९०॥

निरंकार निर्बिकार निर्लंभ।

आदि अनील अनादि असंभ।

ताका मूढ़ उचारत भेदा।

जाको भेव न पाबत बेदा॥ ३९१॥

ताकौ करि पाहन अनुमानत।

महाँ मूढ़ कछु भेद न जानत।

महाँदेव कौ कहत सदाशिव।

निरंकार का चीनत नहि भिव॥ ३९२॥

तुम निराकार, निर्विकार और निरालम्ब हो। तुम आदि, अनादि, अनश्वर और किसी के द्वारा प्रकाशित नहीं हो। जिसका रहस्य वेद भी नहीं जान सके हैं मूर्ख लोग उसके रहस्य को जानकर उसके उच्चारण करने का दावा करते हैं॥ ३९१॥ मूर्ख कुछ नहीं समझते और उसे पत्थर मानते हैं। उस महादेव को शिव कहते हैं (और उसको सीमित करते हैं) और उस निराकार प्रभु का रहस्य नहीं पहचानते॥ ३९२॥

आपु आपुनी बुधि है जेती।
बरनत भिंन भिंन तुहि तेती।
तुमरा लखा न जाइ पसारा।
किह बिधि सजा प्रथम संसारा॥ ३९३॥
एकै रूप अनूप सरूपा।
रंक भयो राव कहीं भूपा।
अंडज जेरज सेतज कीनी।
उतभुज खानि बहुरि रचि दीनी॥ ३९४॥

जिसकी जितनी अपनी बुद्धि होती है वह उसी प्रकार से उसका वर्णन करता है। तुम्हारे प्रसार को देखा नहीं जा सकता और यह भी नहीं जाना जा सकता कि तुमने सर्वप्रथम संसार कैसे बनाया॥ ३९३॥ सुन्दर स्वरूपों में तुम एक ही अनुपम हो। तुम ही कहीं राजा हो और कहीं निर्धन हो। तुम ने ही अंडज, जेरज, स्वेदज और उदभिद् नामक चार जीवन-स्रोतों (खानों) की रचना कर दी है॥ ३९४॥

कहूँ फुलि राजा ह्वै बैठा।
कहूँ सिमटि भयो शंकर इकैठा।
सगरी स्त्रिशटि दिखाइ अचंभव।
आदि जुगादि सरूप सुयंभव॥ ३९५॥

अब रच्छा मेरी तुम करो।
सिख्य उबारि असिख्य सँघरो।
दुशट जिते उठवत उतपाता।
सकल मलेछ करो रण घाता॥ ३९६॥

कहीं तुम फूल-फल के रूप में सृष्टि के सम्राट् बने बैठे हो और कहीं सिमटकर शंकर (पत्थर) के रूप में सिमट गए हो। तुम्हारी समस्त सृष्टि एक अचम्भा है, जिसमें तुम आदि-जुगादि से प्रकाशित हो॥ ३९५॥ अब तुम मेरी रक्षा करो और शिष्यों को उबार कर स्वेच्छाचारियों का संहार करो। जितने भी दुष्ट उठकर उत्पात मचाएँ उन सब मलेच्छों का युद्ध में संहार कर दो॥ ३९६॥

जे असिधुज तव शरनी परे।
तिन के दुशट दुखित ह्वै मरे।
पुरख जवन पगु परे तिहारे।
तिन के तुम संकट सभ टारे॥ ३९७॥
जो कलि कौ इक बार धिऐहै।
ता के काल निकटि नहि ऐहै।
रच्छा होइ ताहि सभ काला।
दुशट अरिष्ट टरे ततकाला॥ ३९८॥

हे असिध्वज! जो तुम्हारी शरण में आए हैं, उनके शत्रु दुखी होकर मर जाते हैं। जो भी पुरुष तुम्हारे चरणों में आ पड़ा उसके तुमने समस्त संकट दूर कर दिए हैं॥ ३९७॥ जो कलि (रूपी महाकाल) का एक बार भी स्मरण करेंगे काल उनके पास भी नहीं आ सकेगा अर्थात् वे समय की मार से बचे रहेंगे और सदैव अमर रहेंगे। उसकी सभी कालों में रक्षा होगी और उसके भयानक दुश्मन भी तत्काल टल जाएँगे॥ ३९८॥

क्रिपा द्रिशटि तन जाहि निहरिहो।
ताके ताप तनक महि हरिहो।
रिद्धि सिद्धि घर मों सभ होई।
दुष्ट छाह छवै सकै न कोई॥ ३९९॥
एक बार जिन तुमैं सँभारा।
काल फास ते ताहि उबारा।
जिन नर नाम तिहारो कहा।
दारिद दुशट दोख ते रहा॥ ४००॥

तुमने कृपादृष्टि से जिसे भी देख लिया उसके समस्त ताप क्षण भर में हर लिये जाएँगे। उसके घर में सभी ऋद्धियाँ–सिद्धियाँ होंगी और दुष्टों की छाया भी उसे छू नहीं सकेगी॥ ३९९॥ एक बार भी जिसने तुम्हारा स्मरण कर लिया उसका तो कालपाश से उद्धार हो गया। जिस व्यक्ति ने तुम्हारा नाम स्मरण किया वह दरिद्रता, दुष्टों और रोगों से बच गया॥ ४००॥

खड़गकेत मैं शरनि तिहारी।
आपु हाथ दै लेहु उबारी।
सरब ठौर मो होहु सहाई।
दुशट दोख ते लेहु बचाई॥ ४०१॥

(दशम ग्रन्थ पृष्ठ १३८६-८८)

हे खड़गकेतु! मैं तुम्हारी शरण में हूँ, तुम स्वयं अपने हाथों से मेरा उद्धार करो। सभी स्थानों पर मेरी रक्षा करो और दुष्ट दोषों से मुझे बचा लो॥ ४०१॥

॥ सवइया ॥

पाँइ गहे जब ते तुमरे तब ते कोऊ आँख तरे नही आन्यो।
राम रहीम पुरान कुरान अनेक कहैं मत एक न मान्यो।
सिंम्रिति शासत्र बेद सभै बहु भेद कहै हम एक न जान्यो।
स्त्री असिपान क्रिपा तुमरी करि
मै न कह्यो सभ तोहि बखान्यो॥

॥ दोहरा ॥

सगल द्वार कउ छाडि कै गह्यो तुहारो द्वार।
बाँहि गहे की लाज असि गोबिंद दास तुहार॥

(दशम ग्रन्थ, पृष्ठ–२५४)

॥ सवैया ॥ जब से मैंने तुम्हारे चरण पकड़े हैं, तब से अब मेरी नजर में कोई ठहरता नहीं अर्थात् मुझे अन्य कोई भी अच्छा नहीं लगता। पुराण और कुरान तुम्हें राम और रहीम आदि अनेकों नामों और कथाओं के माध्यम से तुम्हें जानने की बात करते हैं, परन्तु मैं इनमें से किसी के भी मत को नहीं मानता। स्मृतियाँ, शास्त्र, वेद तुम्हारे अनेकों भेदों का वर्णन करते हैं, परन्तु मैं एक भी भेद से सहमत नहीं हूँ। हे खड्गधारी परमात्मन्! यह सब तुम्हारी कृपा से ही वर्णन हुआ है। मुझमें भला इतना (लिख जाने का) सामर्थ्य कहाँ (कि मैं इतना विशाल वर्णन कर सकूँ) ॥ दोहा ॥ सारे द्वारों को छोड़कर मैंने, हे प्रभु! केवल तुम्हारा द्वार पकड़ा है। हे परमात्मन्! तुमने मेरी बाँह पकड़ी है। यह गोविंद तुम्हारा दास है; बाँह पकड़ने की लाज निभाना।

॥ रामकली महला ३ अनंदु ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरु मै पाइआ।
सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ।
राग रतन परवार परीआ सबद गावण आईआ।
सबदो त गावहु हरी केरा मनि जिनी वसाइआ।
कहै नानकु अनंदु होआ सतिगुरु मै पाइआ॥ १॥

हे भाई, मुझे सच्चा सतिगुरु प्राप्त हुआ है, इसलिए मैं आनन्द-मग्न हूँ। सहजभाव से प्रेम में रत रहते हुए मैंने सतिगुरु को प्राप्त किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे मन में खुशियों के खजाने खुल गये हैं। रत्नों-जैसे अमूल्य राग-रागनियाँ तथा उन्हें गानेवाली परियाँ खुशी के गीत गाने मेरे मन में आयी हैं, जिससे मन में परमात्मा का आभास होने लगा है। जिन्होंने मन में हरि को बसा लिया है, वह सब आकर हमारे संग प्रभु-प्रशस्ति के गीत गाएँ। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु की प्राप्ति मेरे लिए परमानन्द का कारण बनी है।

ए मन मेरिआ तू सदा रहु हरि नाले।
हरि नालि रहु तू मंन मेरे दूख सभि विसारणा।
अंगीकारु ओहु करे तेरा कारज सभि सवारणा।
सभना गला समरथु सुआमी सो किउ मनहु विसारे।
कहै नानकु मंन मेरे सदा रहु हरि नाले॥ २॥

ऐ मेरे मन, तू सदा हरि से प्रीत लगाए रख, क्योंकि उसके संग प्रीत लगाने से वह तेरे सब दुःखों को भुला देगा। वह सब प्रकार से तेरी सहायता करता है और तेरे कार्यों को सँवारता है। वह मालिक सब प्रकार से समर्थ है, तू उसे क्यों मन से विसारता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मेरे मन, तू सदा हरि के साथ बना रह।

साचे साहिबा किआ नाही घरि तैरै।
घरि त तैरै सभु किछु है जिसु देहि सु पावए।
सदा सिफति सलाह तेरी नामु मनि वसावए।
नामु जिन कै मनि वसिआ वाजे सबद घनेरे।
कहै नानकु सचे साहिब किआ नाही घरि तैरै॥ ३॥

हे मेरे सच्चे स्वामी, तुम्हारे घर क्या नहीं है ? तुम्हारे घर तो सब कुछ है। किन्तु जिसे तुम देते हो वही पा सकता है। जो जीव सदा तुम्हारी कीर्तिगान करता है और मन में तुम्हारे नाम को बसाता है, उनके मन में नाम के बसने के साथ-साथ अनेक आध्यात्मिक नाद बजने लगते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मेरे सच्चे मालिक हमारे घर सब कुछ है, जिसे चाहो उसे दो।

साचा नामु मेरा आधारो।
साचु नामु अधारु मेरा जिनि भुखा सभि गवाईआ।
करि सांति सुख मनि आइ वसिआ
जिनि इछा सभि पुजाईआ।
सदा कुरबाणु कीता गुरु विटहु
जिस दीआ एहि वडिआईआ।
कहै नानकु सुणहु संतहु सबदि धरहु पिआरो।
साचा नामु मेरा आधारो॥ ४॥

प्रभु का सच्चा नाम ही मेरा सहारा है। यह सच्चा हरि-नाम ही मेरा ऐसा सहारा है, जिसने मेरी सब तृष्णाओं को दूर कर दिया है। इसके मन में आने से मुझे शान्ति और सुख प्राप्त हुआ है और मेरी सब आकांक्षाएँ पूर्ण हो गयी हैं। मैं अपने गुरु पर से सदा क़ुर्बान जाता हूँ, जिसके कारण यह सब प्रतिष्ठा मुझे मिली है। गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, गुरु के शब्द से प्यार करो और सच्चे प्रभु के नाम का सहारा लो।

वाजे पंच सबद तितु घरि सभागै।
घरि सभागै सबद वाजे कला जितु घरि धारीआ।
पंच दूत तुधु वसि कीते कालु कंटकु मारिआ।
धुरि करमि पाइआ तुधु जिन कउ सि नामि हरि कै लागे।
कहै नानकु तह सुखु होआ तितु घरि अनहद वाजे ॥५॥

हे प्रभु, मेरे मन में सौभाग्यपूर्वक पाँचों शब्दों का संगीत जाग उठा है। जहाँ तुमने अपनी कृपा प्रदान की है, वहीं मन भाग्यशाली खुशियों से भर गया है। तुमने काम-क्रोधादि पाँचों दूतों को वश में कर लिया है और काल का काँटा दूर किया है। तुम्हारे कारण जिनके भाग्य में हरि-नाम शुरू से ही डाल दिया गया है, हे हरि, वे तुम्हारे नाम का नित्य गान करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके हृदय में अमृत-वाणी की ध्वनि जाग्रत हुई, उसे परमसुख की प्राप्ति हुई है।

अनदु सुणहु वडभागीहो सगल मनोरथ पूरे।
पारब्रहमु प्रभु पाइआ उतरे सगल विसूरे।
दूख रोग संताप उतरे सुणी सची बाणी।
संत साजन भए सरसे पूरे गुर ते जाणी।
सुणते पुनीत कहते पवितु सतिगुरु रहिआ भरपूरे।
बिनवंति नानकु गुर चरण लागे बाजे अनहद तूरे ॥४०॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९१७-९२२)

हे भाग्यशाली जीवो, 'अनंदु' वाणी को सुनो, इससे तुम्हारे सब मनोरथ पूरे होते हैं; परब्रह्म प्रभु की प्राप्ति होती है और सब दुःख-संताप दूर हो जाते हैं। सच्ची वाणी के श्रवण से त्रैताप का नाश होता है। यह सत्य-रूप वाणी गुरु से मिलती है, इससे सन्त-महात्मा उल्लास में विकसित हो जाते हैं। इस वाणी का उच्चारण करनेवाले पवित्र होते हैं,

सुननेवाले भी पवित्र हो जाते हैं और उन्हें सब जगह वाहिगुरु व्याप्त दीख पड़ता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि जो जीव गुरु की शरण लेते हैं, उन्हें पूर्ण आनन्द प्राप्त होता है (उनके हृदय में अनाहत नाद के बाजे बजने लगते हैं)।

॥ मुंदावणी महला ५ ॥

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो।
अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो।
जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो।
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरिधारो।
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो॥ १ ॥

एक थाल में सत्य, सन्तोष और ज्ञान नाम की तीन वस्तुएँ पड़ी हैं। (उन सबको मिलाकर भोजन बनाने के लिए पानी की जगह) अमृत–समान हरिनाम डाला गया है, जिसका सबको आसरा होता है। (जैसे जल बिना जीवन नहीं रहता, हरिनाम के बिना भी आध्यात्मिक जीवन नहीं होता।) (इस प्रकार तैयार किए गए भोजन को) यदि कोई खाता है, भोगता है, तो उसकी गति हो जाती है, उद्धार होता है। (अन्य भोजनों के बिना गुजर चल सकती है, किन्तु) यह भोजन (वस्तु) छोड़ा नहीं जा सकता, नित्य हृदय में इसको धारण किया जाता है (सदैव इसी का भोजन किया जाता है)। इस अंधकारमय संसार को, हे प्रभु, तुम्हारे ही चरणों से लगकर तरा जा सकता है (उक्त भोजन के भोग से ही मुक्ति होती है), गुरु नानक कहते हैं, तब सब ओर ब्रह्म का आलोक प्रकट होता है। (यह भोजन जिस थाल में बना है, वह कौन सा थाल है? उत्तर है—गुरुवाणी का यह ग्रंथ, जिसे पढ़ने और मनन करने से सत्य, सन्तोष, ज्ञान और नामामृत प्राप्त होता है।)।

॥ सलोक महला ५ ॥

तेरा कीता जातो नाही मैनो जोगु कीतोई।
मै निरगुणिआरे को गुणु नाही आपे तरसु पइओई।
तरसु पइआ मिहरामति होई सतिगुरु सजणु मिलिआ।
नानक नामु मिलै तां जीवां तनु मनु थीवै हरिआ॥ १ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १४२९)

तुम्हारा किया पता नहीं चलता, (किन्तु) मुझे तुम्हीं ने सामर्थ्य दिया है, मैं तुम्हारी ही शक्ति से कुछ कर सका हूँ (ग्रंथ-रचना की है)। मुझ निर्गुणी (गुणहीन) में कोई गुण नहीं, तुमने स्वयं तरस खाकर, दया-वश (मुझसे करवा लिया है)। तुम्हारी दया हुई, अत्यन्त कृपा से मुझे सच्चा गुरु मिल गया। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम में ही मेरे प्राण हैं, उसी से मेरा तन-मन हरा हो जाता है (मुझमें कोई कर्तृ-शक्ति पैदा होती है)।

॥ पउड़ी ॥

तिथै तू समरथु जिथै कोइ नाहि।
ओथै तेरी रख अगनी उदर माहि।
सुणि कै जम के दूत नाइ तेरै छडि जाहि।
भउजलु बिखमु असगाहु गुर सबदी पारि पाहि।
जिन कउ लगी पिआस अंम्रितु सेइ खाहि।
कलि महि एहो पुंनु गुण गोविंद गाहि।
सभसै नो किरपालु सम्हाले साहि साहि।
बिरथा कोइ न जाइ जि आवै तुधु आहि॥ ९ ॥

जहाँ किसी का वश नहीं चलता, वहाँ, हे प्रभु, तुम समर्थ हो। मातृ-गर्भ की अग्नि में भी तुम्हीं रक्षा करते हो। तुम्हारा नाम सुनकर तो

यमदूत भी छोड़ जाते हैं। यह विषम संसार-सागर असीम है, केवल गुरु के शब्दों से ही इसका पार पाया जा सकता है। जिन्हें (तुम्हारे नाम की) लालसा है, वे ही अमृत-फल खाते हैं। कलियुग में प्रभु का गुण गाना ही एकमात्र पुण्य है। ऐसे सब जीवों पर तुम्हारी कृपा होती है, श्वास-श्वास तुम उनकी सँभाल करते हो। जो भी श्रद्धापूर्वक तुम्हारी शरण में आता है, निष्फल नहीं जाता।

॥ सलोकु महला ५ ॥

अंतरि गुरु आराधणा जिहवा जपि गुर नाउ।
नेत्री सतिगुरु पेखणा स्रवणी सुनणा गुर नाउ।
सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईऐ ठाउ।
कहु नानक किरपा करे जिसनो एह वथु देइ।
जग महि उतम काढीअहि विरले केई केइ॥ १॥

॥ महला ५ ॥

रखे रखणहारि आपि उबारिअनु।
गुर की पैरी पाइ काज सवारिअनु।
होआ आपि दइआलु मनहु न विसारिअनु।
साध जना कै संगि भवजलु तारिअनु।
साकत निंदक दुसट खिन माहि बिदारिअनु।
तिसु साहिब की टेक नानक मनै माहि।
जिसु सिमरत सुखु होइ सगले दूख जाहि॥ २॥

यदि अपने गुरु के प्रेम में रँगा जाए, तो प्रभु की सेवा में स्थान मिलता है। मन में गुरु को स्मरण करना, जिह्वा से गुरु का नाम जपना, आँखों से गुरु को देखना, कानों से गुरु का नाम सुनना—ये देन हे नानक प्रभु ही उसको देता है, जिस पर कृपा करता है; ऐसे व्यक्ति

जगत में श्रेष्ठ कहलाते हैं, (लेकिन) ऐसे कुछ विरले ही हैं॥ १॥
म.५॥ रक्षक प्रभु ने जिन व्यक्तियों की मदद की, उन्हें प्रभु ने आप बचा लिया है, उन्हें गुरु के चरणों में जगह देकर उनके सब कार्य सँवार दिए हैं। जिन पर प्रभु आप दयालु है, उन्हें उस प्रभु ने भुलाया नहीं है और उन्हें गुरमुखों की संगति में रखकर संसार-समुद्र पार करा दिया। जो उसके चरणों से अलग हैं, जो निन्दा में संलग्न हैं, जो दुराचारी हैं, उन्हें एक पल में ही उस प्रभु ने समाप्त कर दिया है। नानक के मन में भी उस मालिक-प्रभु का आसरा है, जिसे स्मरण करने से सुख मिलता है और सारे दुख दूर हो जाते हैं॥ २॥

ੴ

कीरतन सोहिला

शयनकालीन वन्दना

['सोहिला' वाणी का नाम है; इस वाणी का पाठ सिक्ख-मतानुसार रात को सोने के समय किया जाता है। 'सोहिला' का शाब्दिक अर्थ है 'यश', अर्थात् इस वाणी में परमात्मा का यशोगान किया गया है।]

कीरतन सोहिला

॥ सोहिला रागु गउड़ी दीपकी महला १ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जै घरि कीरति आखीऐ करते का होइ बीचारो।
तितु घरि गावहु सोहिला सिवरिहु सिरजणहारो॥ १ ॥
तुम गावहु मेरे निरभउ का सोहिला।
हउ वारी जितु सोहिलै सदा सुखु होइ॥ १ ॥ रहाउ॥
नित नित जीअड़े समालीअनि देखैगा देवणहारु।
तेरे दानै कीमति ना पवै तिसु दाते कवणु सुमारु॥ २ ॥
संबति साहा लिखिआ मिलि करि पावहु तेलु।
देहु सजण असीसड़ीआ जिउ होवै साहिब सिउ मेलु॥ ३ ॥
घरि घरि एहो पाहुचा सदड़े नित पवंनि।
सदण हारा सिमरीऐ नानक से दिह आवंनि॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १२)

जिस घर (मन:स्थिति) में परमात्मा का गुणगान होता है, उसीमें रहकर (उसी मानसिक स्थिति में) तुम भी प्रभु का भजन करो। (मन को उसी संयत स्थिति में रखते हुए) उसी घर में परमेश्वर का यश गाओ और उस सृष्टा का स्मरण करो। (हे भाई) तुम उस निर्भय परमात्मा का यश-गान करो (और निर्भय हो जाओ)। (एक जनश्रुति के अनुसार एक बार सिक्खों ने गुरु अर्जुनदेव जी से प्रार्थना की, कि वे व्यापार करने के लिए अनेक दुर्गम और भयंकर स्थानों पर जाते हैं, उन्हें कोई कवच-मन्त्र प्रदान किया जाय, जिसके जाप से उनकी रक्षा हो। गुरुजी ने उन्हें 'सोहिला' का पाठ करने का आदेश दिया और इसे निर्भयतादायी मन्त्र की संज्ञा दी।) मैं उस प्रभु पर बलिहार हूँ जिसका

गुण-गान करने से नित्य सुख की उपलब्धि होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो अकाल-पुरुष प्रभु नित्य-नित्य जीवों की संभाल कर रहा है, वह तुम पर भी कृपा करेगा (या, यदि तुम नित्यप्रति परमात्मा का स्मरण करो तो वह दाता तुम्हें भी देखेगा अर्थात् तुम पर दया करेगा) तुम उस दाता (देवणुहारु) के दान का मूल्य नहीं डाल सकते, उसकी देन का अन्त ही नहीं॥ २ ॥ अन्त (मृत्यु) का दिन पूर्व-निश्चित है, हे सज्जनो, मिलकर शगुन मनाओ (तेल डालो) और ऐसी शुभाशीष दो कि जीव का प्रभु से संयोग हो सके। (यहाँ गुरुजी ने विवाह का बिम्ब प्रस्तुत किया है। मृत्यु दुल्हिन से विवाह का दिन (साहा) निश्चित है। पंजाब में दुल्हिन के प्रथम गृह-प्रवेश के समय द्वार पर तेल डाला जाता है, दुल्हिन को पति-मिलन के आशीर्वाद-युक्त गीत गाये जाते हैं) ॥ ३ ॥ घर-घर में निमन्त्रण दिया जा रहा है (अर्थात् पास-पड़ोस में नित्य मौतें हो रही हैं), अत: हमें निमन्त्रण देनेवाले (परमात्मा) का स्मरण करना चाहिए, क्योंकि हे नानक! वह निमन्त्रण का दिन (मृत्यु) हम पर भी आने वाला है ॥ ४ ॥

॥ रागु आसा महला १ ॥

छिअ घर छिअ गुर छिअ उपदेस।

गुरु गुरु एको वेस अनेक ॥ १ ॥

बाबा जै घरि करते कीरति होइ।

सो घरु राखु वडाई तोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

विसुए चसिआ घड़ीआ पहरा थिती वारी माहु होआ।

सूरजु एको रुति अनेक।

नानक करते के केते वेस ॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १२)

छ: दर्शन-शास्त्रों के छ: लेखक हैं और उनके छ: सिद्धान्त हैं (छ: शास्त्र : सांख्य, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, योग और वेदांत। छ:

लेखक : कपिल, गौतम, कणाद, जैमिनी, पतंजलि और व्यास) किन्तु इन छः के ऊपर भी नियंता एक प्रभु ही है। उसीने अपने भावों को भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रकाशित किया है॥ १ ॥ हे भाई (बाबा) जिस शास्त्र (घर) में सृष्टा की प्रशस्ति हो, उसी के पाठ में तुम्हारा कल्याण है॥ १ ॥ रहाउ ॥ (यह एक से अनेक मत क्यों हुए, इसका दृष्टांत काल-विभाजन और सूर्य के गिर्द धरती की गति से देते हैं) जैसे विसुए, चसे, घड़ीयों, पहरों, तिथियों, वारों के मेल से महीने बनते जाते हैं, फिर भी सूर्य एक स्थिर सत्य है, 'ऋतुएँ' बदलती हैं, वैसे ही हे नानक, सृष्टा एक ही है, उसके अनेक अंग, अनेक पहलू दीख पड़ते हैं॥ २ ॥

॥ रागु धनासरी महला १ ॥

गगनमै थालु रवि चंदु दीपक बने
तारिका मंडल जनक मोती।
धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे
सगल बनराइ फूलंत जोती॥ १ ॥
कैसी आरती होइ। भवखंडना तेरी आरती।
अनहता सबद वाजंत भेरी॥ १ ॥ रहाउ॥
सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि
कउ सहस मूरति नना एक तोही।
सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु
सहस तव गंध इव चलत मोही॥ २ ॥
सभ महि जोति जोति है सोइ।
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ।

---

* [टिप्पणी : विसुआ = १५ बार आँख की फड़कन। चसा = १५ विसुए। पल = ३० चसे। घड़ी = ६० पल। पहर = ८ घड़ियाँ। रात-दिन = ८ पहर। तिथियाँ = १५, एकम् से अमावस या पूर्णिमा तक। वार = ७, रविवार से शनिवार तक। ऋतुएँ = ६।]

गुरसाखी जोति परगटु होइ।
जो तिसु भावै सु आरती होइ॥ ३॥
हरि चरण कवल मकरंद लोभित मनो
अनदिनो मोहि आही पिआसा।
क्रिपा जलु देहि नानक सारिंग
कउ होइ जा ते तेरै नाइ वासा॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३)

हे प्रभु, तुम्हारे पूजन के लिए गगन के थाल में चन्द्र और सूर्य के दो दीप जले हैं और समूचा तारामण्डल मानों थाल में मोती भरे हैं। स्वयं मलयगिरि के चन्दन की गन्ध धूप की सुगन्धि है, पवन चँवर झुला रहा है, तथा सृष्टि की समूची वनस्पति ही, हे परमात्मा, तुम्हारी आराधना के पुष्प हैं। तुम्हारी यह प्राकृतिक आरती नित्य और अति मनोहर है। हे भवखण्डन (आवागमन का नाश करनेवाले) प्रभु, यही तेरी मनमोहक आरती है। तुम्हारे सब जीवों के भीतर बज रहा अनाहत शब्द ही मन्दिर की भेरी है॥ १॥ रहाउ॥ (जिस प्रभु की स्तुति में आरसी गाई जा रही है, वह सब जीवों के भीतर निवास करता है, इसलिये हे परमेश्वर!) तुम्हारी असंख्य (सहस्रों) आँखें हैं (अर्थात् सब जीव तुम्हारा ही रूप हैं, इसलिये उनकी आँखें तुम्हारी ही तो हैं), किन्तु तुम्हारी कोई भी आँख नहीं। इसी प्रकार तुम्हारी सहस्रों शक्लें हैं, किन्तु फिर भी तुम्हारी कोई शक्ल नहीं (अर्थात् तुम निर्गुण, निराकार हो)। तुम्हारे असंख्य विमल चरण हैं, निर्गुण रूप में कोई चरण नहीं। सगुण रूप में प्रकट होने पर (इन सब जीवों के रूप में) तुम्हारी असंख्य नासिकाएँ गन्ध लेती हैं, अन्यथा निराकार रूप में तुम्हारी कोई नासिका नहीं। यह तुम्हारा विचित्र कौतुक है, जिसे देख-देखकर मेरा मन मोहित हो रहा है॥ २॥ सब जीवों में उस परमात्मा की ज्योति का ही आलोक है, सब उसी से सिंचित है; वह पावन, परम आलोक गुरु की कृपा और शिक्षा से ही प्रकट होता है। उस परम ज्योति को जो भी

स्वीकार्य होता है, वही पूजा बन जाती है॥ ३॥ हे परमात्मा, तुम्हारे चरण-कमलों के मकरंद का प्यार मुझे रात-दिन रहता है। गुरु नानकदेव कहते हैं कि हे कृपानिधि, मुझ पपीहे को अपनी कृपा की स्वाति-बूँद प्रदानकर, जिससे मैं परमात्मा के नाम में ही लीन हो जाऊँ॥ ४॥

॥ रागु गउड़ी पूरबी महला ४॥

कामि करोधि नगरु बहु भरिआ
मिलि साधू खंडल खंडा हे।
पूरबि लिखत लिखे गुरु पाइआ
मनि हरि लिव मंडल मंडा हे॥ १॥
करि साधू अंजुली पुनु वडा हे।
करि डंडउत पुनु वडा हे॥ १॥ रहाउ॥
साकत हरिरस सादु न जाणिआ
तिन अंतरि हउमै कंडा हे।
जिउ जिउ चलहि चुभै दुखु पावहि
जमकालु सहहि सिरि डंडा हे॥२॥
हरिजन हरि हरि नामि समाणे
दुखु जनम मरण भव खंडा हे।
अबिनासी पुरखु पाइआ परमेसरु
बहु सोभ खंड ब्रहमंडा हे॥ ३॥
हम गरीब मसकीन प्रभ तेरे हरि
राखु राखु वड वडा हे।
जन नानक नामु अधारु टेक है
हरिनामे ही सुखु मंडा हे॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३)

शरीर रूपी नगर में काम-क्रोधादि विकार भरे थे, किन्तु गुरु के सम्पर्क में आने से (उन सब विकारों का) नाश हो गया है। हे भाई, जिस भाग्यशाली जीव ने कर्मालेखानुसार गुरु पा लिया है, उसका मन हरिनाम में ही मंडित हो गया है॥ १ ॥ गुरु को प्रणाम करो, गुरु की साष्टांग वन्दना करो, यह महान् पुण्य है॥ १ ॥ रहाउ॥ मायावी जीव ('साकत' शब्द शाक्त-शक्ति के उपासकों के लिए प्रयुक्त होता था, किन्तु शक्ति को मायारूप मानने के कारण अब इस शब्द का अर्थ माया के प्रभाव में रहनेवाला है) हरि-रस के स्वाद से वंचित हैं, उनके मन में सदैव अहम् का काँटा रहता है। वे ज्यों-ज्यों माया के प्रभाव में चलते हैं, वह काँटा उन्हें सालता है और वे यमदूतों द्वारा दण्डित होते हैं॥ २॥ किन्तु जो हरि-जन हैं अर्थात् जो माया की अपेक्षा परमपिता प्रभु की शरण लेते हैं, उसके नाम में लीन हैं, उनके आवागमन के कष्ट नाश हो जाते हैं। वे जीव उस अविनाशी परमेश्वर को पाकर खण्डों-ब्रह्मण्डों में चिर-शोभा अर्जित कर लेते हैं॥ ३ ॥ हम बेकस, बेसहारा जीव, तुम्हारी शरण में हैं, कृपा करके, हे परम, हमारी रक्षा करो। गुरु नानकदेव जी कहते हैं, जिस जीव को तुम्हारे ही नाम का आसरा है, उसी का अवलम्ब है, वह परमसुख को प्राप्त होता है॥ ४॥

॥ रागु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥

करउ बेनंती सुणहु मेरे मीता संत टहल की बेला।
ईहा खाटि चलहु हरिलाहा आगै बसनु सुहेला॥ १ ॥
अउध घटै दिनसु रैणा रे।
मन गुर मिलि काज सवारे॥ १ ॥ रहाउ॥
इहु संसारु बिकारु संसे महि तरिओ ब्रहमगिआनी।
जिसहि जगाइ पीआवै इहु रसु
अकथ कथा तिनि जानी॥ २॥
जा कउ आए सोई बिहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा।

निजघरि महलु पावहु सुख सहजे
बहुरि न होइगो फेरा॥ ३॥
अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे।
नानक दासु इहै सुखु मागै
मो कउ करि संतन की धूरे॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३)

हे मित्रो, सुनो, मैं विनतीपूर्वक कहता हूँ कि (यह मनुष्य शरीर) सच्चे सन्तों (सद्गुरु) की सेवा की बेला है। (अतः शरीर रहते सद्गुरु की सेवा अर्थात् उसके आदेशानुसार नाम-स्मरणादि के द्वारा) इस संसार में रहते हरि-नाम की कमाई कर लो, तो परलोकवास सरल (सुहेला) हो सकता है॥ १॥ (बीतते हुए) रात-दिन आयु घट रही है; मन को गुरु के उपदेशों में लीनकर अपना भविष्य सँवार लो॥ १॥ रहाउ॥ यह संसार विषय-विकारों और भ्रम-संशयों से भरपूर है, इसे कोई ब्रह्मज्ञानी ही पार कर सकता है। ऐसा ब्रह्मज्ञानी (सद्गुरु) ही मोह-निद्रा में सोए जीव को जगाकर हरिनाम का रस पिलाता है, वही समूची रहस्यमयी कथा को जानता है (परमात्मा के रहस्य वही जानता है।)॥ २॥ अतः, हे जीवो, जिसलिए संसार में आए हो, उसी हरिनाम के सौदे का व्यापार करो। गुरु के आश्रय हरि को मन में बसाओ। (ऐसा करने से) अपने शरीर में ही तुम परम-पिता प्रभु को पा जाओगे, अखण्ड सुख का भोग करोगे और आवागमन से (सदा के लिए) मुक्त हो जाओगे॥ ३॥ हे अन्तर्यामी, कर्त्तार, मेरे मन की श्रद्धा को पूर्णता प्रदान करो, तुम्हारा दास (नानक) तुमसे यही वर चाहता है कि उसे निरन्तर सन्तजनों की चरण-धूलि प्राप्त हो! (अर्थात् साधु-संगति में जीव लीन रह सके)॥ ४॥

ੴ

सुखमनी

[मनोबल बढ़ाकर मानसिक चिन्ताओं से मुक्त कराने वाली वाणी]

सुखमनी के वाणीकार श्री गुरु अर्जुनदेव जी श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के सम्पादक थे जो मध्यकालीन सन्तों की अमूल्य वाणी का एक अपूर्व संकलन है। युग-बोध और भावात्मक एकता का सूत्र थामकर सांसारिक जीवों के लिए जीवन का सही मूल्य आँकने का सफल प्रयास इन्होंने किया था। अर्जुनदेव जी परिस्थितियों के भुक्तभोगी और अध्यात्म अनुभवी महापुरुष थे इसीलिए उनकी वाणी मानवता में प्रेम, सरल एवं शुद्ध आचरण एवं प्रभु इच्छा में विश्वास की प्रचारक है। जब संस्कृति ह्रास की ओर जा रही थी और भारतीय प्रज्ञा कुण्ठित हो रही थी ऐसे समय में नीर-क्षीर विवेचन की योग्यता वाले इस महापुरुष ने सुखमनी की रचना देकर मानवता का अभूतपूर्व उपकार किया है। गुरु परम्परा की यह रचना किसी व्यक्ति विशेष के रूप में न रहकर शब्दरूप में ही सत्यान्वेषियों का मार्ग दर्शन करती रहेगी।

सुखमनी का माहात्म्य

पंचम गुरु श्री अर्जुन देव जी के समक्ष जब गुरु सिखों के मनोभाव को लेकर बाबा बुद्ढा जी ने उनसे प्रार्थना की कि, गुरुदेव! किसी ऐसी सरलतम वाणी की रचना करो जिसके पाठ से मानव जाति का कल्याण हो। जो श्वास हम प्रतिदिन (चौबीस हजार श्वास-चौबीस घंटों में) लेते हैं; वह सफल हो जायें। श्री गुरु अर्जुनदेव जी ने विनती स्वीकार करके श्री अमृतसर के रामसर (सरोवर) के निकट बैठकर सुखमनी साहिब का उच्चारण किया और संगतों से कहा कि जो भी मनुष्य प्रात:काल स्नान करके शुद्ध मनोभाव से नित्यप्रति मन लगाकर तथा अर्थ एवं भाव समझकर पढ़ेगा तो यह वाणी उसका कल्याण अवश्य करेगी। गुरुसिख चाहे तो अन्य किसी वाणी से वंचित रह जाये परन्तु सुखमनी के पाठ से वंचित न रहे।

'सुखमनी' की वाणी में चौबीस हजार अक्षर हैं। हम प्रतिदिन चौबीस हजार श्वास लेते हैं। अत: इन चौबीस हजार श्वासों की सफलता के निमित्त सुखमनी का एक पाठ है। इक्यावन पाठ सुखमनी के कर लेने पर एक बार के सम्पूर्ण श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के पाठ का फल प्राप्त होता है। गुरु सेवक की या भक्त की कोई भी मनोभिलाषा हो वह सुखमनी के इक्यावन पाठ कर लेने पर अवश्य पूरी होती है।

श्री सुखमनी के पाठ को पढ़ने या सुनने से मानसिक व शारीरिक रोग दूर होते हैं। मानसिक रोगों से छुटकारे के लिए ध्यान की अनेकों विधियाँ बताई गई हैं। अत: सुखमनी के पाठ द्वारा ध्यान-योग से जुड़ने के कारण मनुष्य की मानसिक चिंताओं से मुक्ति होती है। भयानक शारीरिक व्याधियों एवं आर्थिक चिंताओं से मुक्ति के लिए भी सुखमनी

का पाठ अमृत तुल्य है। चूँकि सुखमनी के पाठ से साधक का मनोबल बढ़ता है; इस कारण से टोना-टोटका-ताबीज का प्रभाव भी पाठ करने वाले पर नहीं होता है। कलियुग में अनेकानेक चिंताएँ हैं परन्तु सुखमनी के पाठ करने वाले पर कलियुग का प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि साधक का मन ईश्वरोन्मुख होकर सांसारिक विषय वस्तुओं में नहीं रमता। जब तक मनुष्य सांसारिक भोगों में लिप्त है तभी तक दुःख है और जब वह किसी उपभोग के लिए लालायित नहीं होगा तो वह चिंतित या दुःखी भी नहीं होता। यही भाव सुखमनी का मूल-भाव है, जो मनुष्य को मोक्ष की ओर ले जाता है। जब मनुष्य की इच्छायें ही समाप्त हो जायें तो उसके पुनर्जन्म का कारण ही नहीं रह जाता (मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु ही जन्मता-मरता रहता है)। यही मनुष्य की उच्चतम अवस्था है जिसे वह धर्म के द्वारा प्राप्त कर सकता है। जो भी प्राणी सुखमनी का पाठ करेगा वह भवसागर से पार होगा—यही पाठ की मूल धारणा है।

सुखमनी के पाठ की ही एक पंक्ति में—'प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि' अर्थात् प्रभु को आठों पहर सिमरने से ही ऋद्धि, सिद्धि और नौ निधियों की प्राप्ति है।

सुख + मनी = मन को सुख देने वाली वाणी (मन जब सांसारिक वासनाओं से हटकर प्रभु चरणों में लीन होता है तभी सच्चा सुख अनुभव करता है)।

सुख + मनी = यह मान्यता मानकर आया कि नाम जपूँगा। यह वाणी नाम जपने की प्रेरणा देती है।

सुख + मनी = इस वाणी को मानकर पाठ करने से सुख ही सुख प्राप्त होते हैं।

सुख + मनी = जैसे सर्प के सिर पर मणि प्रकाशमान रहती है वैसे ही यह समस्त सुखों का प्रकाश करने वाली वाणी है।

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु।
भगत जना कै मन बिस्राम॥

सुखमनी प्रभु सुमिरन का ऐसा अमृत है कि पाठ करने वाले भक्त का मन विश्रांति को प्राप्त करता है।

सुखमनी पढ़िए दिन-राती।
यह है सब सुखों की दाती॥

सुखमनी का पाठ करके जिन-जिन व्यक्तियों ने अपार सुख प्राप्त किये उनके बारे में अनेकों कथाएँ प्रचलित हैं लेकिन हमारा मत है कि सुखमनी के पाठ के माध्यम से भौतिक उपलब्धियों व सुखों को गिनाना इसकी महत्ता को कम करना होगा क्योंकि वास्तविक सुख तो मानसिक सुख है जिसके आगे अन्य सभी सांसारिक प्राप्तियाँ तुच्छ हैं। अक्षुण्ण एवं परम सुख प्रभु नाम में लीन संत ही जान सकता है जिसको व्यक्त कर पाना या उस सुख का मानव बुद्धि से आकलन करना असम्भव है। स्वयं सुखमनी में प्रभु के सुमिरन की महानता का ही पुनः-पुनः उद्घोष है। 'दीन दरद दुख भंजना' रूप यह सुखमनी 'पूरा प्रभु आराधिया पूरा जाका नाउ नानक पूरा पाइया पूरे के गुण गाउ' अर्थात् पूर्ण प्रभु को स्मरण करने से ही पूर्णता मिलती है। इसलिए इस मनुष्य को भी पूरे के गुण गाकर पूर्णता की ओर जाने की प्रेरणा देती है। अतः आओ, हम सब मिलकर ध्यानयोग से मनोबल बढ़ाकर मानसिक चिन्ताओं को दूर करने वाली वाणी का अध्ययन करें।

ੴ

सुखमनी

गउड़ी सुखमनी महला ॥ ५ ॥

✣ सलोकु ✣

१ ओंकार सतिगुर प्रसादि

आदि गुरए नमह
जुगादि गुरए नमह।
सतिगुरए नमह
श्री गुरदेवए नमह।

मेरी सबसे बड़े (अकालपुरुष) को नमस्कार है जो (सब का) आदि है और जो युगों के आदि से है। सतिगुरु को मेरी नमस्कार है, श्रीगुरुदेवजी को नमस्कार है।

✣ असटपदी ✣

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ।
कलि कलेस तन माहि मिटावउ।
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै।
नामु जपत अगनत अनेकै।
बेद पुरान सिंम्रिति सुधाख्यर।
कीने राम नाम इक आख्यर।
किनका एक जिसु जीअ बसावै।
ता की महिमा गनी न आवै।
कांखी एकै दरस तुहारो।
नानक उन संगि मोहि उधारो।
सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु।
भगत जना कै मनि बिस्राम।रहाउ।

मैं (अकालपुरुष का नाम) स्मरण करूँ और स्मरण कर सुख प्राप्त करूँ; शरीर में (जो) दुःख-विकार (हैं, उन्हें) मिटा लूँ। जिस एक जगत्-पालक (हरि) का नाम अनेकों तथा अनगिनत (जीव) जपते हैं, मैं (भी उसे) स्मरण करूँ। वेद, पुराण तथा स्मृतियों ने एक अकालपुरुष के नाम को ही सबसे पवित्र नाम माना है। जिसके हृदय में (अकालपुरुष अपना नाम) थोड़ा सा भी बसाता है, उसकी प्रशंसा व्यक्त नहीं हो सकती। (हे अकालपुरुष!) जो मनुष्य तेरे दर्शन के इच्छुक हैं, उनकी संगति में (रखकर) मुझ नानक को बचा लो। प्रभु का अमर करनेवाला तथा सुखदायक नाम (सब) सुखों की मणि है, इसका ठिकाना भक्तों के हृदय में है॥ रहाउ॥

प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि।
प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु बुधि।
प्रभ कै सिमरनि जप तप पूजा।
प्रभ कै सिमरनि बिनसै दूजा।
प्रभ कै सिमरनि तीरथ इसनानी।
प्रभ कै सिमरनि दरगह मानी।
प्रभ कै सिमरनि होइ सु भला।
प्रभ कै सिमरनि सुफल फला।
से सिमरहि जिन आपि सिमराए।
नानक ता कै लागउ पाए।
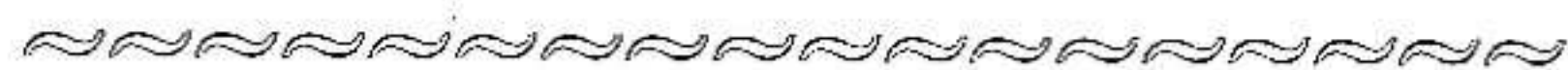
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभु के स्मरण में ही ऋद्धि सिद्धि तथा नौ निधियाँ हैं, प्रभु-स्मरण में ही ज्ञान, सुरति का टिकाव तथा जगत् के मूल (हरि) की समझवाली बुद्धि है। प्रभु के स्मरण में ही जप-तप तथा पूजा हैं, (क्योंकि) स्मरण करने से प्रभु के अतिरिक्त उस जैसी किसी दूसरी सत्ता के अस्तित्व का विचार ही दूर हो जाता है। स्मरण करने से आत्मा, तीर्थ का स्नान करने वाला हो जाता है और दरबार में प्रतिष्ठा मिलती है; जगत् में जो हो रहा है, भला प्रतीत होता है और मनुष्य-जन्म का उच्च मनोरथ सिद्ध हो जाता है। (नाम) वही स्मरण करते हैं, जिन्हें प्रभु आप प्रेरित करता है, (इसलिए, कह) हे नानक! मैं उन (स्मरण करनेवालों) के चरण-स्पर्श करूँ।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा।
प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा।
प्रभ कै सिमरनि त्रिसना बुझै।
प्रभ कै सिमरनि सभु किछु सुझै।
प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा।
प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा।
प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाई।
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ।
प्रभ जी बसहि साध की रसना।
नानक जन का दासनि दसना।

प्रभु का स्मरण सारे (कामों) में भला है; प्रभु का स्मरण करने से बहुत सारे (जीव) (विकारों से) बच जाते हैं। प्रभु का स्मरण करने से (माया की) प्यास मिट जाती है, (क्योंकि माया के) हर एक (काल) की समझ पड़ जाती है। प्रभु का स्मरण करने से यमों का भय समाप्त हो जाता है, और, (जीव की) आशा पूर्ण हो जाती है, (आकांक्षाओं से मन तृप्त हो जाता है)। प्रभु का स्मरण करने से मन की मैल दूर हो जाती है और मनुष्य के हृदय में (प्रभु का) अमर करनेवाला नाम टिक जाता है। प्रभुजी गुरमुख मनुष्यों की जिह्वा पर बसते हैं। (कहो) हे नानक! (मैं) गुरमुखों के सेवकों का सेवक (बनूँ)।

प्रभ कउ सिमरहि से धनवंते।
प्रभ कउ सिमरहि से पतिवंते।
प्रभ कउ सिमरहि से जन परवान।
प्रभ कउ सिमरहि से पुरख प्रधान।
प्रभ कउ सिमरहि सि बेमुहताजे।
प्रभ कउ सिमरहि सि सरब के राजे।
प्रभ कउ सिमरहि से सुखवासी।
प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी।
सिमरन ते लागे जिन आपि दइआला।
नानक जन की मंगै रवाला।
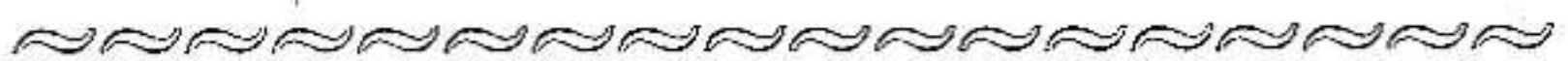
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं, वे धनवान हैं, और वे प्रतिष्ठित हैं। जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं, वे प्रसिद्ध हुए हैं, और वे (सबसे) भले हैं। जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं वे किसी के आश्रित नहीं, वे (तो बल्कि) सब के बादशाह हैं। जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं वे सुखी बसते और सदा के लिए जन्म-मरण से रहित हो जाते हैं, जिन पर प्रभु आप मेहरबान (होता) है; हे नानक! (कोई भाग्यशाली) इन गुरमुखों की चरणधूलि माँगता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी।
प्रभ कउ सिमरहि तिन सद बलिहारी।
प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे।
प्रभ कउ सिमरहि तिन सूखि बिहावै।
प्रभ कउ सिमरहि तिन आतमु जीता।
प्रभ कउ सिमरहि तिन निरमल रीता।
प्रभ कउ सिमरहि तिन अनद घनेरे।
प्रभ कउ सिमरहि बसहि हरि नेरे।
संत क्रिपा ते अनदिनु जागि।
नानक सिमरनु पूरै भागि।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं वे परोपकारी बन जाते हैं, उन पर (मैं) सदा बलिहारी हूँ। जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं उनके मुख सुन्दर हैं, उनकी (उम्र) सुख में बीतती है। जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं, वे अपने आपको जीत लेते हैं और उनकी जिन्दगी बिताने का तरीका पवित्र हो जाता है। जो मनुष्य प्रभु को स्मरण करते हैं, उन्हें खुशियाँ ही खुशियाँ हैं, (क्योंकि) वे प्रभु के दरबार में बसते हैं। संतों की कृपा से ही यह हरवक्त (स्मरण की) जाग आ सकती है; हे नानक! स्मरण (की देन) बड़े भाग्य से (मिलती है)।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभ कै सिमरनि कारज पूरे।
प्रभ कै सिमरनि कबहु न झूरे।
प्रभ कै सिमरनि हरि गुन बानी।
प्रभ कै सिमरनि सहजि समानी।
प्रभ कै सिमरनि निहचल आसनु।
प्रभ कै सिमरनि कमल बिगासनु।
प्रभ कै सिमरनि अनहद झुनकार।
सुखु प्रभ सिमरन का अंतु न पार।
सिमरहि से जनजिन कउ प्रभ मइआ।
नानक तिन जन सरनी पइआ।

प्रभु का स्मरण करने से (सारे) काम पूर्ण हो जाते हैं और मनुष्य कभी चिन्ता के वशीभूत नहीं होता। प्रभु के स्मरण करने से, मनुष्य अकालपुरुष के गुण ही उच्चारित करता है और सहज अवस्था में टिका रहता है। प्रभु का स्मरण करने से मनुष्य का (मन-रूपी) आसन डोलता नहीं और उसका (हृदय का) कमल-पुष्प खिला रहता है। प्रभु का स्मरण करने से (मनुष्य के भीतर) निरंतर संगीत (जैसा) अनहदनाद (होता रहता) है, प्रभु के स्मरण से सुख (पैदा होता) है, वह (कभी) समाप्त नहीं होता। वही मनुष्य (प्रभु को) स्मरण करते हैं, जिन पर प्रभु की कृपा होती है; हे नानक! (कोई भाग्यशाली) उन (स्मरण करनेवाले) जनों की शरण लेता है।

हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए।
हरि सिमरनि लगि बेद उपाए।
हरि सिमरनि भए सिध जती दाते।
हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते।
हरि सिमरनि धारी सभ धरना।
सिमरि सिमरि हरि कारन करना।
हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा।
हरि सिमरन महि आपि निरंकारा।
करि किरपा जिसु आपि बुझाइआ।
नानक गुरमुखि हरि सिमरनु तिनि पाइआ।
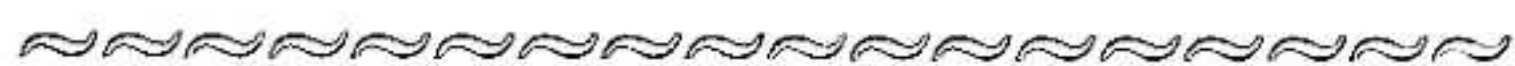
प्रभु का स्मरण करके भक्त (जगत् में) मशहूर होते हैं, स्मरण में ही जुड़कर (ऋषियों ने) वेद (आदि धार्मिक ग्रन्थ) रचे। प्रभु के स्मरण द्वारा ही मनुष्य सिद्ध बन गए, यती बन गए, दाता बन गए, स्मरण के प्रभाव से नीच मनुष्य सारे संसार में प्रकट हो गए। प्रभु के स्मरण ने सारी धरती को आसरा दिया हुआ है; (इसलिए, हे भाई!) जगत् के कर्त्ता प्रभु को सदा स्मरण कर। प्रभु ने स्मरण के लिए सारा जगत् बनाया है; जहाँ स्मरण है वहाँ निरंकार आप बसता है। कृपा करके जिस मनुष्य को (स्मरण करने की) समझ देता है, हे नानक! उस मनुष्य ने गुरु के द्वारा स्मरण (की देन) प्राप्त कर ली है।

ੴ

सलोकु

दीन दरद दुख भंजना
घटि घटि नाथ अनाथ।
सरणि तुम्हारी आइओ
नानक के प्रभ साथ।

हे दीनों के दर्द तथा दुःख नष्ट करनेवाले प्रभु! हे प्रत्येक शरीर में व्यापक प्रभु, अनाथों के नाथ हरि! गुरु नानक का पल्ला पकड़कर मैं तेरी शरण आया हूँ।

असटपदी

जह मात पिता सुत मीत न भाई।
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।
जह महा भइआन दूत जम दलै।
तह केवल नामु संगि तेरै चलै।
जह मुसकल होवै अति भारी।
हरि को नामु खिन माहि उधारी।
अनिक पुनह चरन करत नही तरै।
हरि को नामु कोटि पाप परहरै।
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे।
नानक पावहु सूख घनेरे।

जहाँ माँ, पिता, मित्र, भाई, कोई (साथी) नहीं, वहाँ हे मन! (प्रभु) का नाम तेरे साथ सहायता करनेवाला (है), जहाँ बड़े भयंकर यमदूतों का दल है, वहाँ तेरे साथ केवल प्रभु का नाम ही जाता है। जहाँ बड़ी भारी विपत्ति होती है, (वहाँ) प्रभु का नाम निमिषमात्र में बचा लेता है। अनेकों धार्मिक रस्में करके भी (मनुष्य पापों से) नहीं बचता, (पर) प्रभु का नाम करोड़ों पापों का नाश कर देता है। (इसलिए, हे मन!) गुरु की शरण लेकर नाम जप; हे नानक! (नाम के प्रभाव से) बड़े सुख पाएगा।

जिह मारग के गने जाहि न कोसा।
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।
जिह पैडै महा अंध गुबारा।
हरि का नामु संगि उजीआरा।
जहा पंथि तेरा को न सिञानू।
हरि का नामु तह नालि पछानू।
जह महा भइआन तपति बहु घाम।
तह हरि के नामकी तुम ऊपरि छाम।
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै।
तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै।

जिस (जिन्दगी-रूपी) राह के कोस आदि गिने नहीं जा सकते, वहाँ प्रभु का नाम (जीव के) साथ (राह की) राशि-पूँजी है। जिस मार्ग में (विकारों का) घोर अँधेरा है, (वहाँ) प्रभु का नाम (जीव के) साथ प्रकाश है। जिस मार्ग में तेरा कोई मित्र नहीं है, वहाँ प्रभु का नाम तेरे साथ (सच्चा) साथी है। जहाँ (जिन्दगी के मार्ग में) (विकारों की) बड़ी भयानक जलन तथा गर्मी है, वहाँ प्रभु का नाम (हे जीव!) तुझ पर छाया है। (हे जीव!) जहाँ (माया की) प्यास तुझे खींचती है, वहाँ हे नानक! प्रभु के नाम की वर्षा होती है (जो जलन को बुझा देती है)।

भगत जना की बरतनि नामु।
संत जना कै मनि बिस्रामु।
हरि का नामु दास की ओट।
हरि कै नामि उधरे जन कोटि।
हरि जसु करत संत दिनु राति।
हरि हरि अउखधु साध कमाति।
हरि जन कै हरि नामु निधान।
पारब्रहमि जन कीनो दान।
मन तन रंगि रते रंग एकै।
नानक जन कै बिरति बिबेकै।

प्रभु-नाम भक्तों के लिए व्यावहारिक सामग्री है अर्थात् उसकी हरवक्त आवश्यकता होती है, भक्तों के ही मन में यह टिका रहता है। प्रभु का नाम भक्तों का आसरा है, प्रभु-नाम के द्वारा करोड़ों व्यक्ति (विकारों से) बच जाते हैं। भक्तजन दिन-रात्रि प्रभु की प्रशंसा करते हैं, प्रभु-नाम-रूपी औषधि एकत्रित करते हैं। भक्तों के पास प्रभु का नाम ही भण्डार है, प्रभु के नाम की देन, अपने सेवकों पर आपही की है। भक्तजन मन-तन से एक प्रभु के प्रेम में रँगे रहते हैं; हे नानक! भक्तों के भीतर भले-बुरे की परख करनेवाला स्वभाव बन जाता है।

हरि का नामु जन कउ मुकति जुगति।
हरि कै नामि जन कउ त्रिपति भुगति।
हरि का नामु जन का रूप रंगु।
हरि का नामु जपत कब परै न भंगु।
हरि का नामु जन की वडिआई।
हरि कै नामि जन सोभा पाई।
हरि का नामु जन कउ भोग जोग।
हरि नामु जपत कछु नाहि बिओगु।
जनु राता हरि नाम की सेवा।
नानक पूजै हरि हरि देवा।
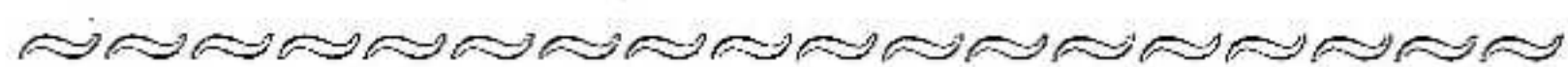
भक्त के लिए प्रभु का नाम (ही) छुटकारे का साधन है, (क्योंकि) प्रभु के नाम के द्वारा (माया के) भोगों से जीव तृप्त हो जाता है, प्रभु का नाम भक्त का सौंदर्य है, प्रभु का नाम जपते हुए (भक्त के मार्ग में) कभी (कोई) अटकाव नहीं होता। प्रभु का नाम ही भक्त की प्रतिष्ठा है, (क्योंकि) प्रभु के नाम के द्वारा (ही) भक्तों ने (जगत् में) प्रसिद्धि। पाई है। (त्यागी का) योग (साधन) और गृहस्थी का माया-भोग भक्तजन के लिए प्रभु का नाम (ही) है, प्रभु का नाम जपते हुए (उसे) कोई दु:ख-क्लेश नहीं होता। (प्रभु का) भक्त (सदा) प्रभु के नाम की सेवा (स्मरण) में मस्त रहता है; हे नानक! (भक्त सदा) प्रभुदेव को ही पूजता है।

हरि हरि जन कै मालु खजीना।
हरि धनु जन कउ आपि प्रभि दीना।
हरि हरि जन कै ओट सताणी।
हरि प्रतापि जन अवर न जाणी।
ओति पोति जन हरि रसि राते।
सुंन समाधि नाम रस माते।
आठ पहर जनु हरि हरि जपै।
हरि का भगतु प्रगट नही छपै।
हरि की भगति मुकति बहु करे।
नानक जन संगि केते तरे।

प्रभु का नाम भक्त के लिए धन है, यह नाम-रूपी धन प्रभु ने आप अपने भक्त को दिया है। भक्त के लिए प्रभु का (ही) पक्का आसरा है, भक्तों ने प्रभु के प्रताप से किसी दूसरे आसरे को नहीं देखा। भक्तजन प्रभु-नाम के रस में पूर्ण तौर पर भीगे रहते हैं, (और) नाम-रस में मस्त हुए (मन का वह) टिकाव (पाते हैं) जहाँ कोई कल्पना नहीं होती। (प्रभु का) भक्त आठों प्रहर प्रभु को जपता है, (जगत् में) भक्त प्रकट (हो जाता है), छिपा नहीं रहता। प्रभु की भक्ति अनन्त जीवों को (विकारों से) मुक्ति दिलाती है; हे नानक! भक्त की संगति में कई दूसरे भी पार हो जाते हैं।

पारजातु इहु हरि को नाम।
कामधेन हरि हरि गुण गाम।
सभ ते ऊतम हरि की कथा।
नामु सुनत दरद दुख लथा।
नाम की महिमा संत रिद वसै।
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै।
संत का संगु वडभागी पाइऐ।
संत की सेवा नामु धिआईऐ।
नाम तुलि कछु अवरु न होइ।
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोई।

प्रभु का नाम (ही) 'पारिजात' वृक्ष है, उसका गुणगान (ही इच्छा-पूरक) कामधेनु है। प्रभु की गुणस्तुति की बातें सब बातों से भली हैं (क्योंकि) प्रभु का नाम सुनने से सारे दुःख-दर्द उतर जाते हैं। (प्रभु के) नाम की महत्ता संतों के हृदय में बसती है (और संतों के प्रताप से) सारा पाप दूर हो जाता है। सौभाग्यवश संतों की संगति मिलती है (और) संतों की सेवा (करने से) (प्रभु का) नाम-स्मरण किया जाता है। प्रभु के बराबर दूसरा कोई (पदार्थ) नहीं, हे नानक! गुरु के सम्मुख होकर कोई विरला मनुष्य नाम (की देन) प्राप्त करता है।

✣ सलोकु ✣

बहु सासत्र बहु सिम्रिती
पेखे सरब ढढोलि।
पूजसि नाही हरि हरे
नानक नाम अमोल।

बहुत से शास्त्र और स्मृतियाँ, (हमने) सब खोजकर देखे हैं, (लेकिन) यह अकालपुरुष के नाम की बराबरी नहीं कर सकते। हे नानक! (प्रभु के) नाम का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

✥ असटपदी ✥

जाप ताप गिआन सभि धिआन।
खट सासत्र सिम्रिति वखिआन।
जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ।
सगल तिआगि बन मधे फिरिआ।
अनिक प्रकार कीए बहु जतना।
पुंन दान होमे बहु रतना।
सरीरु कटाइ होमै करि राती।
वरत नेम करै बहु भाती।
नही तुलि राम नाम बीचार।
नानक गुरमुखि नामु जपीऐ इक बार।
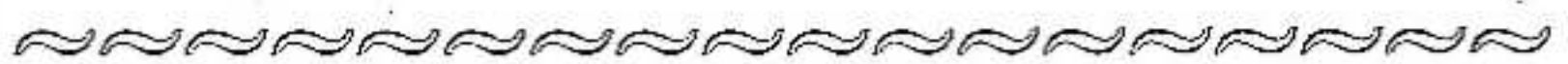
(वेद-मन्त्रों के) जाप करे, (शूरवीर को धूनियों से) तपाए, कई प्रकार से ज्ञान (की बातें करे) और (देवताओं के) ध्यान में लीन रहे, छः शास्त्रों और स्मृतियों का उपदेश करे; योग के साधन करे, कर्मकांडी धर्म की क्रिया करे, (अथवा) सारे (काम) छोड़कर जंगलों में घूमता फिरे; अनेक किस्मों के बड़े यत्न करे, पुण्यदान करे, और बहुत मात्रा में हवन, घृत करे, अपनी देह को थोड़ी-थोड़ी करके कटाए और आग में जला देवे, कई प्रकार के व्रतों का पालन करे; (लेकिन ये तमाम) प्रभु के नाम की चिन्तन के बराबर नहीं है (चाहे) हे नानक! यह नाम एक बार (ही) गुरु के समक्ष होकर जपा जाए।

नउ खंड प्रिथमी फिरै चिरु जीवै।
महा उदासु तपीसरु थीवै।
अगनि माहि होमत परान।
कनिक अस्व हैवर भूमि दान।
निउली करम करै बहु आसन।
जैन मारग संजम अति साधन।
निमख निमख करि सरीरु कटावै।
तउ भी हउमै मैलु न जावै।
हरि के नाम समसरि कछु नाहि।
नानक गुरमुखि नामु जपत गति पाहि।

(यदि कोई मनुष्य) सम्पूर्ण पृथ्वी पर फिरे, लम्बी उम्र तक जीता रहे, तटस्थ होकर बड़ा तपस्वी बन जाए; आग में (अपनी) देह होम कर दे; सोना, घोड़े और भूमिदान कर दे; न्यौली कर्म (योगासन का एक रूप) और बहुत सारे योगासन करे, जैनियों के रास्ते पर चलकर बड़े कठिन साधन तथा तपस्या करे; शरीर को थोड़ा-थोड़ा करके कटा देवे तो भी अहंभावना की मैल दूर नहीं होती। (ऐसा) कोई (प्रयास) प्रभु के नाम के बराबर नहीं है। हे नानक! जो मनुष्य गुरु के सम्मुख होकर नाम जपते हैं, वे ऊँची आत्मिक अवस्था प्राप्त करते हैं।

मन कामना तीरथ देह छुटै।
गरबु गुमानु न मन ते हुटै।
सोच करै दिनसु अरु राति।
मन की मैलु न तन ते जाति।
इसु देही कउ बहु साधना करै।
मन ते कबहू न बिखिआ टरै।
जलि धोवै बहु देह अनीति।
सुध कहा होइ काची भीति।
मन हरि के नाम की महिमा ऊच।
नानक नामि उधरे पतित बहु मूच।

(कई प्राणियों के) मन की इच्छा (होती है कि) तीर्थों पर (जाकर) शारीरिक वस्त्र छोड़ा जाए, (पर इस प्रकार भी) अहंकार मन से दूर नहीं होता। (मनुष्य) दिन तथा रात (तीर्थों पर) स्नान करे, (फिर भी) मन की मैल शरीर धोने से नहीं जाती। (यदि) इस शरीर को (साधने की खातिर) कई यत्न भी करें, (तो भी) कभी मन से माया (का प्रभाव) नहीं टलता। इस नश्वर शरीर को कई बार प्राणी पानी से भी धोए (तो भी यह शरीर-रूपी) कच्ची दीवार कहाँ पवित्र हो सकती है? हे मन! प्रभु के नाम की महत्ता बहुत बड़ी है। हे नानक! नाम के प्रभाव से असंख्य कुकर्मी जीव (विकारों से) बच जाते हैं।

बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै।
अनिक जतन करि त्रिसन न ध्रापै।
भेख अनेक अगनि नही बुझै।
कोटि उपाव दरगह नही सिझै।
छूटसि नाही ऊभ पइआलि।
मोहि बिआपहि माइआ जालि।
अवर करतूति सगल जमु डानै।
गोविंद भजन बिनु तिलु नही मानै।
हरि का नामु जपत दुखु जाइ।
नानक बोलै सहजि सुभाइ।

(जीव की) बहुत चतुराई (के कारण) यम का भय (जीव को) आ दबाता है (क्योंकि चतुराई के) अनेक यत्न करने से (माया की) प्यास समाप्त नहीं होती। अनेकों वेष बदलने से (तृष्णा की) आग नहीं बुझती, (ऐसे) करोड़ों तरीके (प्रयोग करने से भी प्रभु के) दरबार में व्यक्ति बेबाक (मुक्त) नहीं होता। (इन यत्नों से) जीव चाहे आकाश पर चढ़ जाए, चाहे पाताल में छिप जाए, (पर वह) माया से बच नहीं सकता, (बल्कि) जीव माया के जाल में तथा मोह में फँसते हैं। (नाम के बिना) दूसरी सब करतूतों को यमराज दण्डित करता है, प्रभु के भजन के बिना तनिकमात्र भी विश्वास नहीं करता। हे नानक! (जो मनुष्य) आत्मिक स्थिरता में टिककर प्रेमपूर्वक (हरि-नाम) उच्चारित करता है, (उसका) दुःख प्रभु का नाम जपते हुए दूर हो जाता है।

चारि पदारथ जे को मांगै।
साध जना की सेवा लागै।
जे को आपुना दूखु मिटावै।
हरि हरि नामु रिदै सद गावै।
जे को अपुनी सोभा लोरै।
साधसंगि इह हउमै छोरै।
जे को जनम मरण ते डरै।
साध जना की सरनी परै।
जिसु जन कउ प्रभ दरस पिआसा।
नानक ता कै बलि बलि जासा।

यदि कोई मनुष्य (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) चार पदार्थों का जरूरतमन्द हो, (तो उसे चाहिये कि) गुरमुखों की सेवा में लगे। यदि कोई मनुष्य अपना दुःख मिटाना चाहे तो प्रभु का नाम सदा हृदय में स्मरण करे। यदि कोई मनुष्य अपनी शोभा चाहता हो तो सत्संग में (रहकर) इस अहंकार का त्याग करे। यदि कोई मनुष्य जन्म-मरण (के चक्र) से डरता हो, तो वह संतों के चरणों का स्पर्श करे। हे नानक! (कह कि) जिस मनुष्य को प्रभु के दर्शन की इच्छा है, मैं उस पर सदा बलिहारी जाऊँ।

सगल पुरख महि पुरखु प्रधानु।
साधसंगि जा का मिटै अभिमानु।
आपस कउ जो जाणै नीचा।
सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा।
जा का मनु होइ सगल की रीना।
हरि हरि नामु तिनि घटि घटि चीना।
मन अपुने ते बुरा मिटाना।
पेखै सगल स्रिसटि साजना।
सूख दूख जन सम द्रिसटेता।
नानक पाप पुंन नही लेपा।

सत्संगत में (रहकर) जिस मनुष्य का अहंकार मिट जाता है, (वह) मनुष्य समस्त मनुष्यों में बड़ा है। जो मनुष्य अपने आपको (सबसे) कुकर्मी सोचता है, उसे सबसे भला समझना चाहिए। जिस मनुष्य का मन सबके चरणों की धूलि होता है, उस मनुष्य ने हरेक शरीर में प्रभु की सत्ता पहचान ली है। जिसने अपने मन से बुराई मिटा दी है, वह सारी सृष्टि (के जीवों को अपना) मित्र देखता है। हे नानक! (ऐसे) मनुष्य सुख-दुःख को एक जैसा समझते हैं, (इसीलिए) पाप और पुण्य का उन पर असर नहीं होता, (अर्थात् वे सभी स्थितियों में एक समान रहते हैं)।

निरधन कउ धनु तेरो नाउ।
निथावे कउ नाउ तेरा थाउ।
निमाने कउ प्रभ तेरो मानु।
सगल घटा कउ देवहु दानु।
करन करावनहार सुआमी।
सगल घटा के अंतरजामी।
अपनी गति मिति जानहु आपे।
आपन संगि आपि प्रभ राते।
तुम्हरी उसतति तुम ते होइ।
नानक अवरु न जानसि कोइ।
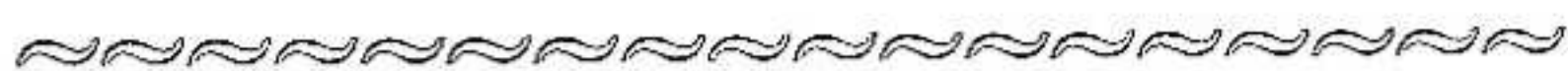
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(हे प्रभु!) कंगाल के लिए तेरा नाम ही धन है, निराश्रित को तेरा सहारा है। तुच्छ व्यक्ति के लिए तेरा (नाम), हे प्रभु! आदरमान है, तुम ही सारे जीवों की देन देते हो। हे स्वामी! हे अन्तर्यामी! तुम आप ही सब कुछ करते हो, और, आप ही कराते हो। हे प्रभु! तुम अपनी हालत और अपनी मर्यादा आप ही जानते हो; तुम अपने आप में आप ही महान् हो। हे नानक! (कह, कि, हे प्रभु!) तेरी प्रशंसा तुझ से ही (व्यक्त) हो सकती है, कोई दूसरा तेरी महानता नहीं जानता।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

सरब धरम महि स्रेसट धरमु।
हरि को नामु जपि निरमल करमु।
सगल क्रिआ महि ऊतम किरिआ।
साधसंगि दुरमति मलु हिरिआ।
सगल उदम महि उदमु भला।
हरि का नामु जपहु जीअ सदा।
सगल बानी महि अंम्रित बानी।
हरि को जसु सुनि रसन बखानी।
सगल थान ते ओहु ऊतम थानु।
नानक जिह घटि वसै हरि नामु।

(हे मन!) प्रभु का नाम जप (और) पवित्र आचरण (बना), यह धर्म सर्वोपरि है। सत्संग में (रहकर) दुर्बुद्धि (रूपी) मैल दूर की जाए—यह काम अन्य दूसरी धार्मिक रस्मों से उत्तम है। हे मन! सदा प्रभु का नाम जप—यह यत्न तमाम यत्नों में श्रेष्ठ है। प्रभु का यश (कानों से) सुन (तथा) जीभ से बोल— (प्रभु के यश की यह) आत्मिक जीवन देनेवाली वाणी दूसरी वाणियों से सुन्दर है। हे नानक! जिस हृदय में प्रभु का नाम विद्यमान है, वह (हृदय-रूपी) स्थान दूसरे तमाम (तीर्थ) स्थानों से पवित्र है।

✣ सलोकु ✣

निरगुनीआर इआनिया
सो प्रभु सदा समालि।
जिनि कीआ तिसु चीति रखु
नानक निबही नालि।
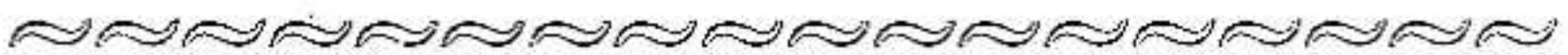
हे मूर्ख! हे गुण-हीन (मनुष्य)! उस मालिक को सदा याद कर। हे नानक! जिसने तुझे पैदा किया है, उसे चित्त में (पिरो) रख, वही साथ निभाएगा।

✣ असटपदी ✣

रमईआ के गुन चेति परानी।
कवन मूल ते कवन द्रिसटानी।
जिनि तूं साजि सवारि सीगारिआ।
गरभ अगनि महि जिनहि ऊबारिआ।
बार बिवसथा तुझहि पिआरै दूध।
भरि जोबन भोजन सुख सूध।
बिरधि भइआ ऊपरि साक सैन।
मुखि अपिआउ बैठ कउ दैन।
इहु निरगुनु गुनु कछू न बूझै।
बखसि लेहु तउ नानक सीझै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

हे जीव! सुन्दर राम के गुण स्मरण कर, (देख) कब से (तुझे) कितना (सुन्दर बनाकर उसने) दिखाया है। जिस प्रभु ने तुझे बना-सँवार कर सुन्दर किया है, जिसने तुझे पेट की आग में भी बचाया, जो बाल अवस्था में तुझे दूध पिलाता है, भरी जवानी में भोजन और सुखों की सूझ (देता है); (जब) तू बूढ़ा हो जाता है तो सेवा करने को सगे-संबंधी (तैयार कर देता है), जो तुझ बैठे हुए को सुन्दर भोजन देते हैं। (पर) हे नानक! (कह—हे प्रभु!) यह गुणहीन जीव कोई उपकार नहीं समझता, (यदि) तू आप कृपा करे तो (यह जन्म-मनोरथ में) सफल होवे।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिह प्रसादि धर ऊपरि सुखि बसहि।
सुत भ्रात मीत बनिता संगि हसहि।
जिह प्रसादि पीवहि सीतल जला।
सुखदाई पवनु पावकु अमुला।
जिह प्रसादि भोगहि सभि रसा।
सगल समग्री संगि साथि बसा।
दीने हसत पाव करन नेत्र रसना।
तिसहि तिआगि अवर संगि रचना।
ऐसे दोख मूड़ अंध बिआपे।
नानक काढि लेहु प्रभ आपे।
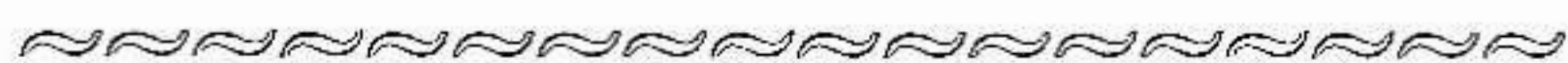
(हे जीव!) जिसकी कृपा से तू धरती पर सुख से बसता है; पुत्र, भाई, स्त्री तथा मित्र से हँसता है; जिसकी कृपा से तू ठण्डा पानी पीता है, सुखदायक हवा तथा अमूल्य अग्नि (इस्तेमाल करता है); जिसकी कृपा से सारे रस भोगता है, तू सारे पदार्थों के साथ रहता है; (जिसने) तुझे हाथ, पैर, कान, आँख, जीभ दिए हैं, (प्रभु) को भुलाकर (हे जीव!) तू दूसरों के साथ लीन है। (यह) मूर्ख अन्धे जीव (भलाई भुलानेवाले) अवगुण में फँसे हैं। हे नानक! (इन जीवों के लिए प्रार्थना कर, और कह)—हे प्रभु! (इन्हें) आप (इन अवगुणों से) निकाल ले।

आदि अंति जो राखनहारु।
तिस सिउ प्रीति न करै गवारु।
जा की सेवा नव निधि पावै।
ता सिउ मूड़ा मनु नही लावै।
जो ठाकुरु सद सदा हजूरे।
ता कउ अंधा जानत दूरे।
जा की टहल पावै दरगह मानु।
तिसहि बिसारै मुगधु अजानु।
सदा सदा इहु भूलनहारु।
नानक राखनहारु अपारु।

मूर्ख मनुष्य उस प्रभु के साथ प्रेम नहीं करता, जो (इसके) जन्म से लेकर मृत्यु तक देखभाल करता है। मूर्ख जीव उस प्रभु के साथ चित्त नहीं जोड़ता, जिसकी सेवा करने से (इसे सृष्टि के) नौ खजाने मिल जाते हैं। अन्धा मनुष्य उस ठाकुर को (कहीं) दूर (बैठा) समझता है, जो हरवक्त इसके साथ-साथ है। मूर्ख तथा अज्ञानी मनुष्य उस प्रभु को भुला बैठता है, जिसकी सेवा करने से इसे दरबार में आदर मिलता है (पर कौन-कौन सा अवगुण याद कराएँ?) यह जीव सदा ही गलतियाँ करता रहता है; हे नानक! रक्षक प्रभु अनन्त है (वह उस जीव के अवगुणों को नहीं देखता)।

रतनु तिआगि कउडी संगि रचै।
साचु छोडि झूठ संगि मचै।
जो छडना सु असथिरु करि मानै।
जो होवनु सो दूरि परानै।
छोड़ि जाइ तिस का स्रमु करै।
संगि सहाई तिसु परहरै।
चंदन लेपु उतारै धोइ।
गरधब प्रीति भसम संगि होइ।
अंध कूप महि पतित बिकराल।
नानक काढि लेहु प्रभ दइआल।
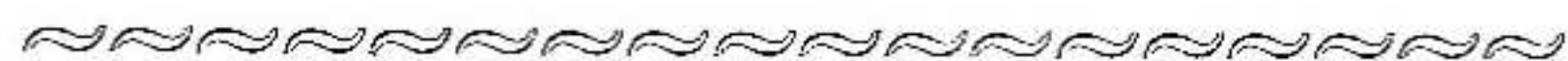
(माया-ग्रस्त) जीव (नाम-) रत्न छोड़कर (माया-रूपी) कौड़ी के साथ प्रसन्न फिरता है। सच्चे (प्रभु) को छोड़कर नश्वर पदार्थों के साथ अभिमान करता है। जो (माया) छोड़ जानी है, उसे सदा अटल समझता है; जो अवश्य घटित होती है, उस (मौत) को कहीं दूर ख्याल करता है। उस (माया-धन) की खातिर (रोज) कष्ट करता है, जो छोड़ जानी है; जो (प्रभु) साथ-साथ रक्षक है उसे भुला बैठा है। गधे (अज्ञानी) का प्रेम, राख के साथ ही होता है, (वह) चन्दन का लेप धोकर उतार देता है। (जीव माया के) अँधेरे भयानक कुएँ में गिरे पड़े हैं; हे नानक! (प्रार्थना कर और कह) हे दयालु प्रभु! (इन्हें आप इस अन्धकूप से) निकाल ले।

करतूति पसू की मानस जाति।
लोक पचारा करै दिनु राति।
बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ।
छपसि नाहि कछु करै छपाइआ।
बाहरि गिआन धिआन इसनान।
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु।
अंतरि अगनि बाहरि तनु सुआह।
गलि पाथर कैसे तरै अथाह।
जा कै अंतरि बसै प्रभु आपि।
नानक ते जन सहजि समाति।

जाति मनुष्य की है, परन्तु काम पशुओं वाले हैं, (वैसे) दिन-रात लोगों के लिए दिखावा कर रहा है। बाहर (शरीर पर) धार्मिक वस्त्र हैं, पर मन में माया की मैल है, (बाहरी दिखावे) से छुपाने का यत्न करने से (मन की मैल) छुपती नहीं। बाहर तीर्थ-स्नान तथा ज्ञान की बातें करता है, समाधियाँ भी लगाता है लेकिन मन में लोभ (रूपी) कुत्ता दबाव डाल रहा है। मन में (तृष्णा की) अग्नि है, बाहर शरीर राख (से लिपटा हुआ है); (यदि) गले में (विकारों के) पत्थर (हों तो) अथाह (संसार-समुद्र को) जीव कैसे पार करे? जिस-जिस मनुष्य के हृदय में प्रभु आ बसता है, हे नानक! वही स्थिर अवस्था में टिके रहते हैं।

सुनि अंधा कैसे मारगु पावै।
करु गहि लेहु ओड़ि निबहावै।
कहा बुझारति बूझै डोरा।
निसि कहीऐ तउ समझै भोरा।
कहा बिसनपद गावै गुंग।
जतन करै तउ भी सुर भंग।
कह पिंगुल परबत पर भवन।
नही होत ऊहा उसु गवन।
करतार करुणामै दीनु बेनती करै।
नानक तुमरी किरपा तरै।
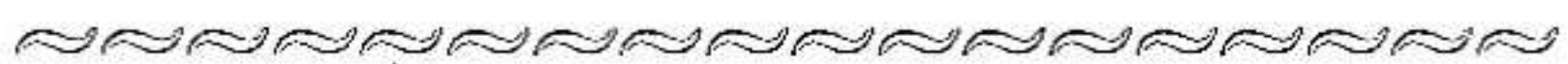
अन्धा मनुष्य (केवलमात्र) सुनकर कैसे रास्ता ढूँढ़ ले? (हे प्रभु! आप इसका) हाथ पकड़ लो (ताकि यह) आखिर तक (प्रेम का) निर्वाह कर सके। बहरा मनुष्य (केवल) कहने से क्या समझेगा? (यदि) कहें कि (यह) रात है तो वह समझ लेता है कि (यह) दिन (है), गूँगा किस प्रकार बिसनपद (गायक पद) गा सकता है? (यदि) यत्न (भी) करे, उसकी आवाज टूटी रहती है। हे नानक! (केवल प्रार्थना कर और कह) हे कर्त्तार! हे दया के सागर! (यह) तुच्छ दास प्रार्थना करता है, तेरी कृपा से (ही) पार हो सकता है।

संगि सहाई सु आवै न चीति।
जो बैराई ता सिउ प्रीति।
बलूआ के ग्रिह भीतरि बसै।
अनद केल माइआ रंगि रसै।
द्रिड़ु करि मानै मनहि प्रतीति।
कालु न आवै मूड़े चीति।
बैर बिरोध काम क्रोध मोह।
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह।
इआहू जुगति बिहाने कई जनम।
नानक राखि लेहु आपन करि करम।

जो प्रभु (मूर्ख जीव का) साथी है, उसे यह स्मरण नहीं करता, (पर) जो वैरी है, उससे प्यार कर रहा है। रेत के घर में बसता है, (फिर भी) माया की मस्ती में आनन्द अनुभव कर रहा है। (अपने आपको) अमर समझे बैठा है, मन में (यह) यकीन बना हुआ है; परन्तु मूर्ख के चित्त में (कभी) मौत (का ख्याल भी) नहीं आता। वैर, विरोध, काम, क्रोध, झूठ, मोह, कुकर्म, लालच और विश्वासघात—इसी मार्ग का अनुसरण करके कई जन्म बीत गए हैं। हे नानक! (इस जीव के लिए प्रभु से प्रार्थना कर और कह) अपनी कृपा करके (इसे) बचा ले।

तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि।
जीउ पिंडु सभु तेरी रासि।
तुम मात पिता हम बारिक तेरे।
तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे।
कोई न जानै तुमरा अंतु।
ऊचे ते ऊचा भगवंत।
सगल समग्री तुमरै सूत्रि धारी।
तुम ते होइ सु आगिआकारी।
तुमरी गति मिति तुम ही जानी।
नानक दास सदा कुरबानी।

(हे प्रभु!) तुम मालिक हो (हम जीवों की) प्रार्थना तेरे सामने ही है, यह आत्मा तथा शरीर सब तेरी ही देन है। तुम हमारे माँ-बाप हो, हम तेरे बालक हैं, तेरी कृपा-दृष्टि में अनगिनत सुख हैं। कोई तेरा अन्त नहीं पा सकता, (क्योंकि) तुम सर्वोच्च भगवान हो। (जगत् के) सारे पदार्थ तेरे ही हुक्म में टिके हुए हैं; तेरी रची हुई सृष्टि तेरी आज्ञा में सक्रिय है। तुम कैसे हो, कितने महान् हो—यह तुम आप ही जानते हो। हे नानक! (कह, हे प्रभु!) तेरे सेवक (तुझ पर) सदा बलिहारी जाते हैं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

देनहारु प्रभ छोडि कै
लागहि आन सुआइ।
नानक कहू न सीझई
बिनु नावै पति जाइ।

(तमाम देन) देनेवाले प्रभु को छोड़कर (जीव) दूसरे स्वादों में लगते हैं; (पर) हे नानक! (ऐसा) कभी (कोई मनुष्य जीवन-यात्रा में) सफल नहीं होता (क्योंकि) प्रभु के नाम के बिना प्रतिष्ठा नहीं रहती।

✤ असटपदी ✤

दस बसतू ले पाछै पावै।
एक बसतु कारनि बिखोटि गवावै।
एक भी न देइ दस भी हिरि लेइ।
तउ मूड़ा कहु कहा करेइ।
जिसु ठाकुर सिउ नाही चारा।
ता कउ कीजै सद नमसकारा।
जा कै मनि लागा प्रभु मीठा।
सरब सूख ताहू मनि वूठा।
जिसु जन अपना हुकमु मनाइआ।
सरब थोक नानक तिनि पाइआ।

(मनुष्य प्रभु से) दस चीजें लेकर सँभाल लेता है, (पर) एक चीज की खातिर अपना विश्वास गवाँ लेता है। (यदि प्रभु) एक चीज भी न देवे, और, दस (दी हुई) भी छीन ले, तो बताओ, यह मूर्ख क्या कर सकता है? जिस मालिक के आगे पेश नहीं चल सकती, उसके आगे सदा सिर झुकाना ही चाहिए, (क्योंकि) जिस मनुष्य के मन में प्रभु प्यारा लगता है, सारे सुख उसके हृदय में आ बसते हैं। हे नानक! जिस मनुष्य द्वारा प्रभु अपना हुक्म मनाता है, (दुनिया के) सारे पदार्थ (मानो) उसने प्राप्त कर लिए हैं।

अगनत साहु अपनी दे रासि।
खात पीत बरतै अनद उलासि।
अपुनी अमान कछु बहुरि साहु लेइ।
अगिआनी मनि रोसु करेइ।
अपनी परतीति आप ही खोवै।
बहुरि उस का बिस्वासु न होवै।
जिस की बसतु तिसु आगै राखै।
प्रभ की आगिआ मानै माथै।
उस ते चउगुन करै निहालु।
नानक साहिबु सदा दइआलु।

(प्रभु शाह) असंख्य (पदार्थों की) पूँजी (जीव बनजारे को) देता है, (जीव) खाता-पीता चाव तथा खुशी से (इन पदार्थों को) इस्तेमाल करता है। (यदि) शाह अपनी कोई अमानत (धरोहर) वापिस कर ले, तो (यह) अज्ञानी मन में क्रोध करता है; (इस प्रकार) अपना विश्वास आप ही गवाँ लेता है और दोबारा इसका विश्वास नहीं किया जाता। (यदि) जिस प्रभु की (दी हुई) चीज है, उसके समक्ष (आप ही सहर्ष) रख दे और प्रभु का हुक्म स्वीकार कर ले तो (प्रभु उसे) पहले की अपेक्षा चौगुना खुश करता है। हे नानक! मालिक सदा कृपा करने वाला है।

अनिक भाति माइआ के हेत।
सरपर होवत जानु अनेत।
बिरख की छाइआ सिउ रंगु लावै।
ओह बिनसै उहु मनि पछुतावै।
जो दीसै सो चालनहारु।
लपटि रहिओ तह अंध अंधारु।
बटाऊ सिउ जो लावै नेह।
ता कउ हाथि न आवै केह।
मन हरि के नाम की प्रीति सुखदाई।
करिकिरपा नानक आपि लए लाई।

माया के प्रेम अनेक किस्मों के हैं, (लेकिन यह सारे) अन्त में नष्ट हो जाने वाले समझो। (यदि कोई मनुष्य) वृक्ष की छाया के साथ प्रेम करे, (परिणाम यह होगा कि) वह छाया नष्ट हो जाती है, और, वह मनुष्य मन में पश्चाताप करता है। गोचर जगत् नश्वर है, इस (जगत्) से यह अन्धा मनुष्य अपनत्व बनाए बैठा है। जो (भी) मनुष्य (किसी) यात्री से संबंध जोड़ लेता है, (अन्त में) उसके साथ कुछ नहीं लगता। हे मन! प्रभु के नाम का प्रेम (ही) सुख देनेवाला है; (पर) हे नानक! (यह प्रेम उस मनुष्य को प्राप्त होता है, जिसे) प्रभु कृपा करके आप (अपनी ओर) लगाता है।

मिथिआ तनु धनु कुटंबु सबाइआ।
मिथिआ हउमै ममता माइआ।
मिथिया राज़ जोबन धन माल।
मिथिआ काम क्रोध बिकराल।
मिथिआ रथ हसती अस्व बसत्रा।
मिथिआ रंग संगि माइआ पेखि हसता।
मिथिआ ध्रोह मोह अभिमानु।
मिथिआ आपस ऊपरि करत गुमानु।
असथिरु भगति साध की सरन।
नानक जपि जपि जीवै हरि के चरन।

(जब यह) शरीर, धन तथा सारा परिवार नश्वर है, (तो) माया का स्वामित्व तथा अहंकार—इन पर अभिमान करना भी मिथ्या (है)। राज्य, यौवन तथा धन-माल सब नश्वर है, काम तथा भयानक क्रोध, यह भी व्यर्थ हैं। रथ, हाथी, घोड़े तथा कपड़े साथ-साथ रहनेवाले नहीं हैं, (इस सारी) माया को प्रेम-पूर्वक देखकर (जीव) हँसता है (पर यह सब) व्यर्थ है। विश्वासघात, मोह तथा अहंकार—(ये सब मन की) व्यर्थ (लहरें) हैं, अपने आप पर अभिमान करना भी झूठा (नशा) है। सदा स्थिर रहनेवाली (प्रभु की) भक्ति (ही है जो) गुरु की शरण लेकर (की जाए)। हे नानक! प्रभु के चरण (ही) सदा जप कर (मनुष्य) असली (जीवन) जीता है।

मिथिआ स्रवन परनिंदा सुनहि।
मिथिआ हसत परदरब कउ हिरहि।
मिथिआ नेत्र पेखत परत्रिअ रूपाद।
मिथिआ रसना भोजन अन स्वाद।
मिथिआ चरन परबिकार कउ धावहि।
मिथिआ मन परलोभ लुभावहि।
मिथिआ तन नही परउपकारा।
मिथिआ बासु लेत बिकारा।
बिनु बूझे मिथिआ सभ भए।
सफल देह नानक हरि हरि नाम लए।

(मनुष्य के) कान व्यर्थ हैं, (यदि वे) परनिन्दा सुनते हैं; हाथ व्यर्थ हैं (यदि ये) पराए धन को चुराते हैं; आँखें व्यर्थ हैं (यदि ये) पराई जवानी का रूप देखती हैं; जीभ व्यर्थ है (यदि यह) खाने-पीने तथा दूसरे स्वादों में लगी है; चरण व्यर्थ हैं (यदि ये) पराए नुकसान के लिए भाग-दौड़ कर रहे हैं। हे मन! तू भी व्यर्थ है (यदि तू) पराए धन का लोभ कर रहा है। (वे) शरीर व्यर्थ हैं जो परोपकार नहीं करते, (नाक) व्यर्थ है, जो विकारों की गन्ध सूँघ रही है। (अपने-अपने अस्तित्व का मनोरथ) समझे बिना ये सारे (अंग) व्यर्थ हैं। हे नानक! वह शरीर सफल है, जो प्रभु का नाम जपता है।

बिरथी साकत की आरजा।
साच बिना कह होवत सूचा।
बिरथा नाम बिना तनु अंध।
मुखि आवत ता कै दुरगंध।
बिनु सिमरन दिनु रैनि ब्रिथा बिहाइ।
मेघ बिना जिउ खेती जाइ।
गोबिंद भजन बिनु ब्रिथे सभ काम।
जिउ किरपन के निरारथ दाम।
धंनि-धंनि ते जन जिह घटि बसिओ हरि नाउ।
नानक ता कै बलिबलि जाउ।

(परमात्मा से) टूटे हुए आदमी की उम्र व्यर्थ जाती है (क्योंकि) सच्चे प्रभु (के नाम) के बिना वह कैसे सच्चा हो सकता है? नाम के बिना अन्धे (शाक्त) का शरीर किसी काम का नहीं, (क्योंकि) उसके मुँह से बदबू आती है। जैसे वर्षा के बिना फसल बेकार जाती है, (वैसे) स्मरण के बिना (नास्तिक) के दिन-रात व्यर्थ जाते हैं। प्रभु के भजन के बिना सारे ही काम निरर्थक हैं (क्योंकि ये काम मनुष्य का कुछ भी नहीं सँवारते), जैसे कंजूस का धन उसके किसी काम नहीं आता। वे मनुष्य भाग्यशाली हैं, जिनके हृदय में प्रभु का नाम बसता है। हे नानक! (कह कि) मैं उन (गुरमुखों पर) बलिहारी जाता हूँ।

रहत अवर कछु अवर कमावत।
मनि नही प्रीति मुखहु गंढ लावत।
जाननहार प्रभू परबीन।
बाहरि भेख न काहू भीन।
अवर उपदेसै आपि न करै।
आवत जावत जनमै मरै।
जिस कै अंतरि बसै निरंकारु।
तिस की सीख तरै संसारु।
जो तुम भाने तिन प्रभु जाता।
नानक उन जन चरन पराता।

धर्म के बाह्य चिह्न दूसरे हैं तथा वास्तविक जिन्दगी कुछ और है; मन में तो प्रभु के साथ प्रेम नहीं, मुख द्वारा बातें करके घर पूरा करता है। परमन की जाननेवाला प्रभु बुद्धिमान है, (वह कभी) किसी के बाहरी वेश से प्रसन्न नहीं हुआ। (जो मनुष्य) दूसरों को शिक्षा देता है, पर आप नहीं कमाता, वह सदा जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। जिस मनुष्य के हृदय में निरंकार बसता है, उसकी शिक्षा से जगत् (विकारों से) बचता है। (हे प्रभु!) जो तुझे प्यारे लगते हैं, उन्होंने तुझे पहचाना है। हे नानक! (कह)—मैं उन (भक्तों) के चरण छूता हूँ।

करउ बेनती पारब्रहमु सभु जानै।
अपना कीआ आपहि मानै।
आपहि आप आपि करत निबेरा।
किसै दूरि जनावत किसै बुझावत नेरा।
उपाव सिआनप सगल ते रहत।
सभु किछु जानै आतम की रहत।
जिसु भावै तिसु लए लड़ि लाइ।
थान थनंतरि रहिआ समाइ।
सो सेवकु जिसु किरपा करी।
निमख निमख जपि नानक हरी।

(जो) प्रार्थना मैं करता हूँ, प्रभु सब जानता है, अपने पैदा किए जीव को वह आप ही मान देता है। (जीवों के कर्मों के अनुसार) प्रभु आप ही न्याय करता है, (अर्थात्) किसी को यह बुद्धि देता है कि प्रभु हमारे निकट है और किसी को बताता है कि प्रभु कहीं दूर है। सब प्रयासों, चतुराइयों से (प्रभु) परे है (क्योंकि वह जीव के) आत्मिक आचरण की हरेक बात समझता है। जो जीव को भला लगता है, उसे अपने साथ लगाता है, प्रभु सर्वत्र श्रेष्ठ है। वही मनुष्य (असली) सेवक बनता है, जिस पर प्रभु कृपा करता है। हे नानक! ऐसे प्रभु को प्रतिपल याद कर।

ੴ

✣ सलोकु ✣

काम क्रोध अरु लोभ मोह
बिनसि जाइ अहंमेव।
नानक प्रभ सरणागती
करि प्रसादु गुरदेव।
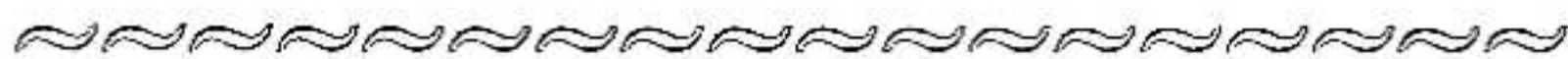
हे नानक! (प्रार्थना कर और कह)—हे गुरुदेव! हे प्रभु! मैं शरणागत हूँ, (मुझ पर) कृपा कर, (मेरा) काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार दूर हो जाए।

❖ असटपदी ❖

जिह प्रसादि छतीह अंम्रित खाहि।
तिसु ठाकुर कउ रखु मन माहि।
जिह प्रसादि सुगंधत तनि लावहि।
तिस कउ सिमरत परम गति पावहि।
जिह प्रसादि बसहि सुख मंदिर।
तिसहि धिआइ सदा मन अंदरि।
जिह प्रसादि ग्रिह संगि सुख बसना।
आठ पहर सिमरहु तिसु रसना।
जिह प्रसादि रंग रस भोग।
नानक सदा धिआईऐ धिआवन जोग।
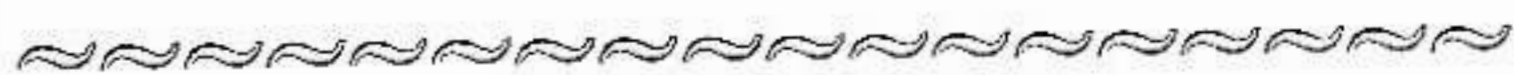
(हे भाई!) जिसकी कृपा से तू कई किस्मों के स्वादिष्ट खाने खाता है, उसे मन में (स्मरण) रख, जिसकी कृपा से अपने शरीर पर तू सुगंधियाँ लगाता है, उसे याद करने से तू उच्च स्थान प्राप्त कर लेगा। जिसकी दया से तू महलों में बसता है, उसे सदा मन में स्मरण कर। जिसकी कृपा से तू घर में मौज से रह रहा है, उसे जीभ से आठों प्रहर स्मरण कर। हे नानक! जिस (प्रभु) की कृपा से कौतुक-तमाशे, स्वादिष्ट भोजन और पदार्थ (प्राप्त होते हैं) उस स्मरण योग्य (भगवान) को सदा ही स्मरण करना चाहिए।

जिह प्रसादि पाट पटंबर हढावहि।
तिसहि तिआगि कत अवर लुभावहि।
जिह प्रसादि सुखि सेज सोईजै।
मन आठ पहर ताका जसु गावीजै।
जिह प्रसादि तुझु सभु कोऊ मानै।
मुखि ताको जसु रसन बखानै।
जिह प्रसादि तेरो रहता धरमु।
मन सदा धिआइ केवल पारब्रह्मु।
प्रभ जी जपत दरगह मानु पावहि।
नानक पति सेती घरि जावहि।

(हे मन!) जिसकी कृपा से तू रेशमी कपड़े पहनता है, उसे भुलाकर और कहाँ लुब्ध हो रहा है? जिस कृपा से सुखपूर्वक सेज पर सोता है, हे मन! उस प्रभु का यश आठों प्रहर गाना चाहिए। जिसकी कृपा से हरेक मनुष्य तेरा आदर करता है, उसकी प्रशंसा मुँह, जिह्वा से सदा कर। जिसकी कृपा से तेरा धर्म (स्थिर) रहता है, हे मन! तू सदा उस परमेश्वर को स्मरण कर। हे नानक! परमात्मा का भजन करने से (उसके) दरबार में आदर पाएगा और (यहाँ से) ससम्मान अपने घर (परलोक) जायेगा।

जिह प्रसादि आरोग कंचन देही।
लिव लावहु तिसु राम सनेही।
जिह प्रसादि तेरा ओला रहत।
मन सुखु पावहि हरि हरि जसु कहत।
जिस प्रसादि तेरे सगल छिद्र ढाके।
मन सरनी परु ठाकुर प्रभ ता कै।
जिह प्रसादि तुझु को न पहूचै।
मन सासि सासि सिमरहु प्रभ ऊचे।
जिह प्रसादि पाई दुर्लभ देह।
नानक ता की भगति करेह।
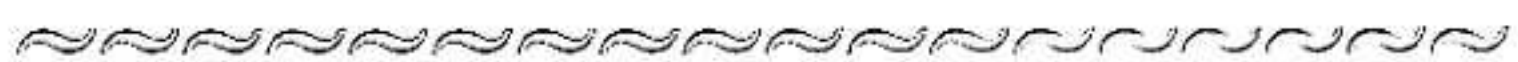
जिसकी कृपा से सोने जैसी तेरी सुन्दर देह है, उस प्यारे राम से लौ जोड़। जिसकी कृपा से तेरा परदा बना रहता है, हे मन! उस प्रभु के गुण गाते हुए सुख पाएगा। जिसकी कृपा से तेरे सारे दोष ढके रहते हैं, हे मन! उस प्रभु ठाकुर की शरण लो। जिसकी कृपा से कोई तेरी बराबरी नहीं कर सकता, हे मन! उस महान् प्रभु को प्रत्येक श्वास स्मरण कर। हे नानक! जिसकी कृपा से तुझे यह मनुष्य शरीर मिला है, जो बड़ी मुश्किल से मिलता है, उस प्रभु की भक्ति कर।

जिह प्रसादि आभूखन पहिरीजै।
मन तिसु सिमरत किउ आलसु कीजै।
जिह प्रसादि अस्व हसति असवारी।
मन तिसु प्रभ कउ कबहू न बिसारी।
जिह प्रसादि बाग मिलख धना।
राखु परोइ प्रभु अपुने मना।
जिनि तेरी मन बनत बनाई।
ऊठत बैठत सद तिसहि धिआई।
तिसहि धिआइ जो एक अलखै।
ईहा ऊहा नानक तेरी रखै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिसकी कृपा से गहने पहने जाते हैं, हे मन! उसे स्मरण करते हुए आलस्य क्यों किया जाए? जिसकी कृपा से घोड़ों तथा हाथियों की सवारी करता है, हे मन! उस प्रभु को कभी न भुलाना। जिसकी दया से बाग, जमीन और धन (तुझे प्राप्त हुए हैं) उस प्रभु को अपने मन में पिरोकर रख। हे मन! जिस प्रभु ने तुझे बनाया है, उठते-बैठते उसे स्मरण कर। हे नानक! उस प्रभु को सदा स्मरण कर, जो एक है, और अनन्त है। लोक तथा परलोक में (वही) तेरी लाज रखने वाला है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिह प्रसादि करहि पुंन बहु दान।
मन आठ पहर करि तिस का धिआन।
जिह प्रसादि तू आचार बिउहारी।
तिसु प्रभ कउ सासि सासि चितारी।
जिस प्रसादि तेरा सुंदर रूपु।
सो प्रभु सिमरहु सदा अनूपु।
जिह प्रसादि तेरी नीकी जाति।
सो प्रभु सिमरि सदा दिन राति।
जिह प्रसादि तेरी पति रहै।
गुर प्रसादि नानक जसु कहै।

जिसकी कृपा से तू बहुत दान-पुण्य करता है, हे मन! आठों प्रहर उसका स्मरण कर। जिसकी कृपा से तू रीति-रस्म करने योग्य हुआ है, उस प्रभु को प्रत्येक श्वास में याद रख। जिसकी दया से तेरी सुन्दर शक्ल है, उस सुन्दर मालिक को सदा स्मरण कर। जिस प्रभु की कृपा से तुझे (मनुष्य-) जाति मिली है, उसे सदा दिन-रात स्मरण कर। जिसकी कृपा से तेरी प्रतिष्ठा बनी हुई है, (उसका नाम-स्मरण कर)। गुरु के प्रभाव से (भाग्यशाली मनुष्य) उसकी गुणस्तुति करता है।

जिह प्रसादि सुनहि करन नाद।
जिह प्रसादि पेखहि बिसमाद।
जिह प्रसादि बोलहि अंम्रित रसना।
जिह प्रसादि सुखि सहजे बसना।
जिह प्रसादि हसत कर चलहि।
जिह प्रसादि संपूरन फलहि।
जिह प्रसादि परम गति पावहि।
जिह प्रसादि सुखि सहजि समावहि।
ऐसा प्रभु तिआगि अवर कत लागहु।
गुर प्रसादि नानक मनि जागहु।

जिसकी कृपा से तू कानों से आवाज सुनता है, जिसकी कृपा से कौतुकपूर्ण दृश्य देखता है; जिसके प्रभाव से जीभ से मीठे बोल बोलता है, जिसकी कृपा से स्वाभाविक ही सुखी बस रहा है, जिसकी दया से तेरे हाथ काम दे रहे हैं, जिसकी कृपा से तू हरेक काम-काज में सफल होता है; जिसकी कृपा से तुझे उच्च स्थान मिलता है और तू सुख तथा बेफिक्री में मस्त है; ऐसा प्रभु भुलाकर तू किस ओर लग रहा है? हे नानक! गुरु के प्रभाव से मन में सचेत रहो।

जिह प्रसादि तूं प्रगटु संसारि।
तिसु प्रभ कउ मूलि न मनहु बिसारि।
जिह प्रसादि तेरा परतापु।
रे मन मूड़ तू ता कउ जापु।
जिह प्रसादि तेरे कारज पूरे।
तिसहि जानु मन सदा हजूरे।
जिह प्रसादि तूं पावहि साचु।
रे मन मेरे तूं ता सिउ राचु।
जिह प्रसादि सभ की गति होइ।
नामक जापु जपै जपु सोइ।

जिसकी कृपा से तू जगत् में शोभा वाला है, उसे कभी भी मन से न भुला। जिसकी कृपा से तुझे प्रशंसा मिली हुई है, हे मूर्ख मन! तू उस प्रभु को जप! जिसकी कृपा से तेरे (सारे) काम सफल होते हैं, हे मन! तू उस (प्रभु) को सदा अपने साथ-साथ जान। जिसके प्रभाव से तुझे सत्य प्राप्त होता है, हे मेरे मन! तू उस (प्रभु) के साथ जुड़ा रह। जिस (परमात्मा) की दया से हरेक (जीव) की (उस तक) पहुँच हो जाती है, हे नानक! उस (हरि) का नाम ही जपना चाहिये।

आपि जपाए जपै सो नाउ।
आपि गावाए सु हरि गुन गाउ।
प्रभ किरपा ते होइ प्रगासु।
प्रभू दइआ ते कमल बिगासु।
प्रभ सुप्रसंन बसै मनि सोइ।
प्रभ दइआ ते मति ऊतम होइ।
सरब निधान प्रभ तेरी मइआ।
आपहु कछू न किनहू लइआ।
जितु जितु लावहू तितु लगहि हरि नाथ।
नानक इन कै कछू न हाथ।
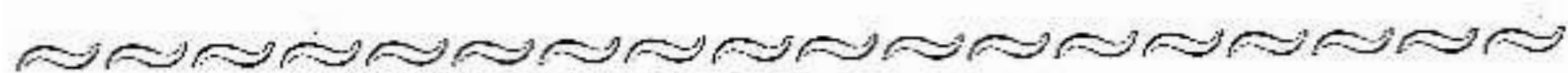
वही मनुष्य प्रभु का नाम जपता है, जिससे वह प्रभु आप जपाता है; वही मनुष्य हरि के गुण गाता है, जिसे वह गाने के लिए प्रेरित करता है। प्रभु की कृपा से (मन में ज्ञान का) प्रकाश होता है; उसकी दया से हृदय-रूपी कमल-फूल खिलता है। वह प्रभु (उस मनुष्य के) मन में बसता है, जिसपर वह प्रसन्न होता है, प्रभु की कृपा से (मनुष्य की) बुद्धि भली होती है। हे प्रभु! तेरी कृपा-दृष्टि में सारे खजाने हैं, अपने प्रयास से किसी ने कुछ भी प्राप्त नहीं किया। हे हरि स्वामी! तुम जिधर जीवों को लगाते हो, वे उधर ही लगते हैं। हे नानक! जीवों के वश में कुछ नहीं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

अगम अगाधि पारब्रहमु सोइ।
जो जो कहै सु मुकता होइ।
सुनि मीता नानकु बिनवंता।
साध जना की अचरज कथा।

वह अन्तहीन प्रभु (जीव की) पहुँच से परे है और अथाह है। जो-जो मनुष्य उसे स्मरण करता है, वह (-वह विकारों के जाल से) मुक्ति पा लेता है। हे मित्र! सुन, नानक प्रार्थना करता है—(स्मरण करनेवाले) गुरमुखों (के गुणों) का जिक्र हैरान करने वाला है।

असटपदी

साध कै संगि मुख ऊजल होत।
साधसंगि मलु सगली खोत।
साध कै संगि मिटै अभिमानु।
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु।
साध कै संगि बुझै प्रभु नेरा।
साधसंगि सभु होत निबेरा।
साध कै संगि पाए नाम रतनु।
साध कै संगि एक ऊपरि जतनु।
साध की महिमा बरनै कउनु प्रानी।
नानक साध की सोभा प्रभ माहि समानी।
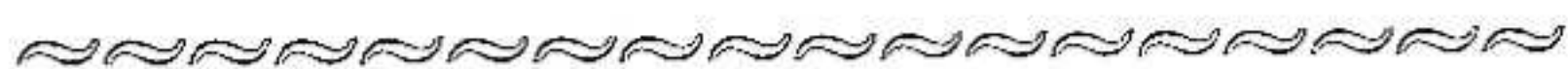
गुरमुखों की संगति में रहने से मुख उजले होते हैं, (अर्थात् प्रतिष्ठा बन आती है) (क्योंकि) साधुजनों के पास रहने से (विकारों की) सारी मैल मिट जाती है। साधु पुरुषों की संगति में अहंकार दूर होता है और श्रेष्ठ ज्ञान प्रकट होता है। संतों की संगति में प्रभु साथ-साथ रहता हुआ लगता है, (इसलिए) वासना की सारी समाप्ति हो जाती है, (अर्थात् जीव कुमार्ग पर नहीं लगता)। गुरमुखों की संगति में मनुष्य नाम-रूपी रत्न प्राप्त कर लेता है, और, एक प्रभु को मिलने का यत्न करता है। साधु पुरुषों की प्रशंसा कौन मनुष्य व्यक्त कर सकता है? (क्योंकि) हे नानक! संतजनों की शोभा प्रभु की सेवा के बराबर हो जाती है।

साध कै संगि अगोचरु मिलै।
साध कै संगि सदा परफुलै।
साध कै संगि आवहि बसि पंचा।
साधसंगि अंम्रित रसु भुंचा।
साधसंगि होइ सभ की रेन।
साध कै संगि मनोहर बैन।
साध कै संगि न कतहूं धावै।
साधसंगि असथिति मनु पावै।
साध कै संगि माइआ ते भिंन।
साधसंगि नानक प्रभ सुप्रसंन।

~~~~~~

गुरमुखों की संगति में (मनुष्य को) वह प्रभु मिल जाता है जो शारीरिक इन्द्रियों की पहुँच से परे है; और मनुष्य सदा प्रसन्न रहता है। संतों की संगति में रहने से कामादिक पाँचों विकार काबू में आ जाते हैं, (क्योंकि मनुष्य) नाम-रूपी अमृत का रस चख लेता है। सज्जनों की संगति करने से (मनुष्य) सबके चरणों की धूलि बन जाता है और (सब से) मीठे वचन बोलता है। सज्जनों में रहने से (मनुष्य का) मन किसी ओर नहीं दौड़ता, और (प्रभु के चरणों में) टिकाव प्राप्त कर लेता है। हे नानक! गुरमुखों की संगति में टिकने से (मनुष्य) माया के प्रभाव से अप्रभावित रहता है और अकालपुरुष इस पर दयालु होता है।
~~~~~~

साधसंगि दुसमन सभि मीत।
साधू कै संगि महा पुनीत।
साधसंगि किस सिउ नही बैरु।
साध कै संगि न बीगा पैरु।
साध कै संगि नाही को मंदा।
साधसंगि जाने परमानंदा।
साध कै संगि नाही हउ तापु।
साध कै संगि तजै सभु आपु।
आपे जानै साध बड़ाई।
नानक साध प्रभू बनि आई।

गुरमुखों की संगति में रहने से सारे वैरी (भी) मित्र (दिखने लगते हैं), (क्योंकि) संतजनों की संगति में बैठने से किसी के साथ वैर नहीं रह जाता और किसी कुमार्ग की ओर चरण नहीं उठते। भलों की संगति में कोई मनुष्य बुरा दिखाई नहीं देता, (क्योंकि मनुष्य सर्वत्र) उच्च सुख के स्वामी प्रभु को ही जानता है। गुरमुख की संगति करने से अहंकार-रूपी ताप नहीं रह जाता, (क्योंकि) सत्संगति में मनुष्य तमाम आपाभाव छोड़ देता है। सज्जन की महानता प्रभु आप ही जानता है, (क्योंकि) हे नानक! साधु और प्रभु का प्रेम परिपक्व हो जाता है।

साध कै संगि न कबहू धावै।
साध कै संगि सदा सुखु पावै।
साधसंगि बसतु अगोचर लहै।
साधू कै संगि अजरु सहै।
साध कै संगि बसै थानि ऊचै।
साधू कै संगि महलि पहूचै।
साध कै संगि द्रिड़ै सभि धरम।
साध कै संगि केवल पारब्रहम।
साध कै संगि पाए नाम निधान।
नानक साधू कै कुरबान।

गुरमुखों की संगति में रहने से मनुष्य का मन कभी नहीं भटकता, (क्योंकि) सज्जनों की संगति में (प्रभु का) नाम-रूपी अगोचर वस्तु मिल जाती है, (और मनुष्य) कभी शिथिल न होनेवाली शक्ति प्राप्त कर लेता है। गुरमुखों की संगति में रहकर मनुष्य उच्च ठिकाने पर रहता है और अकालपुरुष के चरणों में जुड़ा रहता है। संतों की संगति में रहकर (मनुष्य) सारे धर्मों को अच्छी तरह समझ लेता है और केवल अकालपुरुष को (सर्वत्र देखता है)। संतों की संगति में (मनुष्य) नाम-भण्डार प्राप्त कर लेता है, (इसलिए) हे नानक! (कह—) मैं सज्जनों पर बलिहारी हूँ।

साध कै संगि सभ कुल उधारै।
साधसंगि साजन मीत कुटंब निसतारै।
साधू कै संगि सो धनु पावै।
जिसु धन ते सभु को वरसावै।
साधसंगि धरम राइ करे सेवा।
साध कै संगि सोभा सुरदेवा।
साधू कै संगि पाप पलाइन।
साधसंगि अंम्रित गुन गाइन।
साध कै संगि स्रब थान गंमि।
नानक साध कै संगि सफल जनंम।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

गुरमुखों की संगति में रहकर (मनुष्य अपनी) सारी वंशावलि (विकारों से) बचा लेता है और सज्जनों, मित्रों तथा परिवार को पार कर लेता है। संतों की संगति में मनुष्य को वह धन प्राप्त हो जाता है, जिस धन के मिलने से हरेक मनुष्य प्रसिद्धि वाला हो जाता है। सज्जनों की संगति में रहने से धर्मराज (भी) सेवा करता है और देवता (भी) शोभित करते हैं। गुरमुखों की संगति में पाप दूर हो जाते हैं, (क्योंकि उनकी संगति में) प्रभु के अमर करने वाले गुण (मनुष्य) गाते हैं। संतों की संगति में रहकर सब ओर पहुँच हो जाती है; हे नानक! साधुओं की संगति में मनुष्य-जन्म का फल मिल जाता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

साध कै संगि नही कछु घाल।
दरसनु भेटत होत निहाल।
साध कै संगि कलूखत हरै।
साध कै संगि नरक परहरै।
साध कै संगि ईहा ऊहा सुहेला।
साधसंगि बिछुरत हरि मेला।
जो इछै सोई फलु पावै।
साध कै संगि न बिरथा जावै।
पारब्रहमु साध रिद बसै।
नानक उधरै साध सुनि रसै।

साधुओं की संगति में रहने से तप आदि करने की आवश्यकता नहीं रहती, (क्योंकि उन) का दर्शनमात्र करके हृदय प्रसन्न हो जाता है। गुरमुखों की संगति में (मनुष्य) अपने पाप नष्ट कर लेता है (और इस प्रकार) नरकों से बच जाता है। संतों की संगति में रहकर (मनुष्य) लोक तथा परलोक में सुखी हो जाता है और प्रभु से बिछुड़ा हुआ (दोबारा) उसे मिल पड़ता है। गुरमुखों की संगति में (मनुष्य) इच्छा से प्यासा नहीं जाता, (बल्कि) जो इच्छा करता है, वही फल पाता है। अकालपुरुष संतजनों के हृदय में बसता है; हे नानक! (मनुष्य) संतजनों की जीभ से (उपदेश) सुनकर (विकारों से) बच जाता है।

साध कै संगि सुनउ हरि नाउ।
साधसंगि हरि के गुन गाउ।
साध कै संगि न मन ते बिसरै।
साधसंगि सरपर निसतरै।
साध कै संगि लगै प्रभु मीठा।
साधू कै संगि घटि घटि डीठा।
साधसंगि भए आगिआकारी।
साधसंगि गति भई हमारी।
साध कै संगि मिटे सभि रोग।
नानक साध भेटे संजोग।
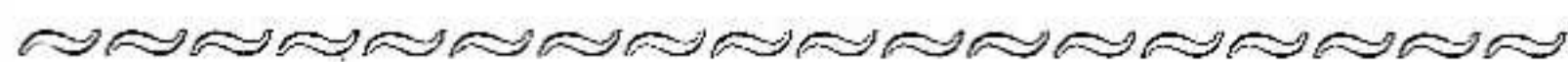
मैं गुरमुखों की संगति में रहकर प्रभु का नाम सुनूँ और प्रभु के गुण गाऊँ। संतों की संगति में रहने से प्रभु मन से विस्मृत नहीं होता, संतों की संगति में मनुष्य अवश्य (विकारों से) बच निकलता है। सज्जनों की संगति में रहने से प्रभु प्यारा लगने लगता है और वह हरेक शरीर में दिखाई देने लगता है। सत्संगति करने से (हम) प्रभु का हुक्म माननेवाले हो जाते हैं और हमारी आत्मिक अवस्था सुधर जाती है। संतों की संगति में सारे रोग मिट जाते हैं; हे नानक! (बड़े) भाग्यों से संतजन मिलते हैं।

साध की महिमा बेद न जानहि।
जेता सुनहि तेता बखिआनहि।
साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि।
साध की उपमा रही भरपूरि।
साध की सोभा का नाहीं अंत।
साध की सोभा सदा बेअंत।
साध की सोभा ऊच ते ऊची।
साध की सोभा मूच ते मूची।
साध की सोभा साध बनि आई।
नानक साध प्रभ भेदु न भाई।

संत की महानता वेद (भी) नहीं जानते, वे तो जितना सुनते हैं, उतना ही व्यक्त करते हैं, (पर संत की महिमा कथन से परे है)। संत की समानता तीनों गुणों से परे है। साधु की समानता उस प्रभु से हो सकती है जो सर्वत्र व्यापक है। साधु की शोभा का अन्दाजा नहीं लग सकता, सदा (इसे) अभेद ही (कहा जा सकता है)। साधु की शोभा सब की शोभा से ऊँची है और महान् है। साधु की शोभा साधु को ही उपयुक्त लगती है, (क्योंकि) हे नानक! (कह—) साधु तथा प्रभु में कोई भेद नहीं है।

ੴ

❖ सलोकु ❖

मनि साचा मुखि साचा सोइ।
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ।
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ।

(जिस मनुष्य के) मन में सदा सत्यस्वरूप प्रभु है (जो) मुँह से उसी प्रभु को (जपता है), (जो मनुष्य) एक अकालपुरुष के अतिरिक्त (कहीं भी) किसी दूसरे को नहीं देखता, हे नानक! (वह मनुष्य) इन गुणों के कारण ब्रह्मज्ञानी हो जाता है।

✤ असटपदी ✤

ब्रहम गिआनी सदा निरलेप।
जैसे जल महि कमल अलेप।
ब्रहम गिआनी सदा निरदोख।
जैसे सूरु सरब कउ सोख।
ब्रहम गिआनी कै द्रिसटि समानि।
जैसे राज रंक कउ लागै तुलि पवान।
ब्रहम गिआनी कै धीरजु एक।
जिउ बसुधा कोऊ खोदै कोऊ चंदन लेप।
ब्रहम गिआनी का इहै गुनाउ।
नानक जिउ पावक का सहज सुभाउ।

ब्रह्मज्ञानी (मनुष्य विकारों से) सदा निर्लिप्त (रहते हैं) जैसे पानी में (उगे हुए) कमल-पुष्प (कीचड़ से) स्वच्छ होते हैं। जैसे सूरज सारे (रसों) को सुखा देता है, (वैसे) ब्रह्मज्ञानी (मनुष्य) सारे पापों से बचे रहते हैं। जैसे हवा राजा और कंगाल दोनों को एक सी लगती है, (वैसे) ब्रह्मज्ञानी के भीतर (सब की ओर) एक सी दृष्टि (से देखने का स्वभाव होता) है। (कोई कुछ भी कहे, पर) ब्रह्मज्ञानी मनुष्यों के भीतर निरन्तर हौसला रहता है, जैसे कोई तो धरती को खोदता है और कोई चन्दन का लेप करता है, (परन्तु धरती को कोई परवाह नहीं)। हे नानक! जैसे आग का सहज स्वभाव है, (हरेक वस्तु का मैल जला देना) (वैसे) ब्रह्मज्ञानी मनुष्य का (भी) यही गुण है।

ब्रहम गिआनी निरमल ते निरमला।
जैसे मैलु न लागै जला।
ब्रहम गिआनी कै मनि होइ प्रगासु।
जैसे धर ऊपरि आकासु।
ब्रहम गिआनी कै मित्र सत्रु समानि।
ब्रहम गिआनी कै नाही अभिमान।
ब्रहम गिआनी ऊच ते ऊचा।
मनि अपनै है सभ ते नीचा।
ब्रहम गिआनी से जन भए।
नानक जिन प्रभु आपि करेइ।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जैसे पानी को कभी मैल नहीं लगती (दोबारा स्वच्छ हो जाता है, वैसे ही) ब्रह्मज्ञानी मनुष्य (विकारों की मैल से बचकर) सदा निर्मल है। जैसे धरती पर आकाश (सर्वत्र व्यापक है, वैसे) ब्रह्मज्ञानी के मन में (यह) प्रकाश हो जाता है कि (प्रभु सर्वत्र मौजूद है), ब्रह्मज्ञानी को सज्जन तथा बैरी एक जैसा लगता है, (क्योंकि) उसके भीतर अहंकार नहीं है। ब्रह्मज्ञानी (आत्मिक अवस्था में) सर्वोच्च है, (पर) अपने मन में (अपने आपको) सबसे छोटा (जानता है)। हे नानक! वही मनुष्य ब्रह्मज्ञानी बनते हैं, जिन्हें प्रभु आप बनाता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ब्रहम गिआनी सगल की रीना।
आतम रसु ब्रहम गिआनी चीना।
ब्रहम गिआनी की सभ ऊपरि मइआ।
ब्रहम गिआनी ते कछु बुरा न भइआ।
ब्रहम गिआनी सदा समदरसी।
ब्रहम गिआनी की द्रिसटि अंम्रितु बरसी।
ब्रहम गिआनी बंधन ते मुकता।
ब्रहम गिआनी की निरमल जुगता।
ब्रहम गिआनी का भोजनु गिआन।
नानक ब्रहम गिआनी का ब्रहम धिआनु।

ब्रह्मज्ञानी सारे (व्यक्तियों) के पैरों की धूलि (होकर रहता है); उसने आत्मिक आनन्द को पहचान लिया है। ब्रह्मज्ञानी सब पर प्रसन्न होता है और कोई कुकर्म नहीं करता। ब्रह्मज्ञानी सदा सबकी ओर समान दृष्टि से देखता है, उसकी दृष्टि से (सब पर) अमृत की वर्षा होती है। ब्रह्मज्ञानी (माया के) बन्धनों से स्वतन्त्र होता है और उसकी जीवन-युक्ति विकारों से रहित है। (ईश्वरीय-) ज्ञान ब्रह्मज्ञानी की खुराक है, हे नानक! ब्रह्मज्ञानी की सुरति अकालपुरुष से जुड़ी रहती है।

ब्रहम गिआनी एक ऊपरि आस।
ब्रहम गिआनी का नही बिनास।
ब्रहम गिआनी कै गरीबी समाहा।
ब्रहम गिआनी परउपकार उमाहा।
ब्रहम गिआनी कै नाही धंधा।
ब्रहम गिआनी ले धावतु बंधा।
ब्रहम गिआनी कै होइ सु भला।
ब्रहम गिआनी सुफल फला।
ब्रहम गिआनी संगि सगल उधारु।
नानक ब्रहम गिआनी जपै सगल संसारु।

ब्रह्मज्ञानी एक अकालपुरुष पर आस रखता है; ब्रह्मज्ञानी (की उच्च आत्मिक अवस्था) का कभी नाश नहीं होता है। ब्रह्मज्ञानी के हृदय में गरीबी (का भाव) टिका रहता है और उसे दूसरों की भलाई करने का (सदा) चाव (चढ़ा रहता है)। ब्रह्मज्ञानी के मन में (माया का) जंजाल नहीं होता, (क्योंकि) वह भटकते मन को काबू करके (माया से) रोक सकता है। जो कुछ (प्रभु की ओर से) होता है, ब्रह्मज्ञानी को अपने मन में भला प्रतीत होता है, (इस प्रकार) उसका मनुष्य-जन्म भली प्रकार सफल होता है। ब्रह्मज्ञानी की संगति में सबका बेड़ा पार होता है, (क्योंकि) हे नानक! ब्रह्मज्ञानी के द्वारा सारा जगत् (ही) (प्रभु का नाम) जपने लगता है।

ब्रहम गिआनी कै एकै रंग।
ब्रहम गिआनी कै बसै प्रभु संग।
ब्रहम गिआनी कै नामु आधारु।
ब्रहम गिआनी कै नामु परवारु।
ब्रहम गिआनी सदा सद जागत।
ब्रहम गिआनी अहंबुधि तिआगत।
ब्रहम गिआनी कै मनि परमानंद।
ब्रहम गिआनी कै घरि सदा अनंद।
ब्रहम गिआनी सुख सहज निवास।
नानक ब्रहम गिआनी का नही बिनास।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ब्रह्मज्ञानी के हृदय में सदा एक अकालपुरुष का प्यार (रहता) है, (इसलिए) प्रभु ब्रह्मज्ञानी के साथ-साथ रहता है। ब्रह्मज्ञानी के मन में प्रभु (के नाम) की टेक है और नाम ही उसका परिवार है। ब्रह्मज्ञानी सदा सचेत रहता है और 'मैं, मैं' करने वाली बुद्धि छोड़ देता है। ब्रह्मज्ञानी के मन में उच्च सुख का स्वामी अकालपुरुष बसता है, (इसलिए) उसके हृदय-रूपी घर में सदा प्रसन्नता है। ब्रह्मज्ञानी (मनुष्य) सुख तथा शान्ति में टिका रहता है; (और) हे नानक! ब्रह्मज्ञानी का कभी नाश नहीं होता।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ब्रहम गिआनी ब्रहम का बेता।
ब्रहम गिआनी एक संगि हेता।
ब्रहम गिआनी कै होइ अचिंत।
ब्रहम गिआनी का निरमल मंत।
ब्रहम गिआनी जिसु करै प्रभु आपि।
ब्रहम गिआनी का बड परताप।
ब्रहम गिआनी का दरसु बडभागी पाईऐ।
ब्रहम गिआनी कउ बलि बलि जाईऐ।
ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर।
नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर।
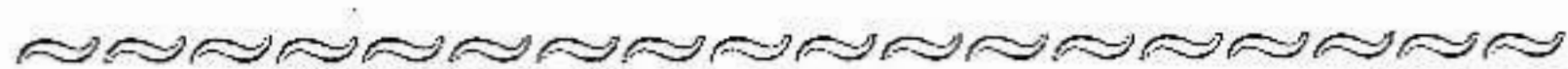
ब्रह्मज्ञानी (मनुष्य) अकालपुरुष का ज्ञाता बन जाता है और वह एक प्रभु से ही प्रेम करता है। ब्रह्मज्ञानी के मन में (सदा) बेफिक्री रहती है, उसका उपदेश पवित्र करनेवाला होता है। ब्रह्मज्ञानी की बड़ी प्रसिद्धि हो जाती है, (पर वही मनुष्य ब्रह्मज्ञानी बनता है), जिसे प्रभु आप बनाता है। ब्रह्मज्ञानी का दर्शन बड़े भाग्यों से होता है; उस पर सदा बलिहारी जाएँ; शिव (आदि देवगण भी) ब्रह्मज्ञानी को खोजते फिरते हैं; हे नानक! अकालपुरुष आप ब्रह्मज्ञानी (का रूप) है।

ब्रहम गिआनी की कीमति नाहि।
ब्रहम गिआनी कै सगल मन माहि।
ब्रहम गिआनी का कउन जानै भेदु।
ब्रहम गिआनी कउ सदा अदेसु।
ब्रहम गिआनी का कथिआ न जाइ अधाख्यरु।
ब्रहम गिआनी सरब का ठाकुरु।
ब्रहम गिआनी की मिति कउनु बखानै।
ब्रहम गिआनी की गति ब्रहम गिआनी जानै।
ब्रहम गिआनी का अंतु न पारु।
नानक ब्रहम गिआनी कउ सदा नमसकारु।
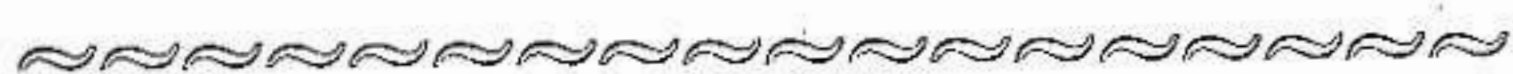
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ब्रह्मज्ञानी के गुणों का मूल्यांकन नहीं हो सकता, सारे ही (गुण) ब्रह्मज्ञानी के भीतर हैं। कौन सा मनुष्य ब्रह्मज्ञानी (की ऊँची जिन्दगी) का भेद पा सकता है! ब्रह्मज्ञानी के समक्ष झुकना ही (शोभा देता) है। ब्रह्मज्ञानी (की महिमा) का आधा अक्षर भी बखान नहीं किया जा सकता; वह सारे जीवों का पूज्य है। ब्रह्मज्ञानी (की ऊँची जिन्दगी) का अनुमान कौन लगा सकता है; उसकी हालत (उस जैसा) ब्रह्मज्ञानी ही जानता है। ब्रह्मज्ञानी (के गुणों के समुद्र) का कोई ओर-छोर नहीं; हे नानक! सदा ब्रह्मज्ञानी के चरणों पर पड़ा रह।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ब्रहम गिआनी सभ स्रिसटि का करता।
ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता।
ब्रहम गिआनी मुकति जुगति जीअ का दाता।
ब्रहम गिआनी पूरन पुरखु बिधाता।
ब्रहम गिआनी अनाथ का नाथु।
ब्रहम गिआनी का सभ ऊपरि हाथु।
ब्रहम गिआनी का सगल अकारु।
ब्रहम गिआनी आपि निरंकारु।
ब्रहम गिआनी की सोभा ब्रहमगिआनी बनी।
नानक ब्रहम गिआनी सरब का धनी।
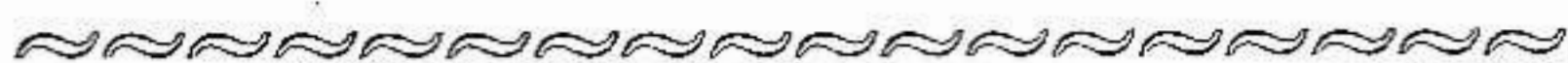
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ब्रह्मज्ञानी सारे जगत् का बनानेवाला है, सदा ही जीता है, कभी (जन्म) मरण के चक्र में नहीं आता। ब्रह्मज्ञानी मुक्ति का मार्ग (बताने वाला तथा उच्च आत्मिक) जिन्दगी का देने वाला है, वही पूर्णपुरुष तथा मालिक है। ब्रह्मज्ञानी निराश्रितों का आश्रय (स्वामी) है, सब की सहायता करता है। गोचर जगत् ब्रह्मज्ञानी का (अपना) है, वह तो प्रत्यक्ष ही परमात्मा है। ब्रह्मज्ञानी की महिमा (कोई) ब्रह्मज्ञानी ही कह सकता है; हे नानक! ब्रह्मज्ञानी सब जीवों का मालिक है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

ੴ

✣ सलोकु ✣

उरि धारै जो अंतरि नामु
सरब मै पेखै भगवानु।
निमख निमख ठाकुर नमसकारै
नानक ओहु अपरसु सगल निसतारै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जो मनुष्य सदा अपने हृदय में अकालपुरुष का नाम टिकाए रखता है और भगवान को सब में व्यापक देखता है, जो पल-पल अपने प्रभु को पुकारता है; हे नानक! वह (सच्चा) अस्पर्श (निर्लिप्त) है और वह सब जीवों को (संसार-समुद्र से) तार लेता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

✥ असटपदी ✥

मिथिआ नाही रसना परस।
मन महि प्रीति निरंजन दरस।
पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र।
साध की टहल संतसंगि हेत।
करन न सुनै काहू की निंदा।
सभ ते जानै आपस कउ मंदा।
गुर प्रसादि बिखिआ परहरै।
मन की बासना मन ते टरै।
इंद्री जित पंच दोख ते रहत।
नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस।

जो मनुष्य जीभ से मिथ्या नहीं बोलता, मन में अकालपुरुष के दर्शनों की इच्छा रखता है; जो पराई स्त्री के सौंदर्य को अपनी आँखों से नहीं देखता, (कुदृष्टि से नहीं देखता), भले मनुष्यों की सेवा करता है और संतजनों की संगति में प्रीति (रखता) है; जो कानों से किसी की निंदा नहीं सुनता, (बल्कि) अपने को सबसे छोटा समझता है; जो गुरु की कृपा के प्रभाव से माया (का प्रभाव) परे हटा देता है और जिसके मन की वासना मन से टल जाती है। जो अपनी ज्ञानेन्द्रियों को वश में रखकर कामादिक पाँचों विकारों से बचा रहता है, हे नानक! करोड़ों में कोई ऐसा विरला व्यक्ति 'अपरस' (पवित्र) कहा जा सकता है।

बैसनो सो जिसु ऊपरि सुप्रसंन।
बिसन की माइआ ते होइ भिंन।
करम करत होवै निहकरम।
तिसु बैसनो का निरमल धरम।
काहू फल की इछा नही बाछै।
केवल भगति कीरतन संगि राचै।
मन तन अंतरि सिमरन गोपाल।
सभ ऊपरि होवत किरपाल।
आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै।
नानक ओहु बैसनो परम गति पावै।
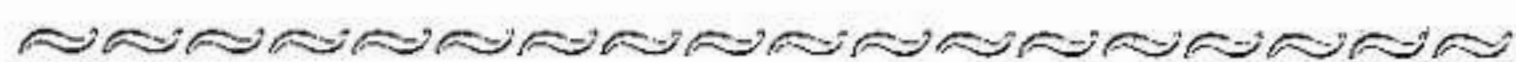
जो मनुष्य प्रभु की माया से अप्रभावित तथा निष्कलंक है, और, जिस पर प्रभु आप प्रसन्न होता है, उसे वास्तविक वैष्णव समझो। उस वैष्णव का धर्म भी पवित्र है, जो कर्म करता हुआ फल की इच्छा नहीं रखता। जो मनुष्य केवल भक्ति तथा कीर्तन में मस्त रहता है और किसी भी फल की अभिलाषा नहीं रखता; जिसके मन-तन में प्रभु का स्मरण बस रहा है, जो सब जीवों पर दया करता है। जो आप (प्रभु के नाम को) अपने मन में टिकाता है तथा दूसरों को (भी) नाम-स्मरण कराता है, हे नानक! वह वैष्णव का उच्च स्थान प्राप्त करता है।

भगउती भगवंत भगति का रंगु।
सगल तिआगै दुसट का संगु।
मन ते बिनसै सगला भरमु।
करि पूजै सगल पारब्रहमु।
साधसंगि पापा मलु खोवै।
तिसु भगउती की मति ऊतम होवै।
भगवंत की टहल करै नित नीति।
मनु तनु अरपै बिसन परीति।
हरि के चरन हिरदै बसावै।
नानक ऐसा भगउती भगवंत कउ पावै।

भगवान का वास्तविक उपासक (वह है, जिसके हृदय में) भगवान की भक्ति का प्रेम है और जो सब कुकर्मियों का संग छोड़ देता है; जिसके मन से हर प्रकार का भ्रम मिट जाता है, जो अकालपुरुष को सर्वत्र मौजूद जानकर पूजता है। उस भक्त की बुद्धि पवित्र होती है, जो गुरमुखों की संगति में रहकर पापों की मैल (मन से) दूर करता है। जो नित्य भगवान का स्मरण करता है, जो प्रभु-प्रेम पर अपना मन तथा तन बलिहारी कर देता है; जो प्रभु के चरण (सदा अपने) हृदय में बसाता है। हे नानक! ऐसा भक्त भगवान को प्राप्त कर लेता है।

सो पंडितु जो मनु परबोधै।
राम नामु आतम महि सोधै।
राम नाम सारु रसु पीवै।
उसु पंडित कै उपदेसि जगु जीवै।
हरि की कथा हिरदै बसावै।
सो पंडितु फिरि जोनि न आवै।
बेद पुरान सिम्रिति बूझै मूल।
सूखम महि जानै असथूलु।
चहु वरना कउ दे उपदेसु।
नानक उसु पंडित कउ सदा अदेसु।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

पण्डित वह है जो अपने मन को शिक्षा देता है और प्रभु के नाम को अपने मन में खोजता है। उस पण्डित के उपदेश से (सारा) संसार आत्मिक जिन्दगी प्राप्त करता है, जो प्रभु-नाम का मीठा स्वाद चखता है। वह पण्डित दोबारा जन्म (मरण) में नहीं आता, जो अकालपुरुष (की गुणस्तुति) की बातें अपने हृदय में बसाता है। जो वेद-पुराण स्मृतियों (आदि धार्मिक पुस्तकों) का आदि (प्रभु को) समझता है, जो यह जानता कि यह सारा दिखता हुआ जगत् अदृश्य प्रभु के ही आसरे है; जो (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र) चारों जातियों को शिक्षा देता है, हे नानक! (कह) उस पण्डित के समक्ष हम सदा सिर झुकाते हैं।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

बीज मंत्रु सरब को गिआनु।
चहु वरना महि जपै कोऊ नामु।
जो जो जपै तिस की गति होइ।
साधसंगि पावै जनु कोइ।
करि किरपा अंतरि उर धारै।
पसु प्रेत मुघद पाथर कउ तारै।
सरब रोग का अउखदु नामु।
कलिआण रूप मंगल गुण गाम।
काहू जुगति कितै न पाईऐ धरमि।
नानक तिसु मिलै जिसु लिखिआ धुरि करमि।
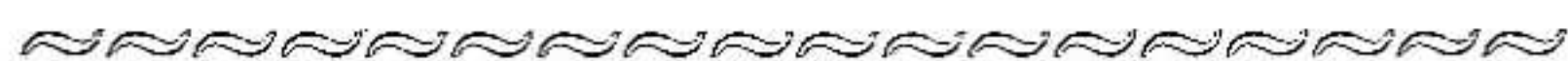
चारों ही जातियों में कोई भी मनुष्य (प्रभु का) नाम जप (के देख) ले, नाम (दूसरे सब मन्त्रों का) आदि मन्त्र है और सबका ज्ञान (दाता) है। (पर) कोई बिरला मनुष्य सत्संगति में (रहकर) (इसे) प्राप्त करता है। पशु, निकम्मी आत्मा, मूर्ख, पत्थर (-दिल) (कोई भी होवे सब) को (नाम) पार कर देता है (यदि प्रभु) कृपा करके (उसके) हृदय में (नाम) टिका देवे। प्रभु का नाम सारे रोगों की औषधि है, प्रभु के गुण गाना सौभाग्य और सुख का रूप है। (पर यह नाम दूसरे) किसी ढंग से या किसी धार्मिक रस्म के करने से नहीं मिलता; हे नानक! (यह नाम) उस मनुष्य को मिलता है, जिस (के माथे पर) प्रभु के दरबार से (प्रभु की) कृपा अनुसार लिखा जाता है।

जिस कै मनि पारब्रहम का निवासु।
तिस का नामु सति रामदासु।
आतम रामु तिसु नदरी आइआ।
दास दसंतण भाइ तिनि पाइआ।
सदा निकटि निकटि हरि जानु।
सो दासु दरगह परवानु।
अपुने दास कउ आपि किरपा करै।
तिसु दास कउ सभ सोझी परै।
सगल संगि आतम उदासु।
ऐसी जुगति नानक रामदासु।

जिसके मन में अकालपुरुष बसता है, उस मनुष्य का नाम असली (अर्थों में) रामदास (प्रभु का सेवक) है; उसे सर्वव्यापक प्रभु दिखाई पड़ता है, दासों का दास होने के स्वभाव से उसने प्रभु को पाया है। जो (मनुष्य) सदा प्रभु को निकट जानता है, वह सेवक दरबार में स्वीकृत होता है। प्रभु उस सेवक पर आप कृपा करता है और उस सेवक को सारी सूझ हो जाती है। सारे परिवार में (रहता हुआ भी) वह भीतर से निर्लिप्त होता है; हे नानक! ऐसी (जीवन-) युक्ति से वह (असली) 'रामदास' (राम का दास बन जाता है)।

प्रभ की आगिया आतम हितावै।
जीवन मुकति सोऊ कहावै।
तैसा हरखु तैसा उसु सोगु।
सदा अनंदु तह नही बिओगु।
तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी।
तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी।
तैसा मानु तैसा अभिमानु।
तैसा रंकु तैसा राजानु।
जो वरताए साई जुगति।
नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति।

जो मनुष्य प्रभु की रजा को मन में मीठी मानता है, वही जीता हुआ मुक्त कहलाता है। उसे सुख तथा दु:ख एक जैसा है, उसे सदा आनन्द है (क्योंकि) वहाँ (प्रभु के चरणों से) बिछोह नहीं है। सोना तथा मिट्टी (भी उस मनुष्य के लिए) बराबर है, अमृत तथा कौड़ी उसके लिए एक समान है। उसके लिए आदर तथा अहंकार (का व्यवहार) एक समान है, कंगाल तथा बादशाह उसकी दृष्टि में बराबर हैं। जो (रजा प्रभु) दिखाता है, वही (उसके लिए) जिन्दगी का सही मार्ग है; हे नानक! वह मनुष्य जीवन्मुक्त कहा जा सकता है।

पारब्रहम के सगले ठाउ।
जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ।
आपे करन करावन जोगु।
प्रभ भावै सोई फुनि होगु।
पसरिओ आपि होइ अनत तरंग।
लखे न जाहि पारब्रहम के रंग।
जैसी मति देइ तैसा परगास।
पारब्रहम करता अबिनास।
सदा सदा सदा दइआल।
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल।

सारे स्थान (शरीर-रूपी घर) अकालपुरुष के ही हैं, जिस-जिस स्थान पर जीवों को रखता है, वैसा उनका नाम (पड़ जाता है)। प्रभु आप ही (सब कुछ) करने की (और जीवों से) कराने की शक्ति रखता है, जो प्रभु को भला लगता है, वही होता है। (जिन्दगी की) अनगिनत लहरें बनकर (अकालपुरुष) आप सब तक मौजूद है, अकालपुरुष के खेल व्यक्त नहीं किए जा सकते। जैसी बुद्धि देता है, वैसा ही अवश्य (जीव के भीतर) होता है; अकालपुरुष (आप सब कुछ) करनेवाला है और कभी भी उसका मरण नहीं होता। प्रभु सदा कृपा करनेवाला है, हे नानक! (जीव उसे) सदा स्मरण कर (फूल के समान) खिले रहते हैं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

उसतति करहि अनेक जन
अंतु न पारावार।
नानक रचना प्रभि रची
बहु बिधि अनिक प्रकार।
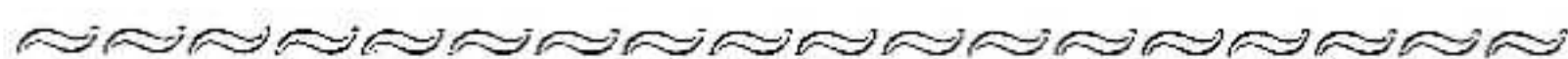
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

अनेक व्यक्ति प्रभु के गुणों का वर्णन करते हैं, लेकिन उन गुणों का ओर-छोर नहीं मिलता। हे नानक! (यह सारी) सृष्टि (उस) प्रभु ने कई किस्मों की होने के कारण कई विधियों से बनाई है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

✥ असटपदी ✥

कई कोटि होए पूजारी।
कई कोटि आचार बिउहारी।
कई कोटि भए तीरथ वासी।
कई कोटि बन भ्रमहि उदासी।
कई कोटि बेद के स्रोते।
कई कोटि तपीसुर होते।
कई कोटि आतम धिआनु धारहि।
कई कोटि कबि काबि बीचारहि।
कई कोटि नवतन नाम धिआवहि।
नानक करते का अंतु न पावहि।

(प्रभु द्वारा रची सृष्टि में) कई करोड़ प्राणी पुजारी हैं और कई करोड़ धार्मिक रीतिरस्म करनेवाले हैं; कई करोड़ (व्यक्ति) तीर्थों के निवासी हैं और कई करोड़ वैराग्य लेकर जंगलों में फिरते हैं; कई करोड़ जीव वेदों के सुननेवाले हैं और कई करोड़ महान् तपस्वी बने हुए हैं; कई करोड़ (मनुष्य) कवियों की रचनाएँ विचारते हैं; कई करोड़ व्यक्ति (प्रभु का) नित्य नया नाम-स्मरण करते हैं, (पर) हे नानक! उस कर्त्तार का कोई भेद नहीं पा सकते।

कई कोटि भए अभिमानी।
कई कोटि अंध अगिआनी।
कई कोटि किरपन कठोर।
कई कोटि अभिग आतम निकोर।
कई कोटि परदरब कउ हिरहि।
कई कोटि परदूखना करहि।
कई कोटि माइआ स्रम माहि।
कई कोटि परदेस भ्रमाहि।
जितु जितु लावहु तितु तितु लगना।
नानक करते की जानै करता रचना।

(इस जगत् रचना में) करोड़ों अहंकारी जीव और करोड़ों ही व्यक्ति बिल्कुल मूर्ख हैं; करोड़ों (मनुष्य) कंजूस तथा पत्थरमना हैं, और कई करोड़ बिल्कुल शुष्कमना (और संवेदनहीन) हैं, (जो किसी के दुःख पर) द्रवीभूत नहीं होते; करोड़ों व्यक्ति दूसरों का धन चुराते हैं और करोड़ों ही दूसरों की निंदा करते हैं; करोड़ों (मनुष्य) धन की (खातिर) मेहनत में लगे हैं और कई करोड़ दूसरे देशों में भटक रहे हैं; (हे प्रभु!) जिस-जिस काम में तुम लगाते हो, उस-उस काम में जीव लगे हैं। हे नानक! कर्त्तार की रचना (का भेद) कर्त्तार ही जानता है।

कई कोटि सिध जती जोगी।
कई कोटि राजे रस भोगी।
कई कोटि पंखी सरप उपाए।
कई कोटि पाथर बिरख निपजाए।
कई कोटि पवण पाणी बैसंतर।
कई कोटि देस भू मंडल।
कई कोटि ससीअर सूर नख्यत्र।
कई कोटि देव दानव इंद्र सिरि छत्र।
सगल समग्री अपनै सूति धारै।
नानक जिसुजिसु भावै तिसुतिसु निसतारै।

(इस सृष्टि में) करोड़ों सिद्ध, जितेन्द्रिय योगी और करोड़ों ही आनन्द प्राप्त करनेवाले राजा हैं; करोड़ों पक्षी तथा साँप (प्रभु ने) पैदा किए हैं, करोड़ों ही पत्थर तथा वृक्ष उगाए हैं; करोड़ों पानी तथा अग्नियाँ हैं, करोड़ों देश तथा धरतियों के चक्र हैं; कई करोड़ चन्द्रमा, सूर्य तथा तारे हैं, करोड़ों देवगण तथा इन्द्र हैं, जिनके सिर पर छत्र हैं; (इन) सारे (जीव-जन्तुओं के) पदार्थों को (प्रभु ने) अपने (हुक्म के) धागे में पिरोया हुआ है। हे नानक! जो-जो उसे अच्छा लगता है, उसे-उसे (प्रभु) पार कर लेता है।

कई कोटि राजस तामस सातक।
कई कोटि बेद पुरान सिम्रिति अरु सासत।
कई कोटि कीए रतन समुद।
कई कोटि नाना प्रकार जंत।
कई कोटि कीए चिर जीवे।
कई कोटि गिरी मेर सुवरन थीवे।
कई कोटि जख्य किंनर पिसाच।
कई कोटि भूत प्रेत सूकर म्रिगाच।
सभ ते नैरै सभहू ते दूरि।
नानक आपि अलिपतु रहिआ भरपूरि।
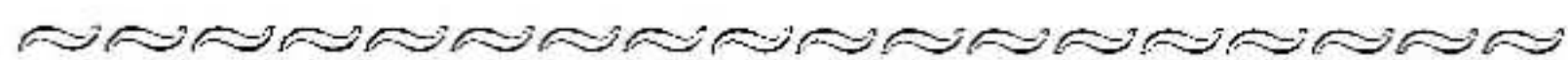
करोड़ों जीव (माया के तीन गुणों) सत्, रज तथा तम में हैं, करोड़ों (व्यक्ति) वेद, पुराण, स्मृतियों तथा शास्त्रों (के पढ़नेवाले) हैं; समुद्रों में करोड़ों रत्न पैदा कर दिए हैं और कई किस्मों के जीव-जन्तु बना दिए हैं; करोड़ों जीव लम्बी उम्र वाले पैदा किए हैं, करोड़ों ही सोने के सुमेर पर्वत बन गए हैं; करोड़ों ही यक्ष, किन्नर तथा पिशाच हैं और करोड़ों ही प्रेत सूअर तथा शेर हैं; (प्रभु) इनके निकट भी है और दूर भी। हे नानक! प्रभु सकल स्थान पर व्यापक भी है और निर्लिप्त भी।

कई कोटि पाताल के बासी।
कई कोटि नरक सुरग निवासी।
कई कोटि जनमहि जीवहि मरहि।
कई कोटि बहु जोनी फिरहि।
कई कोटि बैठत ही खाहि।
कई कोटि घालहि थकि पाहि।
कई कोटि कीए धनवंत।
कई कोटि माइआ महि चिंत।
जह जह भाणा तह तह राखे।
नानक सभु किछु प्रभ कै हाथे।

करोड़ों जीव पाताल में बसनेवाले हैं और करोड़ों ही नरकों तथा स्वर्गों में रहते हैं; करोड़ों जीव जन्मते हैं और करोड़ों जीव कई योनियों में भटक रहे हैं; करोड़ों जीव बैठे ही खाते हैं और करोड़ों (ऐसे हैं जो रोटी के लिए) मेहनत करते हैं और थककर टूट जाते हैं; करोड़ों जीव (प्रभु ने) धनवान बनाए हैं और करोड़ों (ऐसे हैं जिन्हें माया की) चिन्ता लगी हुई है। जहाँ-जहाँ चाहता है, जीवों को वहीं-वहीं रखता है। हे नानक! हरेक बात प्रभु के अपने हाथ में है।

कई कोटि भए बैरागी।
राम नाम संगि तिनि लिव लागी।
कई कोटि प्रभ कउ खोजंते।
आतम महि पारब्रहम लहंते।
कई कोटि दरसन प्रभ पिआस।
तिन कउ मिलिओ प्रभु अबिनास।
कई कोटि मागहि सतसंगु।
पारब्रहम तिन लागा रंगु।
जिन कउ होइ आपि सुप्रसंन।
नानक ते जन सदा धनि धंनि।
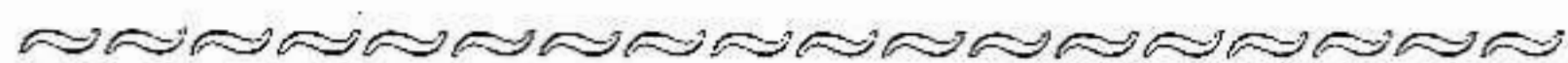
(इस रचना में) करोड़ों जीव वैरागी हैं, जिनकी सुरति अकालपुरुष के नाम के साथ लगी रहती है; करोड़ों व्यक्ति प्रभु को खोजते हैं और अपने भीतर अकालपुरुष को ढूँढ़ते हैं। करोड़ों जीवों को प्रभु के दर्शनों की इच्छा लगी रहती है, उन्हें अविनाशी प्रभु मिल पड़ता है। करोड़ों जीव सत्संग माँगते हैं, उन्हें अकालपुरुष का प्रेम रहता है। हे नानक! वे मनुष्य सदा भाग्यशाली हैं, जिन पर प्रभु आप प्रसन्न होता है।

कई कोटि खाणी अरु खंड।
कई कोटि अकास ब्रहमंड।
कई कोटि होए अवतार।
कई जुगति कीनो बिसथार।
कई बार पसरिओ पासार।
सदा सदा इकु एकंकार।
कई कोटि कीने बहुत भाति।
प्रभ ते होए प्रभ माहि समाति।
ता का अंतु न जानै कोइ।
आपे आपि नानक प्रभु सोइ।
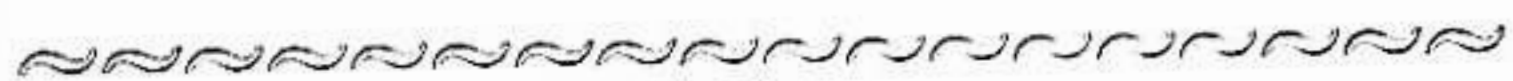
(पृथ्वी के नौ) खण्डों और (चार) दिशाओं में करोड़ों ही जीव उत्पन्न हुए हैं, तमाम आकाशों, ब्रह्माण्डों में करोड़ों ही जीव हैं; करोड़ों ही प्राणी पैदा हो रहे हैं; कई तरीकों से प्रभु ने जगत् की रचना की है, (दोबारा इसे समेटकर) सदा एक आप ही हो जाता है; प्रभु ने कई प्रकार के करोड़ों ही जीव पैदा किए हैं, जो प्रभु से पैदा होकर फिर प्रभु में ही लीन हो जाते हैं। उस प्रभु का अन्त कोई व्यक्ति नहीं जानता; (क्योंकि) हे नानक! वह प्रभु (अपने जैसा) आप ही है।

कई कोटि पारब्रहम के दास।
तिन होवत आतम परगास।
कई कोटि तत के बेते।
सदा निहारहि एको नेत्रे।
कई कोटि नाम रसु पीवहि।
अमर भए सद सद ही जीवहि।
कई कोटि नाम गुन गावहि।
आतम रसि सुखि सहजि समावहि।
अपुने जन कउ सासि सासि समारे।
नानक ओइ परमेसुर के पिआरे।

(इस जगत्-रचना में) करोड़ों जीव प्रभु के सेवक हैं, उनकी आत्मा में (प्रभु का) प्रकाश हो जाता है; करोड़ों जीव (जगत् के) तत्त्व अकालपुरुष के जानकार हैं, जो सदा एक प्रभु को आँखों से (सर्वत्र) देखते हैं; करोड़ों व्यक्ति प्रभु-नाम का आनन्द प्राप्त करते हैं, वे जन्म-मरण से रहित होकर सदा ही जीते रहते हैं। करोड़ों मनुष्य प्रभु-नाम के गुण गाते हैं, वे आत्मिक आनन्द, सुख तथा स्थिर अवस्था में टिके रहते हैं। प्रभु अपने भक्तों को प्रत्येक पल स्मरण रखता है, (क्योंकि) हे नानक! वे भक्त प्रभु के प्यारे होते हैं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

करण कारण प्रभु एकु है दूसर नाही कोइ।
नानक तिसु बलिहारणै जलि थलि महीअलि सोइ।
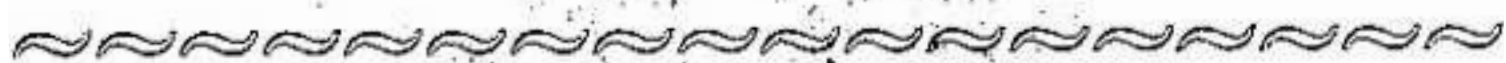
(इस सारे) जगत् का (मूल-) कारण (सृजनकर्त्ता) एक अकालपुरुष ही है, कोई दूसरा नहीं। हे नानक! (मैं) उस प्रभु पर बलिहारी हूँ, जो जल, थल, पृथ्वी के तल पर (विद्यमान है)।

✤ असटपदी ✤

करन करावन करनै जोगु।
जो तिसु भावै सोई होगु।
खिन महि थापि उथापनहारा।
अंतु नही किछु पारावारा।
हुकमे धारि अधर रहावै।
हुकमे उपजै हुकमि समावै।
हुकमे ऊच नीच बिउहार।
हुकमे अनिक रंग परकार।
करि करि देखै अपनी वडिआई।
नानक सभ महि रहिआ समाई।
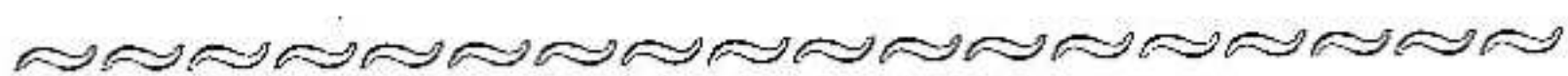
प्रभु (सब कुछ) करने की सामर्थ्य रखता है, और (जीवों को) काम करने के लिए प्रेरित करने योग्य भी है, वही कुछ होता है, जो उसे अच्छा लगता है। पल भर में इस जगत् को पैदा करके नाश भी करनेवाला है, (उसकी शक्ति) का कोई ओर-छोर नहीं है। (सृष्टि को अपने) हुक्म में पैदा करके बिना किसी आसरे के टिकाए रखता है, (जगत् उसके) हुक्म में पैदा होता है और हुक्म में लीन हो जाता है। उच्च और निम्न व्यक्तियों का प्रयोग भी उसके हुक्म-अनुसार ही है, अनेकों प्रकार के खेल-तमाशे उसके हुक्म-अनुसार हो रहे हैं। अपनी बुजुर्गी (के काम) कर-करके आप ही देख रहा है। हे नानक! प्रभु सब जीवों में व्यापक है।

प्रभ भावै मानुख गति पावै।
प्रभ भावै ता पाथर तरावै।
प्रभ भावै बिनु सास से राखै।
प्रभ भावै ता हरि गुण भाखै।
प्रभ भावै ता पतित उधारै।
आपि करै आपन बीचारै।
दुहा सिरिआ का आपि सुआमी।
खेलै बिगसै अंतरजामी।
जो भावै सो कार करावै।
नानक द्रिसटी अवरु न आवै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

यदि प्रभु को भाए तो मनुष्य को ऊँची आत्मिक अवस्था देता है और पत्थर (-दिलों) को भी पार कर लेता है, यदि प्रभु चाहे तो श्वासों के बिना भी प्राणी को (मौत से) बचाकर रखता है, उसकी कृपा होवे तो ही जीव प्रभु के गुण गाता है। यदि अकालपुरुष की रजा होवे तो मार्ग में गिरे हुए व्यक्तियों को (विकारों से) बचा लेता है; जो कुछ करता है, अपनी सलाह-अनुसार करता है। प्रभु आप ही लोक-परलोक का मालिक है, वह सबके मन की जाननेवाला आप जगत्-खेल खेलता है और (इसे देखकर) प्रसन्न होता है। जो इसे अच्छा लगता है, वही काम करता है। हे नानक! (उस जैसा दूसरा कोई दिखाई नहीं देता)।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

कहु मानुख ते किआ होइ आवै।
जो तिसु भावै सोई करावै।
इस कै हाथि होइ ता सभु किछु लेइ।
जो तिसु भावै सोई करेइ।
अनजानत बिखिआ महि रचै।
जे जानत आपन आप बचै।
भरमे भूला दह दिस धावै।
निमख माहि चारि कुंट फिरि आवै।
करि किरपा जिसु अपनी भगति देइ।
नानक ते जन नामि मिलेइ।
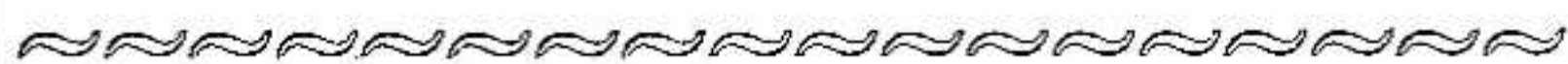
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

कहो, मनुष्य से (अपने आप) कौन सा काम हो सकता है? जो प्रभु को अच्छा लगता है, वही (जीव से) कराता है। इस मनुष्य के वश में होवे तो हरेक चीज़ सँभाल ले, (पर) प्रभु वही कुछ करता है, जो उसे भाता है। मूर्खता के कारण मनुष्य माया में लीन हो जाता है, यदि बुद्धिमान होवे तो अपने आप (इससे) बचा रहे; (पर इसका मन) भ्रम में भूला हुआ (माया की खातिर) दसों दिशाओं में दौड़ता है, पल भर में चारों कोनों में भाग-दौड़ आता है। (प्रभु) कृपा करके जिस-जिस मनुष्य को अपनी भक्ति देता है, हे नानक! वे मनुष्य नाम में टिके रहते हैं।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

खिन महि नीच कीट कउ राज।
पारब्रहम गरीब निवाज।
जा का द्रिसटि कछू न आवै।
तिसु ततकाल दह दिस प्रगटावै।
जा कउ अपुनी करै बखसीस।
ता का लेखा न गनै जगदीस।
जीउ पिंडु सभ तिस की रासि।
घटि घटि पूरन ब्रहम प्रगास।
अपनी बणत आपि बनाई।
नानक जीवै देखि बडाई।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

क्षण में प्रभु कीड़े (जैसे) निम्न (मनुष्य) को राज्य देता है, प्रभु गरीबों पर कृपा करनेवाला है। जिस मनुष्य का कोई गुण दिखाई नहीं देता, उसे पल भर में दसों दिशाओं में प्रकट कर देता है। जिस मनुष्य पर जगत् का स्वामी प्रभु अपनी कृपा करता है, उसके (कर्मों का) लेखा नहीं गिनता। यह आत्मा और शरीर उस प्रभु की दी हुई पूँजी है, हरेक शरीर में व्यापक प्रभु का ही प्रकाश है। यह (जगत्-) रचना उसने आप रची है। हे नानक! अपनी (इस) बुजुर्गी को आप देखकर (वह) खुश हो रहा है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

इस का बलु नाही इसु हाथ।
करन करावन सरब को नाथ।
आगिआकारी बपुरा जीउ।
जो तिसु भावै सोइ फुनि थीउ।
कबहू ऊच नीच महि बसै।
कबहू सोग हरख रंगि हसै।
कबहू निंद चिंद बिउहार।
कबहू ऊभ अकास पइआल।
कबहू बेता ब्रहम बीचार।
नानक आपि मिलावणहार।
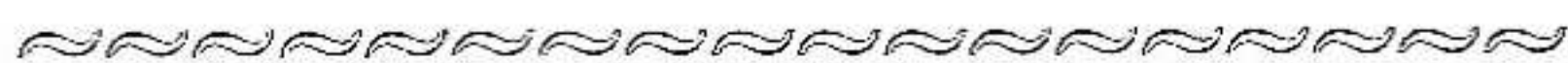
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

इस (जीव) की शक्ति इसके अपने हाथ में नहीं है, सब जीवों का मालिक प्रभु आप सब कुछ करने-कराने के योग्य है। बेचारा जीव प्रभु के हुक्म में ही चलनेवाला है, (क्योंकि) वही होता है जो उस प्रभु को अच्छा लगता है। (प्रभु आप) कभी उच्च व्यक्तियों और कभी निम्न व्यक्तियों में प्रकट हो रहा है, कभी चिन्ता में है और कभी खुशी की मौज में हँस रहा है; कभी (दूसरों की) निन्दा करने का व्यवहार बनाए बैठा है। कभी (खुशी के कारण) आकाश में ऊँचा (चढ़ता है) कभी (चिन्ता के कारण) पाताल में (गिरा पड़ा है); कभी आप ही ईश्वरीय विचार का जानकार है। हे नानक! जीवों को अपने में मिलाने वाला आप ही है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

कबहू निरति करै बहु भाति।
कबहू सोइ रहै दिनु राति।
कबहू महा क्रोध बिकराल।
कबहूं सरब की होत रवाल।
कबहू होइ बहै बड राजा।
कबहु भेखारी नीच का साजा।
कबहू अपकीरति महि आवै।
कबहू भला भला कहावै।
जिउ प्रभु राखै तिव ही रहै।
गुर प्रसादि नानक सचु कहै।

(प्रभु जीवों में व्यापक होकर) कभी कई प्रकार के नाच कर रहा है, कभी दिन-रात सोया रहता है। कभी क्रोध (में आकर) बड़ा डरावना (लगता है), कभी जीवों के चरणों की धूलि (बना रहता है); कभी बड़ा राजा बन बैठता है, कभी एक निम्न जाति के भिखारी का स्वांग (बना रखा है); कभी अपनी बदनामी करा रहा है, कभी भला कहलवा रहा है, जीव उसी प्रकार जीवन व्यतीत करता है, जैसे प्रभु कराता है। हे नानक! (कोई विरला मनुष्य) गुरु की कृपा से प्रभु को स्मरण करता है।

कबहू होइ पंडितु करे बख्यानु।
कबहू मोनि धारी लावै धिआनु।
कबहू तट तीरथ इसनान।
कबहू सिध साधिक मुखि गिआन।
कबहू कीट हसति पतंग होइ जीआ।
अनिक जोनि भरमै भरमीआ।
नाना रूप जिउ स्वागी दिखावै।
जिउ प्रभ भावै तिवै नचावै।
जो तिसु भावै सोई होइ।
नानक दूजा अवरु न कोइ।

(सर्वव्यापक प्रभु) कभी पण्डित बनकर (दूसरों को) उपदेश कर रहा है, कभी मौनी साधू बनकर समाधि लगाए बैठा है; कभी तीर्थों के किनारे स्नान कर रहा है, कभी सिद्ध, साधक (के रूप में) मुँह से ज्ञान की बातें करता है; कभी कीड़े, हाथी, पतंगा (आदि) जीव बना रहता है और (अपना ही) भरमाया हुआ कई योनियों में भटक रहा है; बहुरूपिए के समान कई प्रकार के रूप दिखा रहा है; जैसे प्रभु को अच्छा लगता है, वैसे (ही जीवों को) नचाता है। वही होता है जो उस (मालिक) को अच्छा लगता है। हे नानक! (उस जैसा) कोई दूसरा नहीं है।

कबहू साधसंगति इहु पावै।
उसु असथान ते बहुरि न आवै।
अंतरि होइ गिआन परगासु।
उसु असथान का नही बिनासु।
मन तन नामि रते इक रंगि।
सदा बसहि पारब्रहम कै संगि।
जिउ जल महि जलु आइ खटाना।
तिउ जोती संगि जोति समाना।
मिटि गए गवन पाए बिस्राम।
नानक प्रभ कै सद कुरबान।

(जब) कभी (प्रभु का अंश) यह जीव सत्संग में पहुँचता है, तो उस स्थान से मुड़कर वापिस नहीं आता; (क्योंकि) इसके भीतर प्रभु के ज्ञान का प्रकाश हो जाता है (और) उस (ज्ञान के प्रकाश वाली) हालत का नाश नहीं होता; (जिन मनुष्यों के) तन, मन प्रभु के नाम तथा प्रेम में अनुरक्त रहते हैं, वे सदा प्रभु के समीप (उसके दरबार में) बसते हैं। जैसे पानी में पानी आ मिलता है, वैसे (सत्संग में टिके हुए की) आत्मा प्रभु की ज्योति में लीन हो जाती है, उसके (जन्म-मरण के) चक्र समाप्त हो जाते हैं, (प्रभु-चरणों में) उसे ठिकाना मिल जाता है। हे नानक! प्रभु पर सदा बलिहारी जाएँ।

ੴ

✤ सलोकु ✤

सुखी बसै मसकीनीआ
आपु निवारि तले।
बड़े बड़े अहंकारीआ
नानक गरबि गले।
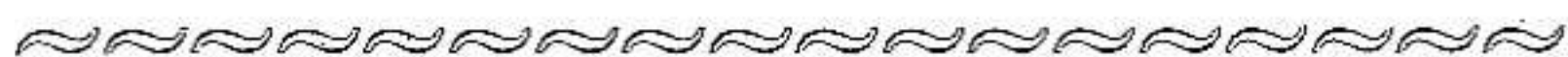
विनम्र स्वभाव वाला व्यक्ति आपा-भाव दूर कर, और विनीत रहकर सुखी रहता है, (पर) बड़े-बड़े अहंकारी मनुष्य, हे नानक! अहंकार में ही गल जाते हैं।

असटपदी

जिस कै अंतरि राज अभिमानु।
सो नरकपाती होवत सुआनु।
जो जानै मै जोबनवंतु।
सो होवत बिसटा का जंतु।
आपस कउ करमवंतु कहावै।
जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै।
धन भूमि का जो करै गुमानु।
सो मूरखु अंधा अगिआनु।
करि किरपा जिसकै हिरदै गरीबी बसावै।
नानक ईहा मुकतु आगै सुखु पावै।
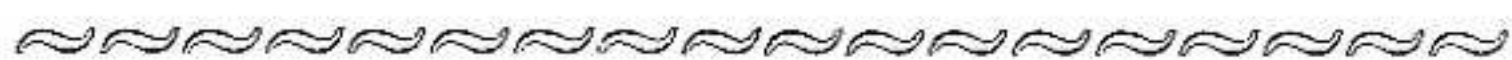
जिस मनुष्य के मन में राज्य का अभिमान है, वह कुत्ता नरक में पड़कर दण्डित होता है। यदि मनुष्य अपने आपको अत्यंत सुन्दर समझता है, वह विष्ठा का ही कीड़ा होता है। जो अपने आपको शुभ कर्मों का करनेवाला कहलाता है, वह सदा जन्मता-मरता है, कई योनियों में भटकता फिरता है। जो मनुष्य धन और धरती का अहंकार करता है, वह मूर्ख है, बड़ा दुष्ट है। (ईश्वर) कृपा करके जिस मनुष्य के दिल में विनम्र (स्वभाव) देता है, हे नानक! (वह मनुष्य) जीवन में विकारों से बचा रहता है और परलोक में सुख पाता है।

धनवंता होइ करि गरबावै।
त्रिण समानि कछु संगि न जावै।
बहु लसकर मानुख ऊपरि करे आस।
पल भीतरि ता का होइ बिनास।
सभ ते आप जानै बलवंतु।
खिन महि होइ जाइ भसमंतु।
किसै न बदै आपि अहंकारी।
धरमराइ तिसु करे खुआरी।
गुर प्रसादि जा का मिटै अभिमानु।
सो जनु नानक दरगह परवानु।

मनुष्य धनवान होकर अभिमान करता है, (पर उसके) साथ (अन्तिम समय में) एक तिनके के बराबर चीज नहीं जाती। अत्यधिक लश्कर तथा आदमियों पर आशा लगाए रखता है, (पर) पल मात्र में उसका नाश हो जाता है। मनुष्य अपने आपको सबसे बली समझता है, पर (अन्तिम समय) एक क्षण में जलकर राख हो जाता है। (जो व्यक्ति) आप (इतना) अहंकारी हो जाता है कि किसी की परवाह नहीं करता, धर्मराज (अन्तिम समय में) उसकी दुर्गति करता है। सतिगुरु की दया से जिसका अहंकार मिटता है, वह मनुष्य, हे नानक! प्रभु के दरबार में सम्मानित होता है।

कोटि करम करै हउ धारे।
स्रमु पावै सगले बिरथारे।
अनिक तपसिआ करे अहंकार।
नरक सुरग फिरि फिरि अवतार।
अनिक जतन करि आतम नही द्रवै।
हरि दरगह कहु कैसे गवै।
आपस कउ जो भला कहावै।
तिसहि भलाई निकटि न आवै।
सरब की रेन जा का मनु होइ।
कहु नानक ता की निरमल सोइ।
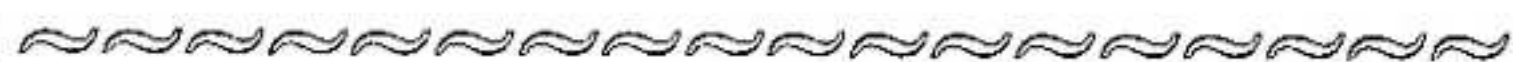
(जो मनुष्य) करोड़ों धार्मिक कामों का अहंकार करे तो वे सारे काम व्यर्थ हैं, (उसे उन कार्यों से) थकावट ही मिलती है। अनेकों तप के साधन करके यदि इनका अभिमान करे, (तो वह भी) नरक, स्वर्ग में ही बार-बार जन्मता है। अनेकों यत्न करने से यदि हृदय विनम्र नहीं होता, तो कहो, वह मनुष्य प्रभु के दरबार में कैसे पहुँच सकता है? यदि मनुष्य अपने आपको भला कहता है, भलाई उसके पास भी नहीं फटकती। जिस मनुष्य का मन सब के चरणों की धूलि हो जाता है, कहो, हे नानक! उस मनुष्य की शोभा में अत्यन्त वृद्धि होती है।

जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ।
तब इस कउ सुखु नाही कोइ।
जब इह जानै मै किछु करता।
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता।
जब धारै कोऊ बैरी मीतु।
तब लगु निहचलु नाही चीतु।
जब लगु मोह मगन संगि माइ।
तब लगु धरमराइ देइ सजाइ।
प्रभ किरपा ते बंधन तूटै।
गुर प्रसादि नानक हउ छूटै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

मनुष्य जब तक यह समझता है कि मुझ से कुछ हो सकता है, तब तक इसे कोई सुख नहीं होता। जब तक यह समझता है कि मैं कुछ करता हूँ, तब तक योनियों में भटकता रहता है। जब तक मनुष्य किसी को वैरी तथा किसी को मित्र समझता है, तब तक इसका मन ठिकाने पर नहीं आता। जब तक मनुष्य माया के मोह में डूबा रहता है, तब तक इसे धर्मराज दण्ड देता है। (माया के) बन्धन प्रभु की कृपा से टूटते हैं, हे नानक! मनुष्य की अहंभावना गुरु की कृपा से समाप्त होती है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

करन करावन करनैहारु।
इस कै हाथि कहा बीचारु।
जैसी द्रिसटि करे तैसा होइ।
आपे आपि आपि प्रभु सोइ।
जो किछु कीनो सु अपनै रंगि।
सभ ते दूरि सभहू कै संगि।
बूझै देखै करै बिबेक।
आपहि एक आपहि अनेक।
मरै न बिनसै आवै न जाइ।
नानक सद ही रहिआ समाइ।

विचार कर देख ले, जीव के वश में कुछ भी नहीं है; प्रभु आप ही सब कुछ करने योग्य है तथा (जीवों से) कराने योग्य है। प्रभु ऐसी दृष्टि (व्यक्ति की ओर) करता है कि व्यक्ति वैसा ही बन जाता है, वह प्रभु आप ही आप होता है। जो कुछ उसने बनाया है, अपनी मौज में बनाया है; सब जीवों के साथ भी है और सबसे अलग भी है। प्रभु आप ही एक है और आप ही अनेक रूप धारण कर रहा है, सब कुछ समझता है, देखता है और पहचानता है। वह न कभी मरता है, न विनष्ट होता है; न जन्मता है, न मरता है; हे नानक! प्रभु सदा ही अपने आप में टिक रहता है।

आपि उपदेसै समझै आपि।
आपे रचिआ सभ कै साथि।
आपि कीनो आपन बिसथारु।
सभु कछु उस का ओहु करनैहारु।
उस ते भिंन कहहु किछु होइ।
थान थनंतरि एकै सोइ।
अपुने चलित आपि करणैहार।
कउतक करै रंग आपार।
मन महि आपि मन अपुने माहि।
नानक कीमति कहनु न जाइ।

प्रभु आप ही सब जीवों के साथ मिला हुआ है, (इसलिए वह) आप ही शिक्षा देता है और आप ही (उस शिक्षा को) समझता है। अपना विस्तार उसने आप ही बनाया है, (जगत् की) हरेक वस्तु उसकी बनाई हुई है, वह बनाने योग्य है। बताओ, उससे अलग कुछ हो सकता है? सर्वत्र वह प्रभु आप ही (मौजूद) है। अपने खेल आप ही करने योग्य है, अनन्त रंगों के तमाशे करता है। (जीवों के) मन में आप बस रहा है, (जीवों को) अपने मन में टिकाए बैठा है; हे नानक! उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

सति सति सति प्रभु सुआमी।
गुर परसादि किनै वखिआनी।
सचु सचु सचु सभु कीना।
कोटि मधे किनै बिरलै चीना।
भला भला भला तेरा रूप।
अति सुंदर अपार अनूप।
निरमल निरमल निरमल तेरी बाणी।
घटि घटि सुनी स्रवन बख्याणी।
पवित्र पवित्र पवित्र पुनीत।
नामु जपै नानक मनि प्रीति।

(सबका) मालिक प्रभु सदा स्थिर रहनेवाला है—गुरु की कृपा से किसी विरले ने (यह बात) कही है। जो कुछ उसने बनाया है वह भी पूर्ण है—यह बात करोड़ों में किसी विरले ने पहचानी है। हे अत्यन्त सुन्दर, अनन्त तथा अप्रतिम प्रभु! तेरा रूप कितना प्यारा है! तेरी बोली भी मधुर है, हर एक शरीर में कानों के द्वारा सुनी जा रही है, जिह्वा से कही जा रही है। हे नानक! (जो ऐसे प्रभु का) नाम प्रीति के साथ मन में जपता है, वह पवित्र ही पवित्र हो जाता है।

ੴ

✣ सलोकु ✣

संत सरनि जो जनु परै
सो जनु उधरनहार।
संत की निंदा नानका
बहुरि बहुरि अवतार।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जो मनुष्य संतों का शरण लेता है, वह माया के बन्धनों से बच जाता है; (पर) हे नानक! संतों की निंदा करने से बार-बार जन्म लेना पड़ता है, (अर्थात् जन्म-मरण के चक्र में पड़ जाता है)।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

✤ असटपदी ✤

संत कै दूखनि आरजा घटै।
संत कै दूखनि जम ते नही छुटै।
संत कै दूखनि सुखु सभु जाइ।
संत कै दूखनि नरक महि पाइ।
संत कै दूखनि मति होइ मलीन।
संत कै दूखनि सोभा ते हीन।
संत कै हते कउ रखै न कोइ।
संत कै दूखनि थान भ्रसटु होइ।
संत क्रिपाल क्रिपा जे करै।
नानक संतसंगि निंदकु भी तरै।

संतों की निंदा करने से (मनुष्य की) उम्र (व्यर्थ ही) बीत जाती है, (क्योंकि) संत की निंदा करने से मनुष्य यमों से बच नहीं सकता। संत की निंदा करने से सारा (ही) सुख (नष्ट हो) जाता है और मनुष्य नरक में पड़ जाता है। संत की निंदा करने से (मनुष्य की) मति मैली हो जाती है और (जगत् में) मनुष्य शोभा से खाली रह जाता है। संत से तिरस्कृत व्यक्ति की कोई मनुष्य सहायता नहीं कर सकता, (क्योंकि) संत की निंदा करने से (निंदक का) हृदय गंदा हो जाता है। (पर) यदि कृपालु संत कृपा करे, तो हे नानक! संत की संगति में निंदक भी (पापों से) बच जाता है।

संत कै दूखन ते मुखु भवै।
संतन कै दूखनि काग जिउ लवै।
संतन कै दूखनि सरप जोनि पाइ।
संत कै दूखनि त्रिगद जोनि किरमाइ।
संतन कै दूखनि त्रिसना महि जलै।
संत कै दूखनि सभु को छलै।
संत कै दूखनि तेजु सभु जाइ।
संत कै दूखनि नीचु नीचाइ।
संत दोखी का थाउ को नाहि।
नानक संत भावै ता ओइ भी गति पाहि।

संत की निंदा करने से (निंदक का) चेहरा ही भ्रष्ट हो जाता है, (और निंदक) (स्थान-स्थान पर) कौए के समान निंदा करता है। संत की निंदा करने से मनुष्य सर्प की योनि में जा पड़ता है, और, कृमि आदि की निम्न योनियों में (भटकता है)। संत की निंदा के कारण (निंदक) तृष्णा (की अग्नि) में जलता है, और हरेक मनुष्य को धोखा देता फिरता है। संत की निंदा करने से मनुष्य का सारा तेज-प्रताप नष्ट हो जाता है और (निंदक) महानीच बन जाता है। संतों की निंदा करनेवालों को कोई आसरा नहीं रहता; (हाँ) हे नानक! यदि संतों को भाए तो निंदक भी उत्तम अवस्था तक पहुँच जाते हैं।

संत का निंदकु महा अतताई।
संत का निंदकु खिनु टिकनु न पाई।
संत का निंदकु महा हतिआरा।
संत का निंदकु परमेसुरि मारा।
संत का निंदकु राज ते हीनु।
संत का निंदकु दुखीआ अरु दीनु।
संत के निंदक कउ सरब रोग।
संत के निंदक कउ सदा बिजोग।
संत की निंदा दोख महि दोखु।
नानक संत भावै ता उसका भी होइ मोखु।
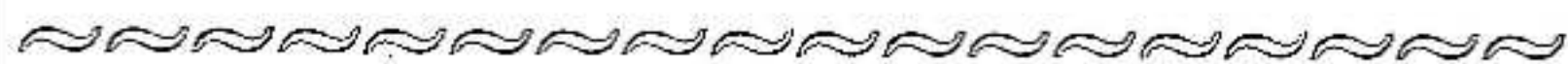
संत की निंदा करनेवाला मनुष्य सदा तूफान उठाए रहता और एक पल भर भी आराम नहीं लेता। संत का निंदक बड़ा क्रूर बन जाता है और परमात्मा की ओर से तिरस्कृत होता है। संत का निंदक राज्य (के सुखों से) खाली रहता है (सदा) दुखी तथा आतुर रहता है। संतों की निंदा करनेवाले को सारे रोग लगते हैं, (क्योंकि) उसे (सुखों के स्रोत प्रभु से) सदा विछोह रहता है। संतों की निंदा करनी नीचता है। हे नानक! यदि संतों को भाए तो उसका भी छुटकारा हो जाता है।

संत का दोखी सदा अपवितु।
संत का दोखी किसै का नही मितु।
संत के दोखी कउ डानु लागै।
संत के दोखी कउ सभ तिआगै।
संत का दोखी महा अहंकारी।
संत का दोखी सदा बिकारी।
संत का दोखी जनमै मरै।
संत की दूखना सुख ते टरै।
संत के दोखी कउ नाही ठाउ।
नानक संत भावै ता लए मिलाइ।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

संत का निंदक सदा मैले मन वाला है, (इसलिए) वह (कभी) किसी का मित्र नहीं बनता। (अन्तिम समय में) संत के निंदक को (धर्मराज से) सजा मिलती है और सारे उसका साथ छोड़ जाते हैं। संत की निंदा करनेवाला बड़ा अहंकारी बन जाता है और सदा कुकर्म करता है। संत का निंदक जन्मता-मरता रहता है, और संत की निंदा के कारण सुखों से खाली जाता है। संत के निंदक को कोई सहारा नहीं मिलता, (पर हाँ), हे नानक! यदि संत चाहे तो अपने साथ उस (निंदक) को मिला लेता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

संत का दोखी अध बीच ते टूटै।
संत का दोखी कितै काजि न पहूचै।
संत के दोखी कउ उदिआन भ्रमाईऐ।
संत का दोखी उझड़ि पाईऐ।
संत का दोखी अंतर ते थोथा।
जिउ सास बिना मिरतक की लोथा।
संत के दोखी की जड़ किछु नाहि।
आपन बीजि आपे ही खाहि।
संत के दोखी कउ अवरु न राखनहारु।
नानक संत भावै ता लए उबारि।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

संत का निंदक किसी काम में पूर्ण नहीं उतरता, बीच में ही रह जाता है। संत के निंदक को जंगलों में दुखी किया जाता है और (मार्ग से भ्रष्ट करके) गलत मार्ग पर डाल दिया जाता है। जैसे प्राणों के बिना मुर्दा मांस है, वैसे ही संत का निंदक भीतर से खाली होता है। संत के निंदकों की (नेक कमाई तथा स्मरण द्वारा) कोई पक्की नींव नहीं होती, वे आप ही निंदा की कमाई करके आप ही (उसका निम्नफल) खाते हैं। संतों के निंदक को कोई दूसरा मनुष्य बचा नहीं सकता, (पर) हे नानक! यदि संत चाहे तो (निंदक को निंदा के स्वभाव से) बचा सकता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

संत का दोखी इउ बिललाइ।
जिउ जल बिहून मछुली तड़फड़ाइ।
संत का दोखी भूखा नही राजै।
जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै।
संत का दोखी छुटै इकेला।
जिउ बूआडु तिलु खेत माहि दुहेला।
संत का दोखी धरम ते रहत।
संत का दोखी सद मिथिआ कहत।
किरतु निंदक का धुरि ही पइआ।
नानक जो तिसु भावै सोई थिआ।

संत का निंदक ऐसे रोता है, जैसे पानी के बिना मछली तड़फती है। संत का निंदक तृष्णा के कारण कभी तृप्त नहीं होता, जैसे आग ईंधन से तृप्त नहीं होती। जैसे भीतर से जला हुआ तिल का पौधा खेत में ही बेकार पड़ा रहता है, वैसे ही संत का निंदक अकेला परित्यक्त होकर पड़ा रहता है, (कोई उसके निकट नहीं आता), संत का निंदक धर्म से भ्रष्ट होता है और सदा झूठ बोलता है। (पर) पहली की हुई निंदा का यह फल (रूपी स्वभाव) निंदक का शुरू से ही चला आ रहा है। हे नानक! (यह मालिक की रजा है) जो उसे अच्छा लगता है, वही होता है।

संत का दोखी बिगड़ रूपु होइ जाइ।
संत के दोखी कउ दरगह मिलै सजाइ।
संत का दोखी सदा सहकाईऐ।
संत का दोखी न मरै न जीवाईऐ।
संत के दोखी की पुजै न आसा।
संत का दोखी उठि चलै निरासा।
संत कै दोखि न त्रिसटै कोइ।
जैसा भावै तैसा कोई होइ।
पइआ किरतु न मेटै कोइ।
नानक जानै सचा सोइ।

संतों का निंदक तिरस्कृत होता है, प्रभु की दरगाह (दरबार) में उसे सजा मिलती है। संतों का निंदक सदा उतावला रहता है, वह न मृतकों में और न जीवितों में होता है। उसकी आशा कभी पूर्ण नहीं होती, जगत् से वह निराश ही चला जाता है। जैसे आदमी की नीयत (इच्छा) होती है, वैसा उसका स्वभाव बन जाता है, (इसलिए) संत की निंदा करने से कोई मनुष्य (निंदा की) इस प्यास से बचता नहीं, (बचे भी कैसे?) पूर्वकृत (निम्न) कमाई से एकत्रित (स्वभाव-रूपी) फल को कोई मिटा नहीं सकता। हे नानक! (इस भेद को) वह सच्चा प्रभु जानता है।

सभ घट तिस के ओहु करनैहारु।
सदा सदा तिस कउ नमसकारु।
प्रभ की उसतति करहु दिनु राति।
तिसहि धिआवहु सासि गिरासि।
सभु कछु वरतै तिसका कीआ।
जैसा करे तैसा को थीआ।
अपना खेलु आपि करनैहारु।
दूसर कउनु कहै बीचारु।
जिसनो क्रिपा करै तिसु आपन नामु देइ।
बडभागी नानक जन सेइ।

सारे जीव-जन्तु उस प्रभु के हैं, वह सब कुछ करने के योग्य है, सदा उस प्रभु के समक्ष सिर झुकाओ। दिन-रात प्रभु के गुण गाओ, प्रत्येक साँस उसे स्मरण करो। (जगत् में) हर एक क्रीड़ा उसी की रची हुई क्रियान्वित है, प्रभु (जीव को) जैसा बनाता है, वैसा हर एक जीव बन जाता है, (जगत्-रूपी) अपना खेल आप ही करने योग्य है। दूसरा कौन उसे सलाह दे सकता है? जिस-जिस जीव पर कृपा करता है, उसे-उसे अपना नाम देता है; (और) हे नानक! वे मनुष्य भाग्यशाली हो जाते हैं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

तजहु सिआनप सुरि जनहु
सिमरहु हरि हरि राइ।
एक आस हरि मन रखहु
नानक दूखु भरमु भउ जाइ।

हे भले मनुष्यों! चतुराई छोड़ो और अकालपुरुष को स्मरण करो; केवल प्रभु की आस मन में रखो। हे नानक! (इस प्रकार) दुःख, भ्रम और भय दूर हो जाता है।

✤ असटपदी ✤

मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु।
देवन कउ एकै भगवानु।
जिस कै दीऐ रहै अघाइ।
बहुरि न त्रिसना लागै आइ।
मारै राखै एको आपि।
मानुख कै किछु नाही हाथि।
तिस का हुकमु बूझि सुखु होइ।
तिस का नामु रखु कंठि परोइ।
सिमरि सिमरि सिमरि प्रभु सोइ।
नानक बिघनु न लागै कोइ।
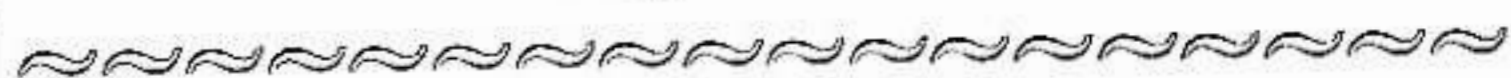
(हे मन!) किसी मनुष्य का आसरा बिल्कुल बेकार समझ, एक अकालपुरुष ही (सब जीवों को) देने योग्य है; जिसके देने से (मनुष्य) तृप्त रहता है और दोबारा उसे लालच आकर नहीं दबाता। प्रभु आप ही जीवों को मारता है, (अथवा) पालता है, मनुष्य के वश कुछ नहीं है, (इसलिए) उस मालिक का हुक्म समझकर सुख होता है। (हे मन!) उसका नाम हरवक्त याद कर। उस प्रभु को सदा स्मरण कर। हे नानक! (स्मरण के प्रभाव से) (जिन्दगी की यात्रा में) कोई रुकावट नहीं पड़ती।

उसतति मन महि करि निरंकार।
करि मन मेरे सति बिउहार।
निरमल रसना अंम्रितु पीउ।
सदा सुहेला करि लेहि जीउ।
नैनहु पेखु ठाकुर का रंगु।
साधसंगि बिनसै सभ संगु।
चरन चलउ मारगि गोबिंद।
मिटहि पाप जपीऐ हरि बिंद।
कर हरि करम स्रवनि हरि कथा।
हरि दरगह नानक ऊजल मथा।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

अपने भीतर अकालपुरुष की प्रशंसा कर। हे मेरे मन! यह सच्चा जिह्वा से मीठा (नाम-) अमृत पी, (इस प्रकार) अपनी आत्मा को सदा के लिए सुखी कर ले। आँखों से अकालपुरुष का (जगत्-) तमाशा देख, सज्जनों की संगति में (टिकने से) दूसरा (कुटुम्ब आदि का) मोह मिट जाता है। पैरों से परमात्मा के मार्ग पर चल। प्रभु को थोड़ा सा भी जपें तो पाप दूर हो जाते हैं। हाथों से प्रभु के काम कर और कानों से उसकी प्रशंसा (सुन); (इस प्रकार) हे नानक! प्रभु के दरबार में उज्जवल मस्तक होना चाहिए।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

बडभागी ते जन जग माहि।
सदा सदा हरि के गुन गाहि।
राम नाम जो करहि बीचार।
से धनवंत गनी संसार।
मनि तनि मुखि बोलहि हरि मुखी।
सदा सदा जानहु ते सुखी।
एको एकु एकु पछानै।
इत उत की ओहु सोझी जानै।
नाम संगि जिस का मनु मानिआ।
नानक तिनहि निरंजनु जानिआ।

(जो मनुष्य) सदा ही प्रभु के गुण गाते हैं, वे मनुष्य जगत् में भाग्यशाली हैं। वे मनुष्य जगत् में धनी तथा तृप्त हैं, जो अकालपुरुष के नाम का स्मरण करते हैं। जो भले लोग तन, मन तथा मुख से प्रभु का नाम उच्चरित करते हैं; उन्हें सुखी जानो। जो मनुष्य केवल एक प्रभु को (सर्वत्र) पहचानता है, उसे लोक-परलोक की समझ आ जाती है। जिस मनुष्य का मन प्रभु के नाम में मिल जाता है, हे नानक! उसने प्रभु को पहचान लिया है।

गुर प्रसादि आपन आपु सुझै।
तिस की जानहु त्रिसना बुझै।
साधसंगि हरि हरि जसु कहत।
सरब रोग ते ओहु हरि जनु रहत।
अनदिनु कीरतनु केवल बख्यानु।
ग्रिहसत महि सोई निरबानु।
एक ऊपरि जिसु जन की आसा।
तिस की कटीऐ जम की फासा।
पारब्रहम की जिसु मनि भूख।
नानक तिसहि न लागहि दूख।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिस मनुष्य को गुरु-कृपा से अपने की सूझ को जाती है, यह जान लो कि उसकी तृष्णा मिट जाती है। जो परमात्मा का प्यारा, सत्संग में अकालपुरुष की गुणस्तुति करता है, वह सारे रोगों से बच जाता है। जो मनुष्य हर रोज प्रभु का कीर्तन ही उच्चरित करता है, वह मनुष्य गृहस्थों में निर्लिप्त है। जिस मनुष्य की आस एक अकालपुरुष पर है, उसकी यमों वाली फाँसी कट जाती है। जिस मनुष्य के मन में प्रभु (के मिलने की) इच्छा है, हे नानक! उस मनुष्य को कोई दुःख स्पर्श नहीं करता।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिस कउ हरि प्रभु मनि चिति आवै।
सो संतु सुहेला नही डुलावै।
जिसु प्रभु अपुना किरपा करै।
सो सेवकु कहु किस ते डरै।
जैसा सा तैसा द्रिसटाइआ।
अपुने कारज महि आपि समाइआ।
सोधत सोधत सोधत सीझिआ।
गुर प्रसादि ततु सभु बूझिआ।
जब देखउ तब सभु किछु मूलु।
नानक सो सूखमु सोई असथूलु।

जिस मनुष्य को हरिप्रभु मन में सदा याद रहता है, वह संत है, सुखी है, (वह कभी) घबराता नहीं। जिस मनुष्य पर प्रभु अपनी कृपा करता है, कहो (प्रभु का) वह सेवक किससे डर सकता है? (क्योंकि) उसे प्रभु वैसा ही दिखाई देता है, जैसा वह है, प्रभु अपने बनाए जगत् में आप व्यापक है; नित्य विचार करते हुए (उस सेवक को विचार में) सफलता हो जाती है, (अर्थात्) गुरु की कृपा से (उसे) सारी वास्तविकता की समझ आ जाती है। हे नानक! (मेरे ऊपर भी गुरु की कृपा होती है, अब) मैं जब देखता हूँ, तो हर एक वस्तु उस सब के आदि (प्रभु का रूप दिखती है), यह गोचर संसार भी वह आप है और सब में व्यापक ज्योति भी आप ही है।

नह किछु जनमै नह किछु मरै।
आपन चलितु आप ही करै।
आवनु जावनु द्रिसटि अनद्रिसटि।
आगिआकारी धारी सभ स्रिसटि।
आपे आपि सगल महि आपि।
अनिक जुगति रचि थापि उथापि।
अबिनासी नाही किछु खंड।
धारण धारि रहिओ ब्रहमंड।
अलख अभेव पुरख परताप।
आपि जपाए त नानक जाप।

न कुछ जन्मता है, न कुछ मरता है; (यह जन्म-मरण का तो) प्रभु आप ही खेल कर रहा है; जन्म, मरण, गोचर, अगोचर—यह सारा संसार प्रभु ने अपने हुक्म में चलनेवाला बना दिया है। सारे जीवों में केवल वह आप ही है, अनेक तरीकों से (जगत् को) बना-बना कर नाश भी कर देता है। प्रभु आप अविनाशी है; उसका कुछ नाश नहीं होता, सारे ब्रह्माण्ड की रचना भी आप ही रच रहा है। उस व्यापक प्रभु के प्रताप का भेद नहीं पाया जा सकता, वर्णन नहीं हो सकता; हे नानक! यदि वह आप अपना जाप कराए तो ही जीव जाप करते हैं।

जिन प्रभु जाता सु सोभावंत।
सगल संसारु उधरै तिन मंत।
प्रभ के सेवक सगल उधारन।
प्रभ के सेवक दूख बिसारन।
आपे मेलि लए किरपाल।
गुर का सबदु जपि भए निहाल।
उन की सेवा सोई लागै।
जिसनो क्रिपा करहि बडभागै।
नामु जपत पावहि बिस्रामु।
नानक तिन पुरख कउ ऊतम करि मानु।

जिन व्यक्तियों ने प्रभु को पहचान लिया, वे शोभा वाले हो गए; सारा जगत् उनके उपदेशों के कारण (विकारों से) बचता है। हरि के भक्त सब (जीवों) को सहायता देने योग्य हैं, (सब के) दुःख दूर करने में समर्थ होत हैं। (सेवकों को) कृपालु प्रभु आप (अपने साथ) मिला लेता है, सतिगुरु का शब्द जप कर वह (पुष्प के समान) खिल जाते हैं। वही मनुष्य उन (सेवकों) की सेवा में लगता है, जिस भाग्यशाली पर, (हे प्रभु!) तू आप कृपा करता है। (वह सेवक) नाम जप कर स्थिर अवस्था प्राप्त करते हैं; हे नानक! उन मनुष्यों को महान् व्यक्ति समझो।

जो किछु करै सु प्रभ कै रंगि।
सदा सदा बसै हरि संगि।
सहज सुभाइ होवै सो होइ।
करणैहारु पछाणै सोइ।
प्रभ का कीआ जन मीठ लगाना।
जैसा सा तैसा द्रिसटाना।
जिस ते उपजे तिसु माहि समाए।
ओइ सुख निधान उनहू बनि आए।
आपस कउ आपि दीनो मानु।
नानक प्रभ जनु एको जानु।

(प्रभु का सेवक) सदा ही प्रभु के दरबार में बसता है और जो कुछ करता है, प्रभु की रजा में (रहकर) करता है। सहज भाव से जो कुछ होता है, उसे प्रभु की इच्छा जानता है और सब कुछ करनेवाला प्रभु को ही समझता है। (प्रभु के) सेवकों को प्रभु का किया हुआ मीठा लगता है, (क्योंकि) प्रभु जैसा (सर्वव्यापक) है (वैसा ही) उन्हें दृष्टिगोचर होता है। जिस प्रभु से वे सेवक पैदा हुए हैं, उसी में लीन रहते हैं, वे सुखों का खजाना हो जाते हैं और यह दर्जा अर्थात् प्रतिष्ठा-भाव उन्हें ही शोभायमान लगता है। हे नानक! प्रभु तथा प्रभु के सेवक को एक समान समझो, (सेवक को सम्मान देकर) प्रभु अपने आपको सम्मान देता है।

ੴ

✥ सलोकु ✥

सरब कला भरपूर प्रभ
बिरथा जाननहार।
जा कै सिमरनि उधरीऐ
नानक तिसु बलिहार।

प्रभु तमाम शक्तियों से पूर्ण है, (सब जीवों के) दुःख-दर्द जानता है। हे नानक! जिसके स्मरण से (विकारों से) बचा जा सकता है, उस पर (सदा) बलिहारी जाएँ।

✤ असटपदी ✤

टूटी गाढनहार गोपाल।
सरब जीआ आपे प्रतिपाल।
सगल की चिंता जिसु मन माहि।
तिस ते बिरथा कोई नाहि।
रे मन मेरे सदा हरि जापि।
अबिनासी प्रभु आपे आपि।
आपन कीआ कछू न होइ।
जे सउ प्रानी लोचै कोइ।
तिसु बिनु नाही तेरै किछु काम।
गति नानक जपि एक हरि नाम।

सारे जीवों की देखभाल करनेवाला गोपाल प्रभु आप है, (जीवों के दिल की) टूटी हुई (तार) को (अपने साथ) जोड़नेवाला (भी आप) है। जिस प्रभु को अपने मन में सब (के रोजगार) की फिक्र है, उस (के द्वार) से कोई जीवन निराश नहीं (लौटता)। हे मेरे मन! सदा प्रभु को जप, वह नाश-रहित है और अपने जैसे आप ही है। यदि कोई प्राणी सौ बार इच्छा करे तो भी प्राणी का अपने यत्न से किया हुआ काम पूर्ण नहीं होता। हे नानक! एक प्रभु का नाम जप तो गति होगी, उस प्रभु के बिना दूसरी कोई चीज तेरे (असली) काम की नहीं है।

रूपवंतु होइ नाही मोहै।
प्रभ की जोति सगल घट सोहै।
धनवंता होइ किआ को गरबै।
जा सभु किछु तिस का दीआ दरबै।
अति सूरा जे कोऊ कहावै।
प्रभ की कला बिना कह धावै।
जे को होइ बहै दातारु।
तिसु देनहारु जानै गावारु।
जिसु गुर प्रसादि तूटै हउ रोगु।
नानक सो जनु सदा अरोगु।

रूपवाला होकर कोई प्राणी (रूप का) अभिमान न करे, (क्योंकि) समस्त शरीरों में प्रभु की ही ज्योति शोभित होती है। धनवान होकर कोई मनुष्य क्या अहंकार करें; जब सारा धन उस प्रभु का ही दिया हुआ है? यदि कोई मनुष्य (अपने को) अत्यन्त शूरवीर कहलवाए (तो तनिक-मात्र यह तो सोचो कि) प्रभु की (दी हुई) ताकत के बिना वहाँ दौड़ सकता है। यदि कोई व्यक्ति (धनाढ्य होकर) अपने को दाता समझ बैठे तो वह मूर्ख उस प्रभु को पहचाने जो (सब जीवों को) देने योग्य है। हे नानक! वह मनुष्य सदा स्वस्थ है, जिसका अहंकार-रूपी रोग गुरु की कृपा से दूर होता है।

जिउ मंदर कउ थामै थंमनु।
तिउ गुर का सबदु मनहि असथंमनु।
जिउ पाखाणु नाव चड़ि तरै।
प्राणी गुर चरण लगतु निसतरै।
जिउ अंधकार दीपक परगासु।
गुर दरसनु देखि मनि होइ बिगासु।
जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै।
तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै।
तिन संतन की बाछउ धूरि।
नानक की हरि लोचा पूरि।

जैसे घर (की छत) को खम्भा सहारा देता है, वैसे गुरु का शब्द मन का सहारा है। जैसे पत्थर नाव में चढ़कर (नदी आदि से) पार उतर जाता है, वैसे ही गुरु के चरणों में पड़ा हुआ व्यक्ति (संसार-समुद्र से) पार उतर जाता है। जैसे दीपक अंधेरा (दूर करके) प्रकाश कर देता है, वैसे ही गुरु का दर्शन करके मन में आनन्द होता है। जैसे लम्बे-चौड़े जंगल में (खोए हुए को) मार्ग मिल जाए, वैसे ही सत्संगति में बैठने से (अकालपुरुष) की ज्योति (मनुष्य के भीतर) प्रगट होती है। मैं उन संतों के चरण की धूलि माँगता हूँ। हे प्रभु! नानक की (यह) अभिलाषा पूर्ण कर।

मन मूरख काहे बिललाईऐ।
पुरब लिखे का लिखिआ पाईऐ।
दूख सूख प्रभ देवनहारु।
अवर तिआगि तू तिसहि चितारु।
जो कछु करै सोई सुखु मानु।
भूला काहे फिरहि अजान।
कउन बसतु आई तैरै संग।
लपटि रहिओ रसि लोभी पतंग।
राम नाम जपि हिरदे माहि।
नानक पति सेती घरि जाहि।

हे मूर्ख मन! (दुःख पाने पर) क्यों रोता है? पिछले बोए हुए का फल खाना पड़ता है। दुःख-सुख देनेवाला प्रभु आप है, (इसलिए) दूसरे (आसरे) छोड़कर तू उसी को याद कर। हे मूर्ख! क्यों भूला फिरता है? जो कुछ प्रभु करता है, उसी को सुख समझ। हे लोभी पतंग! तू माया में मस्त है, बता, कौन सी चीज तेरे साथ आई थी। हे नानक! हृदय में प्रभु का नाम जप, (इस प्रकार) प्रतिष्ठा के साथ (परलोक वाले) घर में जाएगा।

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ।
राम नामु संतन घरि पाइआ।
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि।
राम नामु हिरदे महि तोलि।
लादि खेप संतह संगि चालु।
अवर तिआगि बिखिआ जंजाल।
धंनि धंनि कहै सभु कोइ।
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ।
इहु वापारु विरला वापारै।
नानक ता कै सद बलिहारै।

(हे भाई!) जो सौदा खरीदने के लिए तू (जगत् में) आया है, वह राम-नाम (-रूपी सौदा) संतों के घर मिलता है। (इसलिए) अहंकार छोड़ दे और मन के बदले में (यह सामान) खरीद ले, और प्रभु का नाम हृदय में परख। संतों के संग चल और राम-नाम का सौदा लाद ले, माया के दूसरे धंधे छोड़ दे, (यदि यह उद्यम करेगा तो) हरेक जीव तुझे सराहेगा, और प्रभु के दरबार में भी तेरा मुख उज्जवल होगा। (पर) यह व्यापार कोई विरला व्यक्ति करता है। हे नानक! ऐसे (व्यापारी) पर सदा बलिहारी जाएँ।

चरन साध के धोइ धोइ पीउ।
अरपि साध कउ अपना जीउ।
साध की धूरि करहु इसनानु।
साध ऊपरि जाईऐ कुरबानु।
साध सेवा वडभागी पाईऐ।
साधसंगि हरि कीरतनु गाईऐ।
अनिक बिघन ते साधू राखै।
हरि गुन गाइ अंम्रित रसु चाखै।
ओट गही संतह दरि आइआ।
सरब सूख नानक तिह पाइआ।

(हे भाई!) साधु पुरुषों के पैर धो-धोकर (नाम-जल) पी, साधु पुरुषों पर अपनी आत्मा भी बलिहारी कर, गुरमुख मनुष्य के पैरों की धूल में स्नान कर, गुरमुख पर बलिहारी जाओ। संत की सेवा बड़े भाग्यों से मिलती है, संत की संगति में ही प्रभु की गुणस्तुति की जा सकती है। संत अनेकों कठिनाइयों से बचा लेता है, संत प्रभु के गुण गाकर नाम-अमृत का आस्वादन प्राप्त करता है, (जिस मनुष्य ने) संतों का आसरा पकड़ा है, जो संतों के दरवाजे पर आ गिरा है, उसने, हे नानक! सारे सुख पा लिए हैं।

मिरतक कउ जीवालनहार।
भूखे कउ देवत अधार।
सरब निधान जा की द्रिसटी माहि।
पुरब लिखे का लहणा पाहि।
सभु किछु तिस का ओहु करनै जोगु।
तिसु बिनु दूसर होआ न होगु।
जपि जन सदा सदा दिनु रैणी।
सभ ते ऊच निरमल इह करणी।
करि किरपा जिस कउ नामु दीआ।
नानक सो जनु निरमलु थीआ।

(प्रभु) मृतक व्यक्ति को जिलाने योग्य है, भूखे को भी आसरा देता है। सारे खजाने उस मालिक की नजर में हैं, (पर जीव) अपने पिछले किए कर्मों का फल भोगते हैं। सब कुछ उस प्रभु का ही है और वही सब कुछ करने के योग्य है; उससे बिना कोई दूसरा नहीं है और न होवेगा। हे जन! सदा ही दिन-रात प्रभु को याद कर, दूसरे सब कामों से यह काम ऊँचा और पवित्र है। कृपा करके जिस मनुष्य को नाम देता है, हे नानक! वह मनुष्य पवित्र हो जाता है।

जा कै मनि गुर की परतीति।
तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति।
भगतु भगतु सुनीऐ तिहु लोइ।
जा कै हिरदै एको होइ।
सचु करणी सचु ता की रहत।
सचु हिरदै सति मुखि कहत।
साची द्रिसटि साचा आकारु।
सचु वरतै साचा पासारु।
पारब्रहमु जिनि सचु करि जाता।
नानक सो जनु सचि समाता।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिस मनुष्य के मन में सतिगुरु की श्रद्धा बन गई है, उसके चित्त में प्रभु टिक जाता है। वह मनुष्य सारे जगत् में भक्त कहलाता है, जिसके हृदय में एक प्रभु बसता है, उसकी व्यावहारिक जिन्दगी तथा जिन्दगी के नियम समान हैं, सच्चा प्रभु उसके हृदय में है, और, प्रभु का नाम ही वह मुँह से बोलता है; उस मनुष्य की नजर सच्चे प्रभु के रंग में रँगी हुई है, (इसलिए) सारा दृश्यमान जगत् (उसे) प्रभु का रूप दिखता है, प्रभु ही (सर्वत्र) मौजूद (दिखता है, और) प्रभु का ही (सारा) प्रसार दिखता है। जिस मनुष्य ने अकालपुरुष को सत्यस्वरूप समझा है, हे नानक! वह मनुष्य सदा उस स्थिर रहनेवाले में लीन हो जाता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

੧ੳ

सलोकु

रूपु न रेख न रंगु किछु
त्रिहु गुण ते प्रभ भिंन।
तिसहि बुझाए नानका
जिसु होवै सुप्रसंन।

प्रभु का न कोई रूप है, न चिह्न–चक्र, और न कोई रंग। प्रभु माया के तीन गुणों से निर्दोष है। हे नानक! प्रभु अपने आप उस मनुष्य को समझाता है, जिस पर आप प्रसन्न होता है।

असटपदी

अबिनासी प्रभु मन महि राखु।
मानुख की तू प्रीति तिआगु।
तिस ते परै नाही किछु कोइ।
सरब निरंतरि एको सोइ।
आपे बीना आपे दाना।
गहिर गंभीरु गहीरु सुजाना।
पारब्रहम परमेसुर गोबिंद।
क्रिपा निधान दइआल बखसंद।
साध तेरे की चरनी पाउ।
नानक कै मनि इहु अनराउ।

(हे भाई!) अपने मन में अकालपुरुष को पिरोए रख और मनुष्य का प्यार (मोह) छोड़ दे। सब जीवों के भीतर एक अकालपुरुष ही व्यापक है, उससे बाहर कोई चीज नहीं। प्रभु बड़ा गम्भीर है और गहरा है, बुद्धिमान है, वही आप ही (जीवों के दिल की) पहचाननेवाला तथा जाननेवाला है। हे पारब्रह्म प्रभु! सर्वोपरि मालिक! हे जीवों के पालक! दया के भण्डार, दया के घर, क्षमाशील! नानक के मन में यह इच्छा है कि मैं साधु पुरुषों के चरण पड़ूँ।

मनसा पूरन सरना जोग।
जो करि पाइआ सोई होगु।
हरन भरन जा का नेत्र फोरु।
तिस का मंत्रु न जानै होरु।
अनद रूप मंगल सद जा कै।
सरब थोक सुनीअहि घरि ता कै।
राज महि राजु जोग महि जोगी।
तप महि तपीसरु ग्रिहसत महि भोगी।
धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ।
नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ।

प्रभु (जीवों के) मन के स्वप्न पूर्ण करने तथा शरणागतों की सहायता करने के समर्थ है। जो उसने (जीवों के) हाथ पर लिख दिया है, वही होता है। जिस प्रभु का पलक झपकने के बराबर का समय (जगत् के) पालने तथा नाश के लिए (काफी) है, उसका रहस्य कोई जीव नहीं जानता। जिस प्रभु के घर में सदा आनन्द तथा खुशियाँ हैं, (जगत् के) सारे पदार्थ उसके घर में (मौजूद) सुने जाते हैं। राजाओं में प्रभु आप ही राजा है, जोगियों में जोगी है, तपस्वियों में आप ही बड़ा तपस्वी है और गृहस्थियों में भी आप ही गृहस्थी है। भक्तजनों ने (उस प्रभु को) स्मरण कर सुख प्राप्त कर लिया है। हे नानक! किसी जीव ने उस अकालपुरुष का अन्त नहीं पाया।

जा की लीला की मिति नाहि।
सगल देव हारे अवगाहि।
पिता का जनमु कि जानै पूतु।
सगल परोई अपुनै सूति।
सुमति गिआनु धिआनु जिन देह।
जन दास नामु धिआवहि सेइ।
तिहु गुण महि जा कउ भरमाए।
जनमि मरै फिरि आवै जाए।
ऊच नीच तिस के असथान।
जैसा जनावै तैसा नानक जान।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जिस प्रभु की (जगत् रूपी) खेल का लेखा कोई नहीं लगा सकता, उसे खोज-खोजकर देवगण (भी) थक गए हैं; (क्योंकि) पिता का जन्म, पुत्र क्या जानता है? (जैसे माया के मनके) धागे में पिराए हुए होते हैं, (वैसे) सारी रचना प्रभु ने अपने (हुक्म-रूपी) धागे में पिरो रखी है। जिन व्यक्तियों को प्रभु भली बुद्धि समझकर सुरति जोड़ने की देन देता है, वही सेवक तथा दास उसका नाम-स्मरण करते हैं, (पर) जिन्हें (माया के) तीन गुणों में घुमाता है, वे जन्मते-मरते हैं और बार-बार आते-जाते रहते हैं। सद्बुद्धि वाले उच्च व्यक्तियों के हृदय, त्रिगुणात्मक नीच व्यक्तियों के हृदय—ये सब उस प्रभु के अपने ही ठिकाने हैं। हे नानक! जैसे समझ वह देता है, वैसी ही समझ वाला जीव बन जाता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

नाना रूप नाना जा के रंग।
नाना भेख करहि इक रंग।
नाना बिधि कीनो बिसथारु।
प्रभु अबिनासी एकंकारु।
नाना चलित करे खिन माहि।
पूरि रहिओ पूरनु सभ ठाइ।
नाना बिधि करि बनत बनाई।
अपनी कीमति आपे पाई।
सभ घट तिस के सभ तिस के ठाउ।
जपि जपि जीवै नानक हरि नाउ।

〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰〰

प्रभु अविनाशी है, और सर्वत्र एक आप ही आप है, उसने जगत् का प्रसार कई तरीकों से किया है। कई तमाशे प्रभु पलमात्र में कर देता है, वह पूर्णपुरुष सर्वत्र व्यापक है। जगत् की रचना प्रभु ने कई तरीकों से रची है, अपनी (महानता का) मूल्य वह आप ही जानता है। सारे शरीर उस प्रभु के ही हैं; सब स्थान उसके हैं। हे नानक! (उसका दास) उसका नाम जप-जप कर जीता है।

नाम के धारे सगले जंत।
नाम के धारे खंड ब्रहमंड।
नाम के धारे सिम्रिति बेद पुरान।
नाम के धारे सुनन गिआन धिआन।
नाम के धारे आगास पाताल।
नाम के धारे सगल आकार।
नाम के धारे पुरीआ सभ भवन।
नाम कै संगि उधरे सुनि स्रवन।
करि किरपा जिसु आपनै नामि लाए।
नानक चउथे पद महि सो जनु गति पाए।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

सारे जीव-जन्तु अकालपुरुष के आसरे हैं, जगत् के सारे भाग (हिस्से) भी प्रभु के टिकाए हुए हैं। वेद, पुराण, स्मृतियाँ प्रभु के आधार पर हैं; ज्ञान की बातें सुनना तथा सुरति जोड़ना भी अकालपुरुष के आसरे ही है। सारे आकाश, पाताल प्रभु के सहारे हैं, सारे शरीर ही प्रभु के सहारे हैं। तीनों भुवन और चौदह लोक अकालपुरुष के टिकाए हुए हैं, जीव प्रभु में जुड़कर और उसका नाम कानों से सुनकर विकारों से बचते हैं। जिसे कृपा करके वह अपने नाम में जोड़ता है, हे नानक! वह मनुष्य (माया के प्रभाव से परे) चौथे स्थान में पहुँचकर ऊँची अवस्था प्राप्त करता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

रूपु सति जा का सति असथानु।
पुरखु सति केवल परधानु।
करतूति सति सति जा की बाणी।
सति पुरख सभ माहि समाणी।
सति करमु जा की रचना सति।
मूलु सति सति उतपति।
सति करणी निरमल निरमली।
जिसहि बुझाए तिसहि सभ भली।
सति नामु प्रभ का सुखदाई।
बिस्वासु सति नानक गुर ते पाई।

जिस प्रभु का रूप और ठिकाना सत्यस्वरूप है, केवल वही सर्वव्यापक प्रभु के सिर पर है। जिस अटल प्रभु की वाणी सब जीवों में व्यापक है, उसके काम भी अटल हैं, जिस प्रभु की रचना पूर्ण है, जो (सब का) मूल (रूप) सदा स्थिर है, जिसकी पैदाइश भी पूर्ण है, उसकी कृपा सदा स्थिर है। प्रभु की महा पवित्र रजा है, जिस जीव को (रजा की) समझ देता है, उसे (वह रजा) पूर्ण तौर पर सुखदायक (लगती) हैं। प्रभु का सत्यस्वरूप नाम सुखदाता है। हे नानक! (जीव को) यह अटल विश्वास गुरु से मिलता है।

सति बचन साधू उपदेस।
सति ते जन जा कै रिदै प्रवेस।
सति निरति बूझै जे कोइ।
नामु जपत ता की गति होइ।
आपि सति कीआ सभु सति।
आपे जानै अपनी मिति गति।
जिस की स्रिसटि सु करणैहारु।
अवर न बूझि करत बीचारु।
करते की मिति न जानै कीआ।
नानक जो तिसु भावै सो वरतीआ।

गुरु का उपदेश अटल वचन हैं, जिनके हृदय में (इस उपदेश का) प्रवेश होता है, वे भी अटल हो जाते हैं। यदि किसी मनुष्य को सत्यस्वरूप प्रभु के प्रेम की सूझ आ जाए तो नाम जपकर वह उच्च अवस्था प्राप्त कर लेता है। प्रभु आप सत्यस्वरूप है, उसके द्वारा उत्पादित जगत् भी सचमुच अस्तित्व वाला है, प्रभु अपनी मर्यादा आप जानता है। जिस प्रभु का यह जगत् है, वह आप उसे बनानेवाला है, किसी दूसरे को इस जगत् का ख्याल रखनेवाला (भी) न समझो। कर्त्तार (की बुजुर्गी) का अनुमान उसके द्वारा उत्पादित व्यक्ति नहीं लगा सकता। हे नानक! वही कुछ होता है जो उस प्रभु को अच्छा लगता है।

बिसमन बिसम भए बिसमाद।
जिनि बूझिआ तिसु आइआ स्वाद।
प्रभ कै रंगि राचि जन रहे।
गुर कै बचनि पदारथ लहे।
ओइ दाते दुख काटनहार।
जा कै संगि तरै संसार।
जन का सेवकु सो बडभागी।
जन कै संगि एक लिव लागी।
गुन गोबिंद कीरतनु जनु गावै।
गुर प्रसादि नानक फलु पावै।

जिस-जिस मनुष्य ने (प्रभु की बुजुर्गी) को समझा है, उसी-उसी को आनन्द मिला है, (प्रभु की महानता से) वे बड़े हैरान तथा आश्चर्य-चकित होते हैं। प्रभु के दास उसके प्रेम में मस्त रहते हैं, और सतिगुरु के उपदेश के प्रभाव से (नाम-) पदार्थ प्राप्त कर लेते हैं। वे (सेवक स्वयं) नाम की देन बाँटते हैं, और (जीवों के) दुःख काटते हैं, उनकी संगति से जगत् के जीव (संसार-समुद्र से) पार उतर जाते हैं। ऐसे सेवकों का जो सेवक बनता है, वह भाग्यशाली होता है, उनकी संगति में रहने से अकालपुरुष के साथ सुरति जुड़ती है, (प्रभु का) सेवक प्रभु के गुण गाता है और गुणस्तुति करता है। हे नानक! सतिगुरु की कृपा से वह (प्रभु का नाम-रूपी) फल पा लेता है।

ੴ

✣ सलोकु ✣

आदि सचु जुगादि सचु।
है भि सचु
नानक होसी भि सचु।
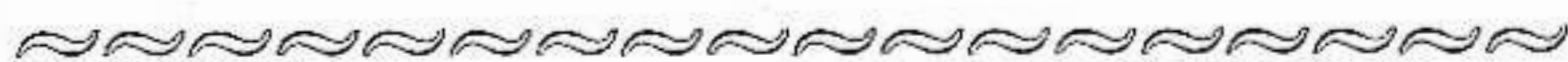
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभु का आदिकाल से ही अस्तित्व है, युगों के शुरू से मौजूद है, इस वक्त भी मौजूद है, हे नानक! भविष्य में भी सदा स्थिर रहेगा।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

✣ असटपदी ✣

चरन सति सति परसनहार।
पूजा सति सति सेवदार।
दरसनु सति सति पेखनहार।
नामु सति सति धिआवनहार।
आपि सति सति सभ धारी।
आपे गुण आपे गुणकारी।
सबदु सति सति प्रभु बकता।
सुरति सति सति जसु सुनता।
बुझनहार कउ सति सभ होइ।
नानक सति सति प्रभु सोइ।

प्रभु के चरण सदा स्थिर हैं, चरणों को छूने वाले सेवक भी अटल हो जाते हैं; प्रभु की पूजा एक सदा निभाने वाला काम है, (इसलिए) पूजा करनेवाले सदा के लिए अटल हो जाते हैं। प्रभु का दर्शन सत्य (कर्म) है, दर्शन करनेवाले भी जन्म-मरण से रहित हो जाते हैं; प्रभु का नाम सदा अटल है; उसके स्मरण करनेवाले भी स्थिर हैं। प्रभु आप सदा अस्तित्ववान है; प्रभु आप गुण (-रूप) है, आप ही गुण पैदा करनेवाला है। (प्रभु की गुणस्तुति का) शब्द सदा स्थिर है, शब्द को उच्चरित करनेवाला भी स्थिर हो जाता है, प्रभु में सुरति जोड़नी सत्य-(-कर्म) है, प्रभु का यश सुननेवाला भी सत्य है, (प्रभु का अस्तित्व) समझनेवाले को उसके द्वारा बनाया जगत् भी अस्तित्व वाला दिखता है; हे नानक! प्रभु आप सदा स्थिर रहनेवाला है।

सति सरूपु रिदै जिनि मानिआ।
करन करावन तिनि मूलु पछानिआ।
जा कै रिदै बिस्वासु प्रभ आइआ।
ततु गिआनु तिसु मनि प्रगटाइआ।
भै ते निरभउ होइ बसाना।
जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाना।
बसतु माहि ले बसतु गडाई।
ता कउ भिंन न कहना जाई।
बूझै बूझनहारु बिबेक।
नाराइन मिले नानक एक।

जिस मनुष्य ने अटल प्रभु की सुरति को सदा मन में टिकाया है, उसने सब कुछ करनेवाले और करानेवाले (जगत् के) मूल को पहचान लिया है। जिस मनुष्य के हृदय में प्रभु (के अस्तित्व) का विश्वास हो गया है, उसके मन में सच्चा ज्ञान प्रकट हो गया है; (वह मनुष्य) (हरेक) भय से (रहित होकर) निडर होकर बसता है; (क्योंकि) वह सदा उस प्रभु में लीन रहता है, जिससे वह पैदा हुआ है; (जैसे) एक चीज लेकर (उस प्रकार की) चीज मिला दी जाए, (और दोनों में कोई अन्तर नहीं रह जाता, वैसे ही प्रभु-चरणों में लीन) मनुष्य को प्रभु से अलग नहीं कहा जा सकता। (पर) इस विचार को कोई विरला विचारक समझता है। हे नानक! जो जीव प्रभु को मिल चुके हैं, वे उसके साथ एक हो गए हैं।

ठाकुर का सेवकु आगिआकारी।
ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी।
ठाकुर के सेवक कै मनि परतीति।
ठाकुर के सेवक की निरमल रीति।
ठाकुर कउ सेवकु जानै संगि।
प्रभ का सेवकु नाम कै रंगि।
सेवक कउ प्रभ पालनहारा।
सेवक की राखै निरंकारा।
सो सेवकु जिसु दइआ प्रभु धारै।
नानक सो सेवकु सासि सासि समारै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभु का सेवक उसके हुक्म-अनुसार चलता है और सदा उसकी पूजा करता है। अकालपुरुष के सेवक के मन में (उसके अस्तित्व का) विश्वास रहता है, (इसलिए) उसकी जिन्दगी की सच्ची मर्यादा होती है। सेवक अपने मालिक प्रभु को (अपने साथ) जानता है और उसके नाम की मौज में रहता है। प्रभु अपने सेवक को सदा पालने में समर्थ है और अपने सेवक की (सदा) लाज रखता है, (पर) सेवक वही मनुष्य है, जिस पर प्रभु आप कृपा करता है; हे नानक! ऐसा सेवक प्रभु को प्रत्येक पल याद रखता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

अपुने जन का परदा ढाकै।
अपने सेवक की सरपर राखै।
अपने दास कउ देइ वडाई।
अपने सेवक कउ नामु जपाई।
अपने सेवक की आपि पति राखै।
ता की गति मिति कोइ न लाखै।
प्रभ के सेवक कउ को न पहूचै।
प्रभ के सेवक ऊच ते ऊचे।
जो प्रभि अपनी सेवा लाइआ।
नानक सो सेवकु दह दिसि प्रगटाइआ।

प्रभु अपने सेवक का पर्दा रखता है और उसकी प्रतिष्ठा बचाता है। प्रभु अपने सेवक को सम्मान देता है और उसे अपना नाम जपाता है। प्रभु अपने सेवक की प्रतिष्ठा रखता है, उसकी उच्च अवस्था और उसके बड़प्पन का अन्दाजा कोई नहीं लगा सकता। कोई मनुष्य प्रभु के सेवक की बराबरी नहीं कर सकता, (क्योंकि) प्रभु के सेवक सर्वोच्च होते हैं, (पर) हे नानक! वह सेवक सारे जगत् में प्रकट हुआ है, जिसे प्रभु ने आप अपनी सेवा में लगाया है।

नीकी कीरी महि कल राखै।
भसम करै लसकर कोटि लाखै।
जिस का सासु न काढत आपि।
ता कउ राखत दे करि हाथ।
मानस जतन करत बहु भाति।
तिस के करतब बिरथे जाति।
मारै न राखै अवरु न कोइ।
सरब जीआ का राखा सोइ।
काहे सोच करहि रे प्राणी।
जपि नानक प्रभ अलख विडाणी।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(जिस) छोटी सी चींटी में (प्रभु) शक्ति भरता है, (वह चींटी) लाखों, करोड़ों लश्करों को राख कर देती है, जिस जीव का श्वास प्रभु आप नहीं निकालता, उसे हाथ देकर रखता है। मनुष्य कई किस्मों के यत्न करता है, (पर यदि प्रभु सहायता न करे तो) उसके काम व्यर्थ जाते हैं। (प्रभु के बिना जीवों को) न कोई मार सकता है, न रख सकता है, (प्रभु जैसा) दूसरा कोई नहीं है; सारे जीवों का रक्षक प्रभु आप है। हे प्राणी! तू क्यों फिक्र करता है? हे नानक! अलक्ष्य तथा आश्चर्यजनक प्रभु को स्मरण कर।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

बारंबार बार प्रभु जपीऐ।
पी अंम्रितु इहु मनु तनु ध्रपीऐ।
नाम रतनु जिनि गुरमुखि पाइआ।
तिसु किछु अवरु नाही द्रिसटाइआ।
नामु धनु नामो रूपु रंगु।
नामो सुखु हरि नाम का संगु।
नाम रसि जो जन त्रिपताने।
मन तन नामहि नामि समाने।
ऊठत बैठत सोवत नाम।
कहु नानक जन कै सद काम।

(हे भाई!) बार-बार प्रभु को स्मरण करें, और (नाम-) अमृत पीकर इस मन को तथा शारीरिक इन्द्रियों को तृप्त करें। जिस गुरुमुख ने नाम-रूपी रत्न प्राप्त कर लिया है, उसे प्रभु के अतिरिक्त कहीं कुछ नहीं दिखता; नाम (उस गुरुमुख का) धन है और प्रभु के नाम का वह सदा संग करता है। जो मनुष्य नाम के आस्वादन में तृप्त हो गए हैं, उनके मन-तन प्रभु-नाम में ही जुड़े रहते हैं। हे नानक! कह कि उठते-बैठते, सोते हुए (सदा) प्रभु का नाम-स्मरण ही सेवकों का काम होता है।

बोलहु जसु जिहबा दिनु राति।
प्रभि अपनै जन कीनी दाति।
करहि भगति आतम कै चाइ।
प्रभ अपने सिउ रहहि समाइ।
जो होआ होवत सो जानै।
प्रभ अपने का हुकमु पछानै।
तिस की महिमा कउन बखानउ।
तिस का गुनु कहि एक न जानउ।
आठ पहर प्रभ बसहि हजूरे।
कहु नानक सेई जन पूरे।
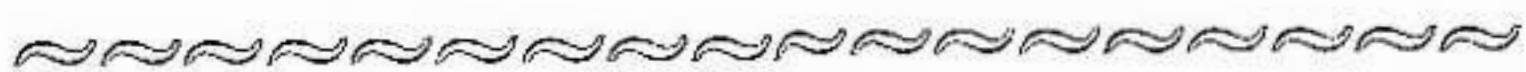
(हे भाई!) दिन-रात अपनी जिह्वा से प्रभु के गुण गाओ, गुणस्तुति की यह देन प्रभु ने अपने सेवकों पर ही की है; (सेवक) आन्तरिक उत्साह से भक्ति करते हैं और अपने प्रभु के साथ जुड़े रहते हैं। (सेवक) अपने प्रभु का हुक्म पहचान लेता है, जो कुछ हो रहा है, उसे (ईश्वरेच्छा) जानता है; ऐसे सेवक की मैं कौन-सी प्रशंसा कहूँ? मैं उस सेवक का एक गुण व्यक्त करना भी नहीं जानता। हे नानक! कहो—वे मनुष्य पूर्णता को प्राप्त हैं, जो आठों प्रहर प्रभु के समीप रहते हैं।

मन मेरे तिन की ओट लेहि।
मनु तनु अपना तिन जन देहि।
जिनि जनि अपना प्रभू पछाता।
सो जनु सरब थोक का दाता।
तिस की सरनि सरब सुख पावहि।
तिसकै दरसि सभ पाप मिटावहि।
अवर सिआनप सगली छाडु।
तिसु जन की तू सेवा लागु।
आवनु जानु न होवी तेरा।
नानक तिसु जन के पुजहु सद पैरा।

हे मेरे मन! (जो मनुष्य प्रभु के सानिध्य में रहते हैं) उनकी शरण लो और अपना तन, मन उन पर बलिहारी कर दो। जिस मनुष्य ने अपने प्रभु को पहचान लिया है, वह मनुष्य सारे पदार्थ देने के योग्य हो जाता है, (हे मन!) उसकी शरण लेने पर तू सारे सुख पाएगा, उसके दर्शन करने से तू सारे पाप दूर कर लेगा। दूसरी चतुराई छोड़ दे और उसकी सेवा में जुट जा, हे नानक! उस संतजन के सदा चरण पूज, तेरा आवगमन समाप्त हो जाएगा।

ੴ

✣ सलोकु ✣

सति पुरखु जिनि जानिआ
सतिगुरु तिस का नाउ ।
तिस कै संगि सिखु उधरै
नानक हरि गुन गाउ ।

जिसने सदा स्थिर तथा व्यापक प्रभु को जान लिया है, उसका नाम सतिगुरु है; (इसलिए) हे नानक! (तू भी गुरु की संगति में रहकर) अकालपुरुष के गुण गा।

✣ असटपदी ✣

सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल।
सेवक कउ गुरु सदा दइआल।
सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै।
गुर बचनी हरि नामु उचरै।
सतिगुरु सिख के बंधन काटै।
गुर का सिखु बिकार ते हाटै।
सतिगुरु सिख कउ नाम धनु देइ।
गुर का सिखु वडभागी हे।
सतिगुरु सिख का हलतु पलतु सवारै।
नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै।
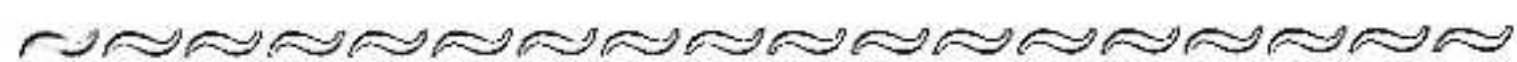
सतिगुरु सिक्ख की रक्षा करता है, सतिगुरु अपने सेवक पर कृपा करता है। सतिगुरु सिक्ख की दुर्बुद्धि-रूपी मैल दूर कर देता है, क्योंकि सिक्ख अपने सतिगुरु से प्राप्त उपदेश के द्वारा प्रभु का नाम-स्मरण करता है, सतिगुरु अपने सिक्ख के (माया के) बन्धन काट देता है (और) गुरु का सिक्ख विकारों से हट जाता है; (क्योंकि) सतिगुरु अपने सिक्ख को प्रभु का नाम-रूपी धन देता है (और इस प्रकार) सतिगुरु का सिक्ख भाग्यशाली बन जाता है। सतिगुरु अपने सिक्ख का लोक-परलोक सँवार देता है। हे नानक! सतिगुरु अपने सिक्ख को अपनी आत्मा के साथ रखता है।

गुर कै ग्रिहि सेवकु जो रहै।
गुर की आगिआ मन महि सहै।
आपस कउ करि कछु न जनावै।
हरि हरि नामु रिदै सद धिआवै।
मनु बेचै सतिगुर कै पासि।
तिसु सेवक के कारज रासि।
सेवा करत होइ निहकामी।
तिस कउ होत परापति सुआमी।
अपनी क्रिपा जिसु आपि करेइ।
नानक सो सेवकु गुर की मति लेइ।
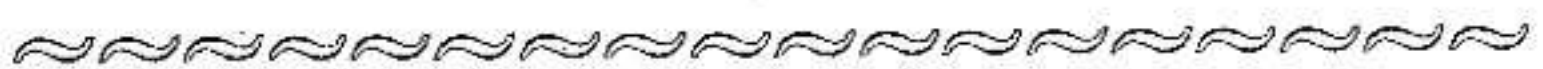
जो सेवक (शिक्षा के लिए) गुरु के घर में रहता है और गुरु का हुक्म मन में मानता है, जो अपने आपको बड़ा नहीं जताता, प्रभु का नाम सदा हृदय में स्मरण करता है, जो अपना मन सतिगुरु के समक्ष बेच देता है, उस सेवक के सारे काम पूर्ण हो जाते हैं। जो सेवक (गुरु की) सेवा करता हुआ किसी फल की इच्छा नहीं रखता, उसे मालिक प्रभु मिल जाता है। हे नानक! वह सेवक सतिगुरु की शिक्षा लेता है, जिस पर (प्रभु) अपनी कृपा करता है।

बीस बिसवे गुर का मनु मानै।
सो सेवकु परमेसुर की गति जानै।
सो सतिगुरु जिसु रिदै हरि नाउ।
अनिक बार गुर कउ बलि जाउ।
सरब निधान जीअ का दाता।
आठ पहर पारब्रहम रंगि राता।
ब्रहम महि जनु जन महि पारब्रहमु।
एकहि आपि नही कछु भरमु।
सहस सिआनप लइआ न जाईऐ।
नानक ऐसा गुरु वडभागी पाईऐ।
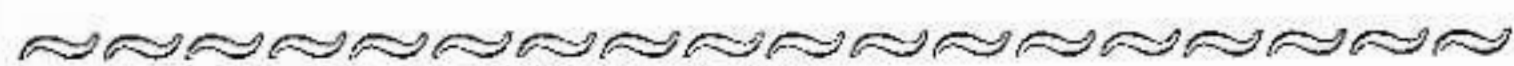
जो सेवक अपने सतिगुरु को अपनी श्रद्धा का पूर्ण तौर पर विश्वास दिलाता है, वह अकालपुरुष की अवस्था को समझ लेता है। सतिगुरु (भी) वह है, जिसके हृदय में प्रभु का नाम रहता है, (मैं ऐसे) गुरु पर कई बार बलिहारी जाता हूँ। (सतिगुरु) सब खजानों तथा आत्मिक जिन्दगी का देनेवाला है, (क्योंकि) वह आठों प्रहर अकालपुरुष के प्रेम में रँगा रहता है। (प्रभु का) सेवक (सतिगुरु) प्रभु में (जुड़ा रहता है) और (प्रभु के) सेवक-सतिगुरु में प्रभु (सदा टिका है), गुरु तथा प्रभु एकरूप हैं, इसमें भ्रम वाली कोई बात नहीं। हे नानक! हजारों चतुराइयों से ऐसा गुरु नहीं मिलता, बड़े भाग्यों से मिलता है।

सफल दरसनु पेखत पुनीत।
परसत चरन गति निरमल रीति।
भेटत संगि राम गुन रवे।
पारब्रह्म की दरगह गवे।
सुनि करि बचन करन आघाने।
मनि संतोखु आतम पतीआने।
पूरा गुरु अख्यओ जा का मंत्र।
अंम्रित द्रिसटि पेखै होइ संत।
गुण बिअंत कीमति नही पाइ।
नानक जिसु भावै तिसु लए मिलाइ।

गुरु का दर्शन (सारे) फल देनेवाला है, दर्शन करने से पवित्र हो जाता है, गुरु के चरण छूने से उच्च अवस्था तथा पवित्र आचरण हो जाता है। गुरु की संगति में रहने से प्रभु के गुण गाए जा सकते हैं और अकालपुरुष के दरबार में पहुँच हो जाती है। गुरु के वचन सुनकर कान तृप्त हो जाते हैं, मन में सन्तोष आ जाता है और आत्मा विश्वस्त हो जाता है। सतिगुरु पूर्णपुरुष है, उसका उपदेश भी सदा के लिए अटल है, (वह जिस ओर) अमर करनेवाली दृष्टि से देखता है, वही संत हो जाता है। सतिगुरु के गुण अनन्त हैं, मूल्यांकन नहीं हो सकता। हे नानक! जो जीव (प्रभु को) अच्छा लगता है, उसे वह गुरु से मिलाता है।

इहु हरि रसु पावै जनु कोइ।
अंम्रितु पीवै अमरु सो होइ।
उसु पुरख का नाही कदे बिनास।
जा कै मनि प्रगटे गुन तास।
आठ पहर हरि का नामु लेइ।
सचु उपदेसु सेवक कउ देइ।
मोह माइआ कै संगि न लेपु।
मन महि राखै हरि हरि एकु।
अंधकार दीपक परगासे।
नानक भरम मोह दुख तह ते नासे।
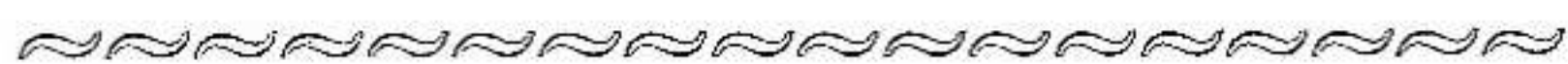
कोई विरला मनुष्य प्रभु के नाम का आनन्द प्राप्त करता है, (और जो जानता है) वह नाम-अमृत पीता है और अमर हो जाता है। जिसके मन में गुणों के भण्डार प्रभु का प्रकाश होता है, उसका कभी नाश नहीं होता। (सतिगुरु) आठों प्रहर प्रभु का नाम-स्मरण करता है, और अपने सेवक को भी यही सच्चा उपदेश देता है। माया के मोह के साथ उसका कभी मेल नहीं होता, वह सदा अपने मन में एक प्रभु को टिकाता है। हे नानक! (जिसके भीतर से) (नाम-रूपी) दीपक के साथ (अज्ञानता का) अंधेरा (हटकर) प्रकाश हो जाता है, उसके भ्रम तथा मोह के दुःख दूर हो जाते हैं।

तपति माहि ठाढि वरताई।
अनदु भइआ दुख नाठे भाई।
जनम मरन के मिटे अंदेसे।
साधू के पूरन उपदेसे।
भउ चूका निरभउ होइ बसे।
सगल बिआधि मन ते खै नसे।
जिस का सा तिनि किरपा धारी।
साध संगि जपि नामु मुरारी।
थिति पाई चूके भ्रम गवन।
सुनि नानक हरि हरि जसु स्रवन।

हे भाई! गुरु के उपदेश द्वारा (विकारों की) अग्नि में (प्रभु ने हमारे भीतर) शीतलता प्रविष्ट करा दी है, सुख ही सुख हो गया है, दु:ख नष्ट हो गए हैं और जन्म-मरण के (चक्र में पड़ने के) भय, फिक्र आदि मिट गए हैं। (हमारा) भय समाप्त हो गया है, अब निडर बसते हैं, सारे रोग नष्ट होकर मन से विस्मृत हो गए हैं। जिस गुरु के बने थे, उसने (हम पर) कृपा की है; सत्संग में प्रभु का नाम जपा कर, और हे नानक! प्रभु का यश कानों से सुनकर (हमने) शान्ति प्राप्त कर ली है और (हमारे) भ्रम तथा दुविधाएँ समाप्त हो गई हैं।

निरगुनु आपि सरगुनु भी ओही।
कला धारि जिनि सगली मोही।
अपने चरित प्रभि आपि बनाए।
अपुनी कीमति आपे पाए।
हरि बिनु दूजा नाही कोइ।
सरब निरंतरि एको सोइ।
ओति पोति रविआ रूप रंग।
भए प्रगास साध कै संग।
रचि रचना अपनी कल धारी।
अनिक बार नानक बलिहारी।

जिस प्रभु ने अपनी शक्ति स्थिर करके जगत् को मोहित कर लिया है, वह आप माया के तीनों गुणों से अलग है, त्रिगुणात्मक संसार का रूप भी आप ही है। प्रभु ने अपने खेल-तमाशे आप ही बनाए हैं, अपनी बुजुर्गी का मूल्यांकन भी आप ही करता है। प्रभु के अतिरिक्त (उस जैसा) दूसरा कोई नहीं है, सब के भीतर प्रभु आप ही (मौजूद) है। ताने-बाने के समान सारे रूपों तथा रंगों में व्याप्त है; यह प्रकाश सतिगुरु की संगति में फैलता है। सृष्टि रचकर प्रभु ने अपनी सत्ता (इस सृष्टि में) टिकाई है। हे नानक! (कह-) मैं कई बार (ऐसे प्रभु पर) बलिहारी हूँ।

ੴ

✣ सलोकु ✣

साथि न चालै बिनु भजन
बिखिआ सगली छारु।
हरि हरि नामु कमावना
नानक इहु धनु सारु।

(प्रभु के) भजन के बिना (दूसरी कोई वस्तु मनुष्य के) साथ नहीं जाती। सारी माया राख के समान है। हे नानक! अकालपुरुष का नाम (स्मरण) की कमाई करना ही (सबसे) अच्छा धन है।

✣ असटपदी ✣

संत जना मिलि करहु बीचारु।
एकु सिमरि नाम आधारु।
अवरि उपाव सभि मीत बिसारहु।
चरन कमल रिद महि उरि धारहु।
करन कारन सो प्रभु समरथु।
द्रिड़ु करि गहहु नामु हरि वथु।
इहु धनु संचहु होवहु भगवंत।
संत जना का निरमल मंत।
एक आस राखहु मन माहि।
सरब रोग नानक मिटि जाहि।

संतों के साथ मिलकर (प्रभु के गुणों का) विचार करो, एक प्रभु को स्मरण करो और नाम का आसरा (लो)। हे मित्र! दूसरे सारे आसरे छोड़ दो और प्रभु के कमल-चरण हृदय में टिकाओ। वह प्रभु सब कुछ करने तथा कराने की सामर्थ्य रखता है, उस प्रभु का नाम-रूपी (सुन्दर) पदार्थ पक्का करके सँभाल लो। (हे भाई!) (नाम-रूप) यह धन एकत्रित करो और भाग्यशाली बनो, संतों का यही पवित्र उपदेश है। अपने मन में एक (प्रभु की) आस रखो, हे नानक! (इस प्रकार) सारे रोग मिट जाएंगे।

जिसु धन कउ चारि कुंट उठि धावहि।
सो धनु हरि सेवा ते पावहि।
जिसु सुख कउ नित बाछहि मीत।
सो सुखु साधू संगि परीति।
जिसु सोभा कउ करहि भली करनी।
सा सोभा भजु हरि की सरनी।
अनिक उपावी रोगु न जाइ।
रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ।
सरब निधान महि हरिनामु निधानु।
जपि नानक दरगहि परवानु।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(हे मित्र!) जिस धन के लिए (तू) चारों ओर उठ दौड़ता है, वह धन तू प्रभु की सेवा से पा लेगा। हे मित्र! जिस सुख की तू सदा इच्छा करता है, वह सुख संतों की संगति में प्यार करने से (मिलता है)। जिस शोभा की खातिर तू नेक कमाई करता है, उस शोभा के लिए तू अकालपुरुष की शरण ले। जो (अहंकार का) रोग अनेक कोशिशों से दूर नहीं होता, वह रोग प्रभु की नाम-रूपी औषधि प्रयोग करने से मिट जाता है। सारे (लौकिक) खजानों में प्रभु का नाम (श्रेष्ठ) खजाना है। हे नानक! (नाम) जप, प्रभु के दरबार में स्वीकृत (सत्कृत) होगा।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

मनु परबोधहु हरि कै नाइ।
दह दिसि धावत आवै ठाइ।
ता कउ बिघनु न लागै कोइ।
जा कै रिदै बसै हरि सोइ।
कलि ताती ठांढा हरि नाउ।
सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ।
भउ बिनसै पूरन होइ आस।
भगति भाइ आतम परगास।
तितु घरि जाइ बसै अबिनासी।
कहु नानक काटी जम फासी।

(हे भाई! अपने) मन को प्रभु के नाम से जगाओ, (नाम के प्रभाव से) दसों दिशाओं में दौड़ता (यह मन) ठिकाने पर आ जाता है। उस मनुष्य को कोई कठिनाई स्पर्श नहीं करती, जिसके हृदय में वह प्रभु रहता है। कलियुग गर्म (अग्नि) है, प्रभु का नाम शीतल है, उसे सदा स्मरण करो और सुख पाओ; (नाम-स्मरण से) भय समाप्त हो जाता है, और आशा पूर्ण हो जाती है, (क्योंकि) प्रभु की भक्ति के साथ प्रेम करने से आत्मा चमक उठती है। (जो स्मरण करता है), उसके (हृदय) घर में अविनाशी प्रभु आ बसता है। हे नानक! कह (कि नाम जपने से) यह की फाँसी काटी जाती है।

ततु बीचारु कहै जनु साचा।
जनमि मरै सो काचो काचा।
आवा गवनु मिटै प्रभ सेव।
आपु तिआगि सरनि गुरदेव।
इउ रतन जनम का होइ उधारु।
हरि हरि सिमरि प्रान आधारु।
अनिक उपाव न छूटनहारे।
सिंम्रिति सासत बेद बीचारे।
हरि की भगति करहु मनु लाइ।
मनि बंछत नानक फल पाइ।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जो मनुष्य पारब्रह्म की स्तुति-रूपी विचार विचारता है, वह सचमुच मनुष्य है, लेकिन जो पैदा होता (बिल्कुल) मर जाता है, वह बिल्कुल कच्चा है। आपा-भाव छोड़कर, सतिगुरु की शरण लेकर प्रभु का स्मरण करने से जन्म-मरण का चक्र समाप्त हो जाता है; इस प्रकार कीमती मनुष्य-जन्म सफल हो जाता है। (इसलिए, हे भाई!) प्रभु को स्मरण कर, (यही) प्राणों का सहारा है। स्मृतियाँ, शास्त्र और वेद विचार कर, अनेक प्रयत्न करने से (आवागमन से) बचा नहीं जा सकता, मन लगाकर केवल प्रभु की ही भक्ति करो। (जो भक्ति करता है), हे नानक! उसे मनोवांछित फल मिल जाते हैं।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

संगि न चालसि तैरै धना।
तूं किआ लपटावहि मूरख मना।
सुत मीत कुटंब अरु बनिता।
इन ते कहहु तुम कवन सनाथा।
राज रंग माइआ बिसथार।
इन ते कहहु कवन छुटकार।
असु हसती रथ असवारी।
झूठा डंफु झूठु पासारी।
जिनि दीए तिसु बुझै न बिगाना।
नामु बिसारि नानक पछुताना।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

हे मूर्ख मन! धन तेरे साथ नहीं जा सकता, तू क्यों इसे जकड़े बैठा है? पुत्र, मित्र, परिवार तथा स्त्री—इनमें से बता कौन तेरा साथ देने वाला है? माया के आडम्बर, राज्य तथा रंगरेलियाँ—कहो, इनमें से किसके साथ (मोह करने से) सदा के लिए (माया से) मुक्ति मिल सकती है? घोड़े, हाथी, रथों की सवारी करनी—यह सब झूठा दिखावा है, यह आडम्बर रचने वाला भी नाशवान है। मूर्ख मनुष्य उस प्रभु को नहीं पहचानता जिसने यह सारे पदार्थ दिए हैं, और नाम को भुलाकर, हे नानक! (आखिर) पश्चाताप करता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

गुर की मति तूं लेहि इआने।
भगति बिना बहु डूबे सिआने।
हरि की भगति करहु मन मीत।
निरमल होइ तुमारो चीत।
चरन कमल राखहु मन माहि।
जनम जनम के किलबिख जाहि।
आपि जपहु अवरा नामु जपावहु।
सुनत कहत रहत गति पावहु।
सार भूत सति हरि को नाउ।
सहजि सुभाइ नानक गुन गाउ।

हे मूर्ख! सतिगुरु की शिक्षा ले, बड़े चतुर व्यक्ति भी भक्ति के बिना (विकारों में ही) डूब जाते हैं। हे मित्र मन! प्रभु की भक्ति कर, इस प्रकार तेरी सुरति पवित्र होगी। (हे भाई!) प्रभु के कमल (जैसे सुन्दर) चरण अपने मन में पिरो रख, इस प्रकार कई जन्मों के पाप नष्ट हो जाएंगे; (प्रभु का नाम) तू आप जप, और दूसरों को जपने के लिए प्रेरित कर, (नाम) सुनते, कहते और पवित्र आचरण से रहते हुए उच्च अवस्था बन जाएगी। प्रभु का नाम ही सब पदार्थों से उत्तम पदार्थ है; (इसलिए) हे नानक! आत्मिक स्थिरता में टिक कर प्रेम के साथ प्रभु के गुण गा।

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु।
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु।
होहि अचिंतु बसै सुख नालि।
सासि ग्रासि हरि नामु समालि।
छाडि सिआनप सगली मना।
साधसंगि पावहि सचु धना।
हरि पूंजी संचि करहु बिउहारु।
ईहा सुखु दरगह जैकारु।
सरब निरंतरि एको देखु।
कहु नानक जाकै मसतकि लेखु।
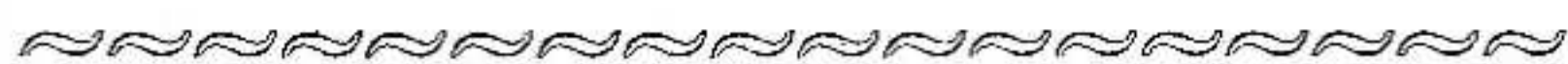
(हे भाई!) प्रभु के गुण गाते हुए तेरी (विकारों की) मैल उतर जाएगी और अहंकार-रूपी विष का प्रसार भी मिट जाएगा। प्रत्येक पल प्रभु के नाम को याद कर, बेफिक्र हो जाएगा तथा सुखी जीवन व्यतीत होगा। हे मन! सारी चतुराई छोड़ दे, सदा साथ निभने वाला धन, सत्संग में मिलेगा। प्रभु के नाम की राशि एकत्रित कर, यही व्यापार कर। इस जीवन में सुख मिलेगा, और प्रभु के दरबार में आदर होगा। सब जीवों के भीतर एक अकालपुरुष को ही देख, (पर) हे नानक! कह—(यह काम वही मनुष्य करता है) जिसके माथे पर भाग्य का लिखा है।

एको जपि एको सालाहि।
एकु सिमरि एको मन आहि।
एकस के गुन गाउ अनंत।
मनि तनि जापि एक भगवंत।
एको एकु एकु हरि आपि।
पूरन पूरि रहिओ प्रभु बिआपि।
अनिक बिसथार एक ते भए।
एकु अराधि पराछत गए।
मन तन अंतरि एकु प्रभु राता।
गुर प्रसादि नानक इकु जाता।

एक प्रभु को ही जप और एक प्रभु की ही स्तुति कर, एक प्रभु को ही स्मरण कर, और हे मन! एक प्रभु के मिलने की इच्छा रख। एक प्रभु के ही गुण गा, मन में तथा शारीरिक इन्द्रियों के द्वारा एक भगवान् को ही जप। (सब ओर) प्रभु आप ही आप है, सब जीवों में प्रभु ही बस रहा है। (जगत् के) अनेकों प्रसार एक प्रभु से ही हुए हैं, एक प्रभु को स्मरण करते हुए पाप नष्ट हो जाते हैं। जिस मनुष्य के मन तथा शरीर में एक प्रभु ही पिरोया हुआ है, हे नानक! उसने गुरु की कृपा से उस एक प्रभु को पंहचान लिया।

ੴ

✣ सलोकु ✣

फिरत फिरत प्रभ आइआ
परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती
अपनी भगती लाइ।
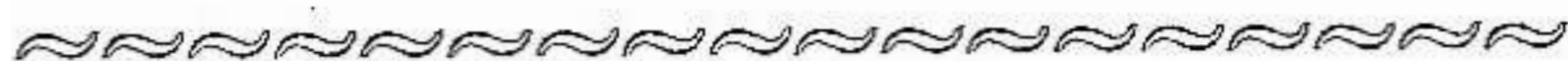
हे प्रभु! भटकता-भटकता मैं तेरी शरण में आ गया हूँ। हे प्रभु! नानक की यही प्रार्थना है कि मुझे अपनी भक्ति में जोड़।

✣ असटपदी ✣

जाचक जनु जाचै प्रभ दानु।
करि किरपा देवहु हरि नामु।
साध जना की मागउ धूरि।
पारब्रहम मेरी सरधा पूरि।
सदा सदा प्रभ के गुन गावउ।
सासि सासि प्रभ तुमहि धिआवउ।
चरन कमल सिउ लागै प्रीति।
भगति करउ प्रभ की नित नीति।
एक ओट एको आधारु।
नानकु मागै नामु प्रभ सारु।

हे प्रभु! (यह) भिखारी (तेरे नाम का) दान माँगता है; हे हरि! कृपा करके (अपना) नाम दो। हे पारब्रह्म! मेरी इच्छा पूर्ण कर, मैं साधुजनों के चरणों की धूलि माँगता हूँ। मैं सदा ही प्रभु के गुण गाऊँ। हे प्रभु! मैं प्रति-पल तुम्हारा ही स्मरण करूँ। प्रभु के कमल (जैसे सुन्दर) चरणों के साथ प्रीति रहे और सदा ही प्रभु की भक्ति करता रहूँ। (प्रभु का नाम ही) एक मेरी ओट है और एक आसरा है, नानक प्रभु का श्रेष्ठ नाम मांगता है।

प्रभ की द्रिसटि महा सुखु होइ।
हरि रसु पावै बिरला कोइ।
जिन चाखिआ से जन त्रिपताने।
पूरन पुरख नही डोलाने।
सुभर भरे प्रेम रस रंगि।
उपजै चाउ साध कै संगि।
परे सरनि आन सभ तिआगि।
अंतरि प्रगास अनदिनु लिव लागि।
बडभागी जपिआ प्रभु सोइ।
नानक नामि रते सुखु होइ।
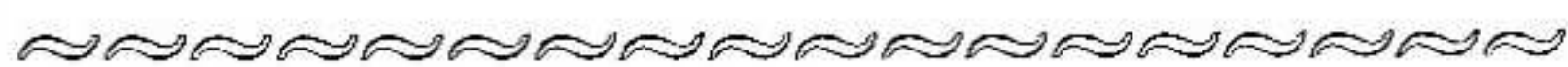
प्रभु की (कृपा की) दृष्टि से बड़ा सुख होता है, (पर) कोई विरला मनुष्य प्रभु के नाम का स्वाद चखता है। जिन्होंने (नाम-रस) चखा है, वे मनुष्य (माया की ओर से) तृप्त हो गए हैं, वे पूर्ण मनुष्य बन गए हैं, कभी (माया के लाभ और नुकसान में) अस्थिर नहीं होते; प्रभु के प्रेम के आस्वादन की मौज में वे पूर्णतः भरे रहते हैं, साधुजनों की संगति में रहकर (उनके भीतर) (प्रभु मिलाप का) चाव पैदा होता है; दूसरे सारे (आसरे) छोड़कर वे प्रभु की शरण लेते हैं, उनके भीतर प्रकाश हो जाता है, और हर समय उनकी लौ (प्रभु-चरणों में) लगी रहती है। सौभाग्यशाली व्यक्तियों ने प्रभु को स्मरण किया है। हे नानक! प्रभु के नाम में अनुरक्त होने से सुख होता है।

सेवक की मनसा पूरी भई।
सतिगुर ते निरमल मति लई।
जन कउ प्रभु होइओ दइआलु।
सेवकु कीनो सदा निहालु।
बंधन काटि मुकति जनु भइआ।
जनम मरन दूखु भ्रमु गइआ।
इछ पुनी सरधा सभ पूरी।
रवि रहिआ सद संगि हजूरी।
जिस का सा तिनि लीआ मिलाइ।
नानक भगती नामि समाइ।
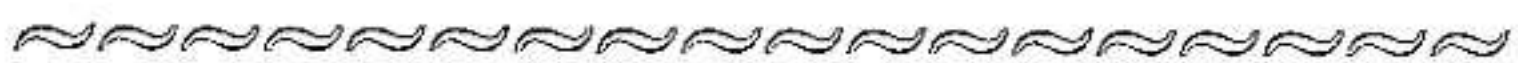
(जब सेवक) अपने गुरु से उत्तम शिक्षा लेता है, (तब) सेवक के मन के स्वप्न पूर्ण हो जाते हैं, (माया की भाग-दौड़ समाप्त हो जाती है); प्रभु अपने सेवक पर कृपा करता है, और सेवक को प्रसन्नतापूर्वक रखता है; सेवक (माया वाली) जंजीर तोड़कर मुक्त हो जाता है, उसे प्रभु सर्वत्र व्यापक होते हुए भी अपने साथ दिखता है। हे नानक! जिस मालिक का वह सेवक बनता है, वह उसे अपने साथ मिला लेता है, सेवक भक्ति करके नाम में टिका रहता है।

सो किउ बिसरै जि घाल न भानै।
सो किउ बिसरै जि कीआ जानै।
सो किउ बिसरै जिनि सभु किछु दीआ।
सो किउ बिसरै जि जीवन जीआ।
सो किउ बिसरै जि अगनि महि राखै।
गुर प्रसादि को बिरला लाखै।
सो किउ बिसरै जि बिखु ते काढै।
जनम जनम का टूटा गाढै।
गुरि पूरै ततु इहै बुझाइआ।
प्रभु अपना नानक जन धिआइआ।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(मनुष्य को) वह प्रभु क्यों भूल जाए जो (मनुष्य की) मेहनत व्यर्थ नहीं जाने देता, जो की हुई कमाई स्मरण रखता है? वह प्रभु क्यों विस्मृत हो, जिसने सब कुछ दिया है, जो जिन्दगी का आसरा है? वह अकालपुरुष क्यों विस्मृत हो जो (माँ के पेट की) अग्नि में बचाकर रखता है? (पर) कोई विरला मनुष्य गुरु की कृपा से (यह बात) समझता है? वह अकालपुरुष क्यों विस्मृत हो जाए जो (माया-रूपी) विष से बचाता है और कई जन्मों के बिछुड़े हुए जीव को (अपने साथ) जोड़ लेता है? (जिन सेवकों को) पूर्णगुरु ने यह बात समझाई है, हे नानक! उन्होंने अपने प्रभु को स्मरण किया है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

साजन संत करहु इहु कामु।
आन तिआगि जपहु हरि नामु।
सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु।
आपि जपहु अवरह नामु जपावहु।
भगति भाई तरीऐ संसारु।
बिनु भगती तनु होसी छारु।
सरब कलिआण सूख निधि नामु।
बूडत जात पाए बिस्रामु।
सगल दूख का होवत नासु।
नानक नामु जपहु गुन तासु।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

हे सज्जनों! यह काम करो, दूसरे सारे (काम-धन्धे) छोड़कर प्रभु का नाम जपो; सदा स्मरण करो और सुख प्राप्त करो; प्रभु का नाम स्मरण करो ओर दूसरों से स्मरण कराओ। प्रभु की भक्ति में नेह लगाने से यह संसार (समुद्र) पार किया जाता है, भक्ति के बिना यह शरीर किसी काम का नहीं। प्रभु का नाम सौभाग्य तथा समस्त सुखों का भण्डार है, (नाम जपने से विकारों में) डूबते हुए को आसरा मिलता है; (और) सारे दुखों का नाश हो जाता है। (इसलिए) हे नानक! नाम जपो, (नाम ही) गुणों का खजाना (है)।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ।
मन तन अंतरि इही सुआउ।
नेत्रहु पेखि दरसु सुखु होइ।
मनु बिगसै साध चरन धोइ।
भगत जना कै मनि तनि रंगु।
बिरला कोऊ पावै संगु।
एक बसतु दीजै करि मइआ।
गुर प्रसादि नामु जपि लइआ।
ता की उपमा कही न जाइ।
नानक रहिआ सरब समाइ।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(जिसके भीतर प्रभु की) प्रीति पैदा हुई है, प्रभु के प्रेम का स्वाद तथा चाव पैदा हुआ है, उसके मन तथा तन में यही चाह है (कि नाम की देन मिले)। आँखों से (गुरु का) दर्शन करके उसे सुख होता है, गुरु के चरण धोकर उसका मन खिल जाता है। भक्ति के मन तथा शरीर में (प्रभु का) प्रेम टिका रहता है, (पर) किसी भाग्यशाली ही को उनकी संगति प्राप्त होती है। (हे प्रभु!) एक नाम-वस्तु कृपा करके (हमें) दे, (ताकि) गुरु की कृपा से तेरा नाम जप सकें। हे नानक! वह प्रभु सर्वत्र मौजूद है, उसकी प्रशंसा व्यक्त नहीं की जा सकती।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभ बखसंद दीन दइआल।
भगति वछल सदा किरपाल।
अनाथ नाथ गोबिंद गुपाल।
सरब घटा करत प्रतिपाल।
आदि पुरख कारण करतार।
भगत जना के प्रान अधार।
जो जो जपै सु होइ पुनीत।
भगति भाइ लावै मन हीत।
हम निरगुनीआर नीच अजान।
नानक तुमरी सरनि पुरख भगवान।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

हे क्षमाशील, दीनदयालु, हे भक्ति के साथ प्रेम करनेवाले, सदा दया के घर, अनाथों के नाथ, गोविंद, गोपाल, सारे शरीर की देखभाल करनेवाले, हे सबसे आदि और सर्वव्यापक प्रभु! हे (जगत् के) मूल! हे कर्त्तार! हे भक्तों की जिन्दगी के सहारे! जो-जो मनुष्य भक्ति-भाव से अपने मन में तेरा ध्यान करता है और तुझे जपता है, वह पवित्र हो जाता है। हे नानक! (प्रार्थना कर और कह-) हे अकालपुरुष! हे भगवान्! हम तेरी शरण आए हैं, हम नीच, मूर्ख और गुणहीन हैं।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

सरब बैकुंठ मुकति मोख पाए।
एक निमख हरि के गुन गाए।
अनिक राज भोग बडिआई।
हरि के नाम की कथा मनि भाई।
बहु भोजन कापर संगीत।
रसना जपती हरि हरि नीत।
भली सु करनी सोभा धनवंत।
हिरदै बसे पूरन गुर मंत।
साध संगि प्रभ देहु निवास।
सरब सूख नानक परगास।
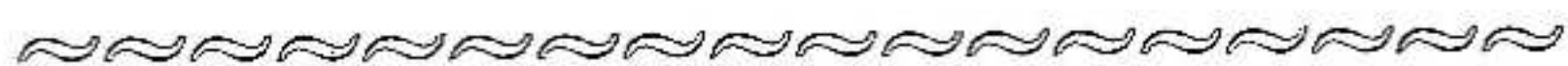
जिस मनुष्य ने आँख के एक बार झपकने के बराबर भी प्रभु के गुण गाए हैं, उसने सारे स्वर्ग तथा मोक्ष (मुक्ति) प्राप्त कर लिए हैं। जिस मनुष्य के मन में प्रभु के नाम की बातचीत मीठी लगी है, उसे (मानों) अनेक राज्य, भोग-पदार्थ और उपलब्धियाँ मिल गई हैं। जिस मनुष्य की जीभ सदा प्रभु का नाम जपती है, उसे मानों कई प्रकार के खाने-कपड़े और राग-रंग प्राप्त हो गए हैं। जिस मनुष्य के हृदय में पूर्णगुरु का उपदेश रहता है, उसी का ही आचरण भला है, उसी को शोभा मिलती है, वही धनवान है। हे प्रभु! अपने संतों की संगति में स्थान दे। हे नानक! (सत्संग में रहने से) सारे सुखों का प्रकाश हो जाता है।

ੴ

सलोकु

सरगुन निरगुन निरंकार
सुंन समाधी आपि।
आपन कीआ नानका
आपे ही फिरि जापि।

निरंकार (अकालपुरुष) त्रैगुणी माया का रूप भी आप ही है और माया के तीन गुणों से परे भी आप ही है, समाधि-अवस्था में टिका हुआ भी आप है। हे नानक! (सारा जगत्) प्रभु ने आप ही बनाया है (और जीवों में बैठकर) आप ही (अपने आपको) स्मरण कर रहा है।

✣ असटपदी ✣

जब अकारु इहु कछु न द्रिसटेता।
पाप पुंन तब कह ते होता।
जब धारी आपन सुंन समाधि।
तब बैर बिरोध किसु संगि कमाति।
जब इसका बरनु चिहनु न जापत।
तब हरख सोग कहु किसहि बिआपत।
जब आपन आप आपि पारब्रहम।
तब मोह कहा किसु होवत भरम।
आपन खेलु आपि वरतीजा।
नानक करनैहारु न दूजा।

जब (जगत् के जीवों की) कोई आकृति ही नहीं दिखती थी, तब पाप या पुण्य किस (जीव) से हो सकता था? जब (प्रभु ने) आप पूर्णरूपेण शून्य अवस्था वाली समाधि लगाई हुई थी, तब (किस ने) किस के साथ वैर-विरोध करना था? जब इस जगत् का कोई रूप-रंग नहीं दिखाई देता था, तब कहो खुशी अथवा चिंता किसे स्पर्श कर सकती थी? जब अकालपुरुष केवल आप था, तब भ्रम-प्रपंच किसे हो सकते थे? हे नानक! (जगत्-रूपी) अपनी लीला प्रभु ने आप बनाई है, (उसके बिना इस खेल का) बनानेवाला दूसरा कोई नहीं है।

जब होवत प्रभ केवल धनी।
तब बंध मुकति कहु किस कउ गनी।
जब एकहि हरि अगम अपार।
तब नरक सुरग कहु कउन अउतार।
जब निरगुन प्रभ सहज सुभाइ।
तब सिव सकति कहहु कितु ठाइ।
जब आपहि आपि अपनी जोति धरै।
तब कवन निडरु कवन कत डरै।
आपन चलित आपि करनैहार।
नानक ठाकुर अगम अपार।
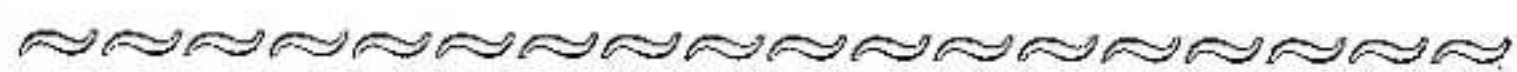
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जब मालिक-प्रभु केवल (आप ही) था, तब कहो, किसे बन्धनयुक्त और किसे बन्धनमुक्त समझें? जब अगम्य तथा अनन्त प्रभु एक आप ही था, तब कहो, नरकों तथा स्वर्गों में आनेवाले कौन से जीव थे? जब स्वतः ही प्रभु त्रिगुणात्मक माया से परे था, तब कहो, जीव तथा माया कहाँ थे? जब प्रभु आप ही अपनी ज्योति जगाए बैठा था, तब कौन निडर था और कौन किससे डरते थे? हे नानक! अकालपुरुष अगम्य तथा अनन्त है; अपने तमाशे आप की करनेवाला है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

अबिनासी सुख आपन आसन।
तह जनम मरन कहु कहा बिनासन।
जब पूरन करता प्रभु सोइ।
तब जम की त्रास कहहु किसु होइ।
जब अबिगत अगोचर प्रभ एका।
तब चित्रगुपत किसु पूछत लेखा।
जब नाथ निरंजन अगोचर अगाधे।
तब कउन छुटे कउन बंधन बाधे।
आपन आप आप ही अचरजा।
नानक आपन रूप आप ही उपरजा।
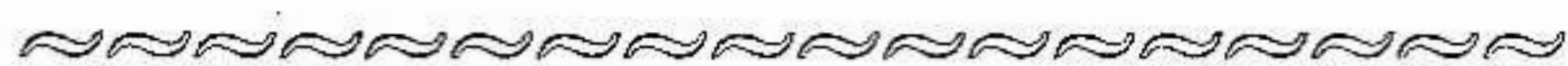
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जब अकालपुरुष अपनी मौज में अपने ही स्वरूप में टिका बैठा था, तब कहो, जन्मना-मरना और विनाश कहाँ थे? जब कर्त्तार पूर्ण प्रभु आप ही था, जब कहो, मौत का डर किसे हो सकता था? जब अगोचर तथा अलक्ष्य प्रभु एक आप ही था, तब चित्रगुप्त किससे लेखा पूछ सकते थे? जब मालिक माया-रहित अथाह अगोचर आप ही था, तब कौन माया के बन्धन से मुक्त थे और कौन बन्धनों में बँधे हुए थे? वह कौतुकपूर्ण (आश्चर्ययुक्त) प्रभु अपने जैसा आप ही है। हे नानक! अपना आकार अपने आप ही पैदा किया है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जह निरमल पुरखु पुरखपति होता।
तह बिनु मैलु कहहु किया धोता।
जह निरंजन निरंकार निरबान।
तह कउन कउ मान कउन अभिमान।
जह सरूप केवल जगदीस।
तह छल छिद्र लगत कहु कीस।
जह जोति सरूपी जोति संगि समावै।
तह किसहि भूख कवनु त्रिपतावै।
करन करावन करनैहारु।
नानक करते का नाहि सुमारु।

जिस अवस्था में जीवों का मालिक निर्मल प्रभु आप ही था, वहाँ वह मैल-रहित था, तब कहो, उसने कौन-सी मैल धोई थी? जहाँ माया-रहित, आकार-रहित और वासना-रहित प्रभु ही था, वहाँ मान, अहंकार किसे होना था? जहाँ केवल जगत् के मालिक प्रभु का ही अस्तित्व था, वहाँ कहो, छल और विकार किसे लग सकते थे? जब ज्योतिरूप प्रभु अपनी ही ज्योति में लीन था, तब किसे माया की भूख हो सकती थी और कौन तृप्त था? कर्त्तार आप ही सब कुछ करनेवाला और जीवों से करानेवाला है। हे नानक! कर्त्तार का अनुमान नहीं किया जा सकता।

जब अपनी सोभा आपन संगि बनाई।
तब कवन माइ बाप मित्र सुत भाई।
जह सरब कला आपहि परबीन।
तह बेद कतेब कहा कोऊ चीन।
जब आपन आपु आपि उरि धारै।
तउ सगन अपसगन कहा बीचारै।
जह आपन ऊच आपन आपि नेरा।
तह कउन ठाकुरु कउनु कहीऐ चेरा।
बिसमन बिसम रहे बिसमाद।
नानक अपनी गति जानहु आपि।
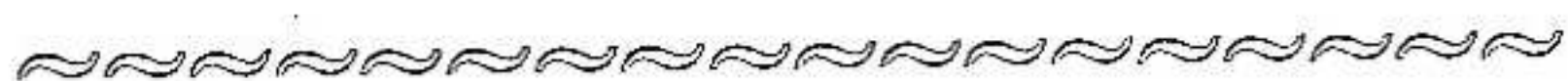
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जब प्रभु ने अपनी शोभा अपने ही साथ बनाई थी तब कौन, माँ, बाप, मित्र, पुत्र अथवा भाई था? जब अकालपुरुष आप ही तमाम शक्तियों में प्रबल था, तब कहीं कोई वेद (हिन्दुओं के धर्म-ग्रंथ) और किताबें (मुसलमानों के धर्म-ग्रंथ) विचारता था? जब प्रभु अपने आपको आप ही अपने आप में टिकाए बैठा था, तब भले-बुरे शकुन के बारे में कौन सोचता था? कहो, मालिक कौन था और सेवक कौन था? हे नानक! (प्रभु के समक्ष प्रार्थना कर और कह—हे प्रभु) तू अपनी गति आप ही जानता है, जीव तेरी गति खोजते हुए हैरान तथा आश्चर्यचकित हो रहे हैं।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जह अछल अछेद अभेद समाइआ।
ऊहा किसहि बिआपत माइआ।
आपस कउ आपहि आदेसु।
तिहु गुण का नाही परवेसु।
जह एकहि एक एक भगवंता।
तह कउनु अचिंतु किसु लागै चिंता।
जह आपन आपु आपि पतीआरा।
तह कउनु कथै कउनु सुननैहारा।
बहु बेअंत ऊच ते ऊचा।
नानक आपस कउ आपहि पहूचा।

जिस अवस्था में छल-रहित, अविनाशी तथा अभेद प्रभु टिका हुआ है, वहाँ किसे माया स्पर्श कर सकती है? (तब) प्रभु अपने आपको आप ही नमस्कार करता है, (माया के) तीन गुणों का (उस पर) असर नहीं पड़ता। जब भगवान् केवल एक आप ही था, तब कौन बेफिक्र था और किसे कोई चिन्ता लगती थी। जब अपने आपको विश्वस्त करनेवाला प्रभु आप ही था, तब कौन बोलता था और कौन सुननेवाला था? हे नानक! प्रभु बड़ा अनन्त है, सर्वोच्च है, अपने आप तक आप ही पहुँचने वाला है।

जह आपि रचिओ परपंचु अकारु।
तिहु गुण महि कीनो बिसथारु।
पापु पुंनु तहं भई कहावत।
कोऊ नरक कोऊ सुरग बंछावत।
आल जाल माइआ जंजाल।
हउमै मोह भरम भै भार।
दूख सूख मान अपमान।
अनिक प्रकार कीओ बख्यान।
आपन खेलु आपि करि देखै।
खेलु संकोचै तउ नानक एकै।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जब प्रभु ने आप जगत् की क्रीड़ा रच दी और माया के तीन गुणों का प्रसार प्रसारित कर दिया, तब यह बात चल पड़ी कि यह पाप है, यह पुण्य है, तब कोई जीव नरकों का भागी और कोई स्वर्गों का अभिलाषी बना; घरों के धन्धे, माया के बन्धन, अहंकार, मोह, भ्रम, भय, दुःख, सुख, आदर-निरादर—ऐसी कई किस्मों की बातें चल पड़ीं। हे नानक! प्रभु अपना तमाशा करके आप देख रहा है। जब इस खेल को समेटता है तो एक आप ही आप हो जाता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

जह अबिगतु भगतु तह आपि।
जह पसरै पासारु संत परतापि।
दुहू पाख का आपहि धनी।
उन की सोभा उनहू बनी।
आपहि कउतक करै अनद चोज।
आपहि रस भोगन निरजोग।
जिसु भावै तिसु आपन नाइ लावै।
जिसु भावै तिसु खेल खिलावै।
बेसुमार अथाह अगनत अतोलै।
जिउ बुलावहु तिउ नानक दास बोलै।

जहाँ अलक्ष्य प्रभु है वहाँ उसका भक्त है, जहाँ भक्त है वहाँ वह प्रभु आप है। हर स्थान पर संतों की महिमा के लिए प्रभु जगत् का विस्तार कर रहा है। प्रभु जी अपनी शोभा आप की जानते हैं, (संतों का प्रताप और माया का प्रभाव इन) दोनों पक्षों का मालिक प्रभु आप है। प्रभु आप ही खेल, खेल रहा है, आप ही आनन्द तमाशे कर रहा है, आप ही रसों को भोगनेवाला है और आप ही निर्लिप्त है। जो उसे भाता है, उसे अपने नाम में जोड़ता है, और जिसे चाहता है, माया का खेल खिलाता है। हे नानक! (ऐसे प्रार्थना कर और कह), हे अनन्त! हे गणना-रहित, स्थिर प्रभु! जैसे तू बुलाता है वैसे तेरे पास बोलते हैं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

जीअ जंत के ठाकुरा
आपे वरतणहार।
नानक एको पसरिआ
दूजा कह द्रिसटार।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

हे जीव-जुन्तुओं के पालनेवाले प्रभु! तू आप ही सर्वत्र व्यापक है। हे नानक! प्रभु आप ही सर्वत्र मौजूद है, (उसके अतिरिक्त कोई) दूसरा कोई देखने में कहाँ आया है?
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

✤ असटपदी ✤

आपि कथै आपि सुननैहारु।
आपहि एकु आपि बिसथारु।
जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए।
आपनै भाणै लए समाए।
तुम ते भिंन नही किछु होइ।
आपन सूति सभु जगतु परोइ।
जा कउ प्रभ जीउ आपि बुझाए।
सचु नामु सोई जनु पाए।
सो समदरसी तत का बेता।
नानक सगल स्रिसटि का जेता।

(सब जीवों में) प्रभु आप बोल रहा है, आप ही सुननेवाला है, आप ही एक है (सृष्टि रचने से पूर्व), और आप ही (जगत् को अपने में) समेट लेता है। (हे प्रभु!) तुझसे अलग कुछ नहीं है, तूने (अपने हुक्म-रूपी) धागे में सारे जगत् को पिरो रखा है। जिस मनुष्य को प्रभुजी आप सूझ देते हैं, वह मनुष्य प्रभु का सदा सत्यस्वरूप नाम प्राप्त कर लेता है। वह मनुष्य सब की ओर एक दृष्टि से देखता है, अकालपुरुष का जानकार हो जाता है। हे नानक! वह सारे जगत् का जीतने वाला है।

जीअ जंत्र सभ ता कै हाथ।
दीन दइआल अनाथ को नाथु।
जिसु राखै तिसु कोइ न मारै।
सो मूआ जिसु मनहु बिसारै।
तिसु तजि अवर कहा को जाइ।
सभ सिरि एकु निरंजन राइ।
जीअ की जुगति जा कै सभ हाथि।
अंतरि बाहरि जानहु साथि।
गुन निधान बेअंत अपार।
नानक दास सदा बलिहार।

सारे जीव-जंतु उस प्रभु के वश में हैं, वह दीनदयालु है, और अनाथों का मालिक है। जिस जीव को प्रभु आप रखता है, उसे कोई मार नहीं सकता। मरा हुआ तो (वह) जीव है जिसे प्रभु भुला देता है। उस प्रभु को छोड़कर कोई कहाँ जाए? सब जीवों के सिर पर एक ही प्रभु है जो माया के प्रभाव से परे है। उस प्रभु को भीतर-बाहर सर्वत्र अपने साथ जानो, जिसके वश में सब जीवों की जिन्दगी का भेद है। हे नानक! (कहो, प्रभु के) सेवक उस पर बलिहारी हैं जो गुणों का खजाना तथा अनन्त अपरम्पार है।

पूरन पूरि रहे दइआल।
सभ ऊपरि होवत किरपाल।
अपने करतब जानै आपि।
अंतरजामी रहिओ बिआपि।
प्रतिपालै जीअन बहु भाति।
जो जो रचिओ सु तिसहि धिआति।
जिसु भावै तिसु लए मिलाइ।
भगति करहि हरि के गुण गाइ।
मन अंतरि बिस्वासु करि मानिआ।
करनहारु नानक इकु जानिआ।

दया के घर प्रभुजी सर्वत्र व्यापक हैं और सब जीवों पर कृपा करते हैं। प्रभु अपने खेल आप जानता है, सब के दिल की जाननेवाला प्रभु सर्वत्र मौजूद है। जीवों को कई तरीकों से पालता है, जो-जो जीव उनसे पैदा किया है, वह उसी प्रभु को स्मरण करता है। जिस पर प्रसन्न होता है उसे साथ जोड़ लेता है, (जिस पर तुष्ट होता है) वे उसके गुण गाकर उसकी भक्ति करते हैं। हे नानक! जिस मनुष्य ने मन में श्रद्धा धारण करके प्रभु को (सचमुच अस्तित्व वाला) मान लिया है, उसने एक कर्त्तार को पहचाना है।

जनु लागा हरि एकै नाइ।
तिस की आस न बिरथी जाइ।
सेवक कउ सेवा बनि आई।
हुकमु बूझि परम पदु पाई।
इस ते ऊपरि नही बीचारु।
जा कै मनि बसिआ निरंकारु।
बंधन तोरि भए निरवैर।
अनदिनु पूजहि गुर के पैर।
इह लोक सुखीए परलोक सुहेले।
नानक हरि प्रभि आपहि मेले।
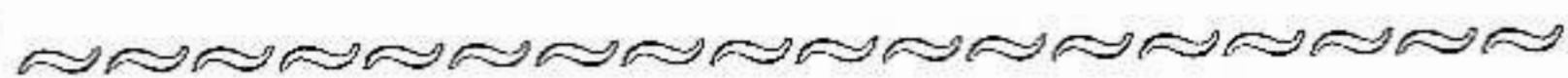
(जो) सेवक एक प्रभु के नाम में टिका हुआ है, उसकी आशा कभी खाली नहीं जाती। सेवक को यह शोभायमान होता है कि सब की सेवा करे। प्रभु की रजा समझकर उसे ऊँचा स्थान मिल जाता है। जिनके मन में अकालपुरुष रहता है, उन्हें इससे बड़ा कोई विचार नहीं सूझता; (माया के) बन्धन तोड़कर वे वैर-रहित हो जाते हैं और प्रत्येक पल सतिगुरु के चरण पूजते हैं; वे मनुष्य इन जन्म में सुखी हैं और परलोक में भी सुखी होते हैं, (क्योंकि) हे नानक! प्रभु ने आप उन्हें (अपने साथ) मिला लिया है।

साधसंगि मिलि करहु अनंद।
गुन गावहु प्रभ परमानंद।
राम नाम ततु करहु बीचारु।
द्रुलभ देह का करहु उधारु।
अंम्रित बचन हरि के गुन गाउ।
प्रान तरन का इहै सुआउ।
आठ पहर प्रभ पेखहु नेरा।
मिटै अगिआनु बिनसै अंधेरा।
सुनि उपदेसु हिरदै बसावहु।
मन इछे नानक फल पावहु।

परमानन्द प्रभु की गुणस्तुति करो, सत्संग में मिलकर यह (आत्मिक) आनन्द भोगो। प्रभु के नाम में भेद को विचारो और इस (शरीर) का बचाव करो जो बड़ी मुश्किल से मिलता है। अकालपुरुष के गुण गाओ जो अमर करनेवाले वचन हैं, जिन्दगी को (विकारों से) बचाने का यही साधन है। आठों प्रहर प्रभु को अपने साथ-साथ देखो (इस प्रकार) अज्ञानता मिट जाएगी और अन्धेरा नष्ट हो जाएगा। हे नानक! (सतिगुरु का) उपदेश सुनकर हृदय में टिकाओ, इस प्रकार मनोवांछित मुरादें (इच्छाएँ) मिलेंगी।

हलतु पलतु दुइ लेहु सवारि।
राम नामु अंतरि उरि धारि।
पूरे गुर की पूरी दीखिआ।
जिसु मनि बसै तिसु साचु परीखिआ।
मनि तनि नामु जपहु लिव लाइ।
दूखु दरदु मन ते भउ जाइ।
सचु वापारु करहु वापारी।
दरगह निबहै खेप तुमारी।
एका टेक रखहु मन माहि।
नानक बहुरि न आवहि जाहि।
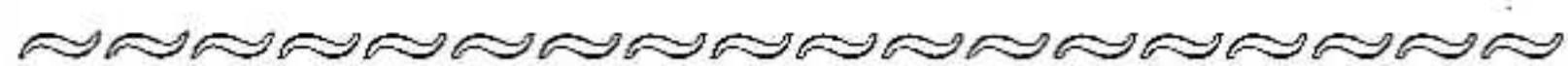
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभु का नाम भीतर हृदय में टिकाओ, (इस प्रकार) लोक तथा परलोक दोनों सुधार लो। पूर्ण सतिगुरु की शिक्षा भी पूर्ण होती है, जिस मनुष्य के मन में (यह शिक्षा) बसती है, उसे सत्यस्वरूप प्रभु समझ में आ जाता है। मन तथा शरीर के द्वारा लौ जोड़कर नाम जपो, दुख-दर्द और मन से भय दूर हो जाएगा। हे बनजारे जीव! सच्चा व्यापार करो, (नाम-रूपी सच्चे व्यापार से) तुम्हारा सौदा प्रभु के दरबार में स्वीकारा जाएगा (सत्कृत होगा)। हे नानक! मन में एक अकालपुरुष का आसरा रखो, दोबारा जन्म-मरण का चक्र नहीं होगा।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

तिस ते दूरि कहा को जाइ।
उबरै राखनहारु धिआइ।
निरभउ जपै सगल भउ मिटै।
प्रभ किरपा ते प्राणी छुटै।
जिसु प्रभु राखै तिसु नाही दूख।
नामु जपत मनि होवत सूख।
चिंता जाइ मिटै अहंकारु।
तिसु जन कउ कोइ न पहुचनहारु।
सिरि ऊपरि ठाढा गुरु सूरा।
नानक ता के कारज पूरा।

उस प्रभु से परे कहाँ कोई जीव जा सकता है? जीव उस रक्षक प्रभु को स्मरण करके ही बचता है। जो मनुष्य निर्भय, अकालपुरुष को जपता है, उसका सारा भय मिट जाता है, (क्योंकि) प्रभु की कृपा द्वारा ही व्यक्ति (भय से) मुक्ति पाता है। जिस व्यक्ति को प्रभु बचाता है उसे कोई दु:ख नहीं छूता, नाम जपने से मन में सुख पैदा होता है। (नाम-स्मरण करने से) चिन्ता दूर हो जाती है, अहंकार मिट जाता है, उस मनुष्य की कोई बराबरी नहीं कर सकता। हे नानक! जिस व्यक्ति के सिर पर रक्षक के रूप में शूरवीर सतिगुरु खड़ा हुआ है, उसके सारे काम सफल हो जाते हैं।

मति पूरी अंम्रितु जा की द्रिसटि।
दरसनु पेखत उधरत स्रिसटि।
चरन कमल जा के अनूप।
सफल दरसनु सुंदर हरि रूप।
धंनु सेवा सेवकु परवानु।
अंतरजामी पुरखु प्रधानु।
जिसु मनि बसै सु होत निहालु।
ता कै निकटि न आवत कालु।
अमर भए अमरा पदु पाइआ।
साध संगि नानक हरि धिआइआ।

जिस प्रभु की समझ पूर्ण है, जिसकी नजर से अमृत बरसता है, उसका दर्शन करने से जगत् का उद्धार होता है। जिस प्रभु के कमलों जैसे अत्यन्त सुन्दर चरण हैं, उसका रूप सुन्दर है, और उसका दर्शन इच्छाओं को पूर्ण करनेवाला है। वह अकालपुरुष घट-घट की जाननेवाला और सबसे बड़ा है, उसका सेवक (दरबार में) स्वीकृत हो जाता है, (इसलिए) उसकी सेवा मुबारिक है। जिस मनुष्य के हृदय में (ऐसा प्रभु) बसता है, वह (पुष्प की तरह) खिल उठता है, उसके निकट काल (भी) नहीं आता। हे नानक! जिन मनुष्यों ने सत्संग में प्रभु को स्मरण किया है, वे जन्म-मरण से छूट जाते हैं और सत्यस्वरूप स्थान प्राप्त कर लेते हैं।

ੴ

✣ सलोकु ✣

गिआन अंजनु गुरि दीआ
अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ
नानक मनि परगासु।

(जिस मनुष्य को) सतिगुरु ने ज्ञान का सुरमा दिया है; उसके अज्ञान (रूपी) अन्धेरे का नाश हो जाता है। हे नानक! (जो मनुष्य) अकालपुरुष की कृपा से गुरु को मिला है, उसके मन में (ज्ञान का) प्रकाश हो जाता है।

✣ असटपदी ✣

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा।
नामु प्रभू का लागा मीठा।
सगल समिग्री एकसु घट माहि।
अनिक रंग नाना द्रिसटाहि।
नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु।
देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद।
कहनु न जाई अचरज बिसमाद।
तिनि देखिआ जिसु आपि दिखाए।
नानक तिसु जन सोझी पाए।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(जिस मनुष्य ने) गुरु की संगति में (रहकर) अपने भीतर अकालपुरुष को देखा है, उसे प्रभु का नाम प्यारा लगने लगता है। (जगत् के) सारे पदार्थ (उसे) एक प्रभु में ही (लीन दिखते हैं), (उससे ही) अनेकों किस्मों के रंग-तमाशे (निकले हुए) दिखते हैं; (उस मनुष्य के) शरीर में प्रभु का नाम ठिकाना (हो जाता) है जो (मानो जगत् के) नौ खजाने (के तुल्य) है और अमृत है; उस मनुष्य के भीतर शून्य समाधि जुड़ी रहती है, और ऐसा आश्चर्य निरन्तर-निरन्तर राग (-रूपी आनन्द बना रहता है), कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता। (पर) हे नानक! यह (आनन्द) उस मनुष्य ने देखा है जिसे प्रभु आप दिखाता है (क्योंकि) उस मनुष्य को (उस आनन्द की) समझ देता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

सो अंतरि सो बाहरि अनंत।
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत।
धरनि माहि आकास पइआल।
सरब लोक पूरन प्रतिपाल।
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु।
जैसी आगिआ तैसा करमु।
पउण पाणी बैसंतर माहि।
चारि कुंट दह दिसे समाहि।
तिस ते भिंन नही को ठाउ।
गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ।

वह अनन्त भगवान् भीतर-बाहर (सर्वत्र) हरेक शरीर में मौजूद है; धरती, आकाश और पाताल में है, सारे भुवनों में मौजूद है और सत्य की रक्षा करता है; वह पारब्रह्म जंगल में है, घास और पर्वत में है, जैसा वह हुक्म करता है, वैसा ही (जीव) काम करता है; पवन, पानी, अग्नि, चारों कोनों, दसों दिशाओं में (सर्वत्र) समाया हुआ है, कोई (भी) स्थान उस प्रभु से अलग नहीं; (पर) हे नानक! (इन निश्चय का) आनन्द गुरु की कृपा से मिलता है।

बेद पुरान सिंम्रिति महि देखु।
ससी अर सूर नख्यत्र महि एकु।
बाणी प्रभ की सभु को बोलै।
आपि अडोलु न कबहू डोलै।
सरब कला करि खेलै खेल।
मोलि न पाईऐ गुणह अमोल।
सरब जोति महि जा की जोति।
धारि रहिओ सुआमी ओति पोति।
गुर परसादि भरम का नासु।
नानक तिन महि एहु बिसासु।

वेद, पुराण, स्मृतियों में (उसी प्रभु को) देखो, चन्द्रमा, सूर्य, तारों में भी वहीं है; हर एक जीव अकालपुरुष की ही बोली बोलता है; वह आप स्थिर है कभी विचलित नहीं होता। समस्त शक्तियाँ रचकर (जगत् का) खेल, खेल रहा है, (पर वह) किसी मूल्य पर नहीं मिलता, (क्योंकि) मूल्य गुणों वाला है। जिस प्रभु की ज्योति तमाम ज्योतियों में (जग रही है) वह मालिक ताने-पेटे की तरह (सबको) आसरा दे रहा है (पर) हे नानक! (अकालपुरुष के इस सर्वव्यापक अस्तित्व का) यह विश्वास उन मनुष्यों के भीतर बनता है, जिनका भ्रम गुरु की कृपा से मिट जाता है।

संत जना का पेखनु सभु ब्रहम।
संत जना कै हिरदै सभि धरम।
संत जना सुनहि सुभ बचन।
सरब बिआपी राम संगि रचन।
जिनि जाता तिस की इह रहत।
सति बचन साधू सभि कहत।
जो जो होइ सोई सुखु मानै।
करन करावनहारु प्रभु जानै।
अंतरि बसे बाहरि भी ओही।
नानक दरसनु देखि सभ मोही।

संतजन सर्वत्र अकालपुरुष को ही देखते हैं, उनके हृदय में सारे (ख्याल) धर्म के ही (उठते हैं)। संत भले वचन ही सुनते हैं और सर्वत्र व्यापक अकालपुरुष से जुड़े रहते हैं। जिस-जिस संत ने (प्रभु को) जान लिया है, उसका आचरण ही यह हो जाता है कि वह सदा सत्य बोलता है; (और) जो कुछ होता है, उसे ही सुख मानता है, सब काम करनेवाला तथा करानेवाला प्रभु को ही जानता है। (साधुजनों के लिए) भीतर-बाहर (सर्वत्र) वही प्रभु बसता है। हे नानक! (प्रभु का सर्वव्यापक) साक्षात्कार करके सारी सृष्टि मस्त हो जाती है।

आपि सति कीआ सभु सति।
तिसु प्रभ ते सगली उतपति।
तिसु भावै ता करे बिसथारु।
तिसु भावै ता एकंकारु।
अनिक कला लखी नह जाइ।
जिसु भावै तिसु लए मिलाइ।
कवन निकटि कवन कहीऐ दूरि।
आपे आपि आप भरपूरि।
अंतरगति जिसु आपि जनाए।
नानक तिसु जन आपि बुझाए।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभु आप आस्तित्ववान है, जो कुछ उसने पैदा किया है, सब अस्तित्व वाला है। सारी सृष्टि उस प्रभु से हुई है। यदि उसकी रजा होवे तो जगत् का प्रसार कर देता है, यदि भाए तो फिर एक आप ही आप हो जाता है। उसकी अनेक शक्तियाँ हैं, किसी का वर्णन नहीं हो सकता; जिस पर तुष्ट होता है उसे अपने साथ मिला लेता है। वह प्रभु किन से दूर और किन से निकट कहा जा सकता है? वह प्रभु आप ही सर्वत्र मौजूद है। जिस मनुष्य को प्रभु आप भीतरी उच्च अवस्था सुझा देता है, हे नानक! उस मनुष्य को (अपनी इस सर्वव्यापकता की) समझ देता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~

इस ते होइ सु नाही बुरा।
ओरै कहहु किनै कछु करा।
आपि भला करतूति अति नीकी।
आपे जानै अपने जी की।
आपि साचु धारी सभ साचु।
ओति पोति आपन संगि राचु।
ता की गति मिति कही न जाइ।
दूसर होइ त सोझी पाइ।
तिस का कीआ सभु परवानु।
गुर प्रसादि नानक इहु जानु।
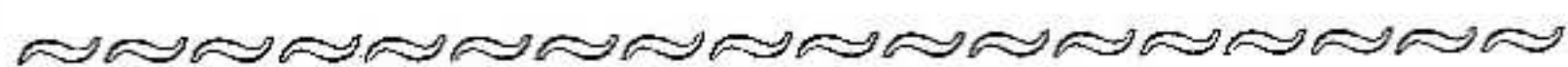
जो कुछ प्रभु की ओर से होता है, (जीवों के लिए) अशुभ नहीं होता; और प्रभु के अतिरिक्त किसने कुछ कर दिखाया है? प्रभु आप भला है, उसका काम भी भला है, अपने दिल की बात वह आप ही जानता है। आप अस्तित्ववाला है, सारी रचना जो उसके आसरे है, वह भी अस्तिववाली है (भ्रम नहीं), ताने-पेटे के समान उसने अपने साथ मिलाई हुई है। वह प्रभु कैसा है और कितना बड़ा है—यह बात व्यक्त नहीं हो सकती, कोई दूसरा होवे तो समझ सके। प्रभु का किया हुआ सब कुछ (जीवों को) स्वीकार करना पड़ता है, (पर) हे नानक! यह पहचान गुरु की कृपा से आती है।

जो जानै तिसु सदा सुखु होइ।
आपि मिलाइ लए प्रभु सोइ।
ओहु धनवंतु कुलवंतु पतिवंतु।
जीवन मुकति जिसु रिदै भगवंतु।
धंनु धंनु धंनु जनु आइआ।
जिसु प्रसादि सभु जगतु तराइआ।
जन आवन का इहै सुआउ।
जन कै संगि चिति आवै नाउ।
आपि मुकतु मुकतु करै संसारु।
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु।

जो मनुष्य प्रभु के साथ मेल कर लेता है उसे सदा सुख होता है, प्रभु उसे अपने साथ मिला लेता है। जिस मनुष्य के हृदय में भगवान् बसता है, वह जीवित ही मुक्त हो जाता है, वह धन, कुल तथा प्रतिष्ठा वाला बन जाता है। जिस मनुष्य की कृपा से सारा जगत् ही पार होता है, उसका (जगत् में) आना धन्य है। ऐसे मनुष्य के आने का यही मनोरथ है कि उसकी संगति में (रहकर दूसरे मनुष्यों को प्रभु का) नाम स्मरण आता है। वह मनुष्य आप (माया से) स्वतन्त्र है, जगत् को भी मुक्त करता है, हे नानक! ऐसे (उत्तम) मनुष्य को हमारा सदा प्रणाम है।

ੴ

✣ सलोकु ✣

पूरा प्रभु आराधिआ
पूरा जा का नाउ।
नानक पूरा पाइआ
पूरे के गुन गाउ।

(जिस मनुष्य ने) अटल नामवाले पूर्ण प्रभु को स्मरण किया है, उसे पूर्णप्रभु मिल गया है; (इसलिए) हे नानक! तू भी पूर्णप्रभु के गुण गा।

✣ असटपदी ✣

पूरे गुर का सुनि उपदेसु।
पारब्रहम निकटि करि पेखु।
सासि सासि सिमरहु गोबिंद।
मन अंतर की उतरै चिंद।
आस अनित तिआगहु तरंग।
संत जना की धूरि मन मंग।
आपु छोडि बेनती करहु।
साधसंगि अगनि सागरु तरहु।
हरि धन के भरि लेहु भंडार।
नानक गुर पूरे नमसकार।

(हे मन!) पूर्ण सतिगुरु की शिक्षा सुन और अकालपुरुष को निकट जानकर देख। (हे भाई!) प्रत्येक पल प्रभु को याद कर, तेरे मन के भीतर की चिन्ता मिट जाए। हे मन! नश्वर (वस्तुओं की) आशाओं की लहरें छोड़ दे और संतजनों के पैरों की धूलि माँग। (हे भाई!) आपा-भाव छोड़कर (प्रभु के समक्ष) प्रार्थना कर (और) सत्संगति में रहकर (विकारों की) आग के समुद्र से पार उतर। हे नानक! प्रभु के नाम-रूपी धन के भण्डार भर ले और पूर्ण सतिगुरु को नमस्कार कर।

खेम कुसल सहज आनंद।
साधसंगि भजु परमानंद।
नरक निवारि उधारहु जीउ।
गुन गोबिंद अंम्रित रसु पीउ।
चिति चितवहु नाराइण एक।
एक रूप जा के रंग अनेक।
गोपाल दामोदर दीन दइआल।
दुख भंजन पूरन किरपाल।
सिमरि सिमरि नामु बारंबार।
नानक जीअ का इहै अधार।
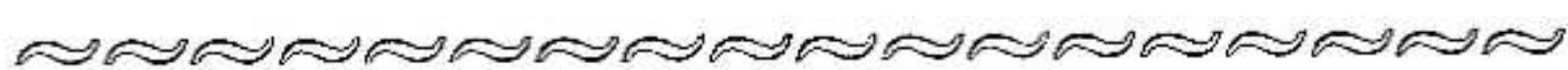
(हे भाई!) सत्संगति में परमसुख-रूपी प्रभु का स्मरण कर, (इस प्रकार) अटल सुख, सहज जीवन तथा आत्मिक स्थिरता का आनन्द प्राप्त होंगे; गोविंद के गुण गा, (नाम-) अमृत का रसपान कर, (इस प्रकार) नरकों को दूर कर आत्मा को बचा ले। जिस एक अकालपुरुष के अनेक रंग हैं, उस एक प्रभु का ध्यान हृदय में कर। दीनों पर दया करनेवाला गोपाल दामोदर दुःखों का नाश सब में व्यापक और कृपा कर घर है। हे नानक! उसका नाम बार-बार स्मरण कर, आत्मा का आसरा यह नाम ही है।

उतम सलोक साध के बचन।
अमुलीक लाल एहि रतन।
सुनत कमावत होत उधार।
आपि तरै लोकह निसतार।
सफल जीवनु सफलु ता का संगु।
जा कै मनि लागा हरि रंगु।
जै जै सबदु अनाहदु वाजै।
सुनि सुनि अनद करे प्रभु गाजै।
प्रगटे गुपाल महांत कै माथे।
नानक उधरे तिन कै साथे।

साधु (गुरु) के वचन सर्वश्रेष्ठ गुणस्तुति की वाणी हैं, यही अमूल्य लाल और रत्न हैं। इन वचनों को सुनने और कमाने से बेड़ा पार होता है, (जो कमाता है) वह आप पार होता है और लोगों का भी उद्धार करता है। जिस मनुष्य के मन में प्रभु का प्रेम बन जाता है, उसकी जिन्दगी पूर्ण कामनाओं वाली हो जाती है, उसकी संगति दूसरों की कामनाएँ पूर्ण करती है, (उसके भीतर) निरंतर प्रगति का प्रवाह प्रवाहित होता है, जिसे सुनकर वह खुश होता है (क्योंकि) प्रभु (उसके भीतर) अपना सौन्दर्य प्रकट करता है। गोपाल प्रभुजी सदाचारी व्यक्ति के माथे पर प्रकट होते हैं। हे नानक! ऐसे व्यक्ति के साथ दूसरे कई मनुष्यों का बेड़ा पार होता है।

सरनि जोगु सुनि सरनी आए।
करि किरपा प्रभ आप मिलाए।
मिटि गए बैर भए सभ रेन।
अंम्रित नामु साधसंगि लैन।
सुप्रसंन भए गुरदेव।
पूरन होई सेवक की सेव।
आल जंजाल बिकार ते रहते।
राम नाम सुनि रसना कहते।
करि प्रसादु दइआ प्रभि धारी।
नानक निबही खेप हमारी।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

हे प्रभु! यह सुनकर कि तू शरणागतों की बाँह पकड़ने योग्य (रक्षक) है, हम तेरे द्वार पर आए थे, तूने कृपा करके (हमें) अपने साथ मिला लिया है। (अब हमारे) वैर-भाव मिट गए हैं, हम सबके पैरों की धूलि हो गए हैं, (अब) सत्संगति में अमर करनेवाला नाम जप रहे हैं। गुरुदेवजी (हम पर) तुष्ट हुए हैं, इसलिए (हम-) सेवकों की सेवा सफल हो गई है, (अब हम) घरेलू धन्धों तथा विकारों से बच गए हैं, प्रभु का नाम सुनकर जिह्वा से (भी) उच्चारित करते हैं। हे नानक! प्रभु ने कृपा करके (हम पर) दया की है और हमारा किया हुआ व्यापार दरबार में स्वीकृत हो गया है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

प्रभ की उसतति करहु संत मीत।
सावधान एकागर चीत।
सुखमनी सहज गोबिंद गुन नाम।
जिसु मनि बसै सु होत निधान।
सरब इछा ता की पूरन होइ।
प्रधान पुरखु प्रगटु सभ लोइ।
सभ ते ऊच पाए असथानु।
बहुरि न होवै आवन जानु।
हरि धनु खाटि चलै जनु सोइ।
नानक जिसहि परापति होइ।

हे संत मित्र! ध्यानपूर्वक चित्त को एक लक्ष्य पर टिकाकर अकालपुरुष की गुणस्तुति करो। प्रभु की गुणस्तुति और प्रभु के साथ ऐक्य सुखों की मणि है, जिसके मन में (नाम) रहता है, वह गुणों का खजाना हो जाता है। उसकी तमाम इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं, वह [illegible] चलने योग्य हो जाता है और सारे जगत् में प्रकट हो जाता है। उसे सर्वोच्च ठिकाना मिल जाता है, उसे दोबारा जन्म-मरण का चक्र नहीं लगता। हे नानक! जिस मनुष्य को (परमात्मा से) यह देन मिलती है वह मनुष्य प्रभु का नाम-रूपी धन प्राप्त करके (जगत् से) जाता है।

खेम सांति रिधि नव निधि।
बुधि गिआनु सरब तह सिधि।
बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु।
गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु।
चारि पदारथ कमल प्रगास।
सभ कै मधि सगल ते उदास।
सुंदरु चतुरु तत का बेता।
समदरसी एक द्रिसटेता।
इह फल तिसु जन कै मुखि भने।
गुर नानक नाम बचन मनि सुने।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

स्थिर सुख मन का टिकाव, ऋद्धियाँ, नौ भण्डार, बुद्धि, ज्ञान और समस्त चमत्कार उस मनुष्य में (आ जाती हैं); विद्या, तप, योग, अकालपुरुष का स्मरण, श्रेष्ठ ज्ञान, शुभ स्नान, चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष), हृदय-कमल का प्रस्फुटन, सब में रहते हुए सबसे तटस्थ रहना; सुन्दरता, बुद्धिमत्ता, मूल प्रभु का जानकार, सब को समान समझना, सबको एक दृष्टि से देखना; ये सारे फल, हे नानक! उस मनुष्य के भीतर आ बसते हैं, जो गुरु के वचन तथा प्रभु का नाम मुख से उच्चारित करता है और मन लगाकर सुनता है।
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

इहु निधानु जपै मनि कोइ।
सभ जुग महि ता की गति होइ।
गुण गोबिंद नाम धुनि बाणी।
सिम्रिति सासत्र बेद बखाणी।
सगल मतांत केवल हरि नाम।
गोबिंद भगत कै मनि बिस्राम।
कोटि अप्राध साधसंगि मिटै।
संत क्रिपा ते जम ते छुटै।
जा कै मसतकि करम प्रभि पाए।
साध सरणि नानक ते आए।

जो भी मनुष्य गुणों के खजाने, नाम को जपता है, सारी उम्र उसकी ऊँची आत्मिक अवस्था बनी रहती है; उस मनुष्य के (साधारण) बचन भी गोविंद के गुण और नाम का प्रवाह ही होते हैं, स्मृतियों, शास्त्रों और वेदों ने भी यही बात कही है। सारे मतों का निचोड़ प्रभु का नाम ही है, इस नाम का निवास प्रभु के भक्त के मन में होता है। (जो मनुष्य नाम जपता है उसके) करोड़ों पाप सत्संग में रहकर मिट जाते हैं, गुरु की कृपा से वह मनुष्य यमों से बच जाता है। (पर) हे नानक! जिनके माथे पर प्रभु ने (नाम की) कृपा के लेख लिख दिए हैं, वे ही मनुष्य गुरु की शरण आते हैं।

जिसु मनि बसै सुनै लाइ प्रीति।
तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति।
जनम मरन ता का दूखु निवारै।
दुलभ देह ततकाल उधारै।
निरमल सोभा अंम्रित ता की बानी।
एकु नामु मन माहि समानी।
दूख रोग बिनसे भै भरम।
साध नाम निरमल ता के करम।
सभ ते ऊच ता की सोभा बनी।
नानक इह गुणि नामु सुखमनी।

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २६२-२९६)

जिस मनुष्य के मन में (नाम) बसता है, जो प्रेमपूर्वक (नाम) सुनता है, उसे प्रभु स्मरण आता है। उस मनुष्य का जन्म-मरण का कष्ट कट जाता है, वह इस दुर्लभ मनुष्य शरीर को उस वक्त (विकारों से) बचा लेता है; इसकी सुन्दर शोभा और उसकी वाणी (नाम-) अमृत से भरपूर होती है, (क्योंकि) उसके मन में प्रभु का नाम ही बसा रहता है; दुःख, रोग, डर और भ्रम उसके नष्ट हो जाते हैं, उसका नाम 'साधु' हो जाता है और उसके कर्म (विकारों की) मैल से स्वच्छ होते हैं। सबसे उत्कृष्ट शोभा उसे मिलती है। हे नानक! इस गुण के कारण (प्रभु का) नाम सुखों की मणि है (अर्थात् सर्वोत्तम सुख है)।

੧ੳ

बारह माह

[प्रत्येक मास के प्रारम्भ के दिन
पढ़ने के लिए]

और

बावन अखरी

वर्णमाला के ५२ अक्षरों के माध्यम से
मानवता को अद्भुत आध्यात्मिक सन्देश

बारह माह

॥ मांझ महला ५ घरु ४ ॥

१ओंकार सतिगुर प्रसादि।

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम।
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम।
धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम।
जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम।
हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम।
जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम।
स्रब सींगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम।
प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम।
नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु।
हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिसका निहचल धाम॥

पूर्वकृत कर्मों के कारण हम बिछुड़ गए हैं, इसलिए हे सतिगुरु, कृपा करके मुझे राम के साथ मिलाओ। चारों कोनों (उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम) और दसों दिशाओं में भटककर, थककर आप की शरण में आए हैं। जैसे दूध के बिना गाय किसी काम नहीं आती, जैसे जल के बिना खेती मुरझा जाती है, या जैसे दाम नहीं उपजते अर्थात् धन से परमात्म-प्राप्ति नहीं होती, उसी प्रकार यदि मनुष्य-जन्म को पाकर हरि प्रियतम को न मिला जाए तब स्थिरता को कहाँ पाया जा सकता है? जिस घर अर्थात् अन्तःकरण में हरि-पति प्रकट नहीं हुआ, वहाँ नगर और ग्राम सभी अर्थात् अमीर, गरीब भाड़ की तरह तपते हैं, अर्थात् वहाँ शान्ति नहीं आती। समूचे शृंगार, पान आदि समस्त रस (जिनके कारण जीव परमात्मा को भूल जाता है) शरीर के सहित

नाशवान् हैं। हे प्रभु, तुझ प्रियतम परमेश्वर के बिना मित्र, उपकारी सभी यमराज के समान प्रतीत होते हैं अर्थात् मित्र, उपकारी सभी प्रत्युपकार चाहते हैं, केवल परमेश्वर ही निष्काम होकर सहायता करते हैं। नानक कहते हैं, मेरी प्रार्थना है कि कृपा करके मुझे अपना नाम दें। हे स्वामी गुरु, हरिप्रभु के साथ मुझे मिलाइए जिसका प्रकाश स्थिर है अर्थात् जिसका वास निश्चित है।

❊ चैत्र ❊

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा।
संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा।
जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा।
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा।
जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा।
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा।
जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा।
हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना।
चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा॥

चैत्र द्वारा कहा है कि गोविन्द की आराधना कीजिए जिससे बहुत आनन्द होवे। जिह्वा से नाम का उच्चारण सन्तजनों के साथ मिलकर प्राप्त होता है। जिन्होंने अपने प्रभु को पाया है, उन्हीं का आगमन अर्थात् जन्म सफल है। एक क्षण भी उस प्रभु के बिना जो जीना है, उससे पुरुषों का जन्म व्यर्थ जाता है। जल, थल, पृथ्वी, आकाश, सर्वत्र उसी का प्रसार है और वनों में भी वही परिव्याप्त है। जिनको ऐसा प्रभु स्मरण नहीं आता, उनका दुःख कितना अधिक है अर्थात् उनका दुःख अपरिमाप्य है। जिन्होंने उस प्रभु को जपा है, उनके भाग्य शिरोमणि हैं अर्थात् उनके भाग्य अनन्त हैं। नानक कहते हैं, हरि

के दर्शनों को मन चाहता है और मन में दर्शनों की अतीव उत्कण्ठा है। चैत्र द्वारा गुरुजी कहते हैं, जो उस प्रभु को मिलाए, मैं उसके चरणों को स्पर्श करता हूँ।

❋ बैसाख ❋

वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम बिछोहु।
हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु।
पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु।
पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु।
इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि।
दयु विसारि विगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ।
प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ।
नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ।
वैसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ॥

बैसाख द्वारा गुरुजी कहते हैं, परमेश्वर से वियुक्त जिनके प्रेम का बिछोह हुआ है, वे कैसे धैर्य धारण करें। हरि साजन (प्रियतम) को विस्मृत कर छल-रूपी माया में बुद्धि लगी है। पुत्र, स्त्री तथा धन कोई भी जीव का साथ नहीं करता, केवल वह अविनाशी हरि ही सहायक होता है। मिथ्या व्यवहार में मोहबद्ध होकर समूची सृष्टि फंस-फंस कर मरी है। एक हरि के नाम के बिना दूसरे सकाम कर्म—मार्ग में छीन लिए जाते हैं। प्रेरक वाहिगुरु को विस्मृत कर दुखी होना है अर्थात् खराब होना है क्योंकि प्रभु के बिना दूसरा कोई सहायक नहीं होता। जो प्यारे वाहिगुरु के चरणों में लगे हैं, उनकी शोभा निर्मल है। नानक कहते हैं, प्रभु, मेरी विनती है कि यदि आप मिलें तो मेरी वास्तविक उपलब्धि हो अर्थात् कुछ प्राप्तव्य फिर शेष न रहे। हे हरि, तेरा जो सन्त है यदि वह मिले तो बैसाख शोभनीय लगता है।

❋ ज्येष्ठ ❋

हरि जेठि जुड़ंदा लोड़ीऐ जिसु अगै सभि निवंनि।
हरि सजण दावणि लगिआ किसै न देई बंनि।
माणक मोती नामु प्रभ उन लगै नाही संनि।
रंग सभे नाराइणै जेते मनि भावंनि।
जो हरि लोड़े सो करे सोई जीअ करंनि।
जो प्रभि कीते आपणे सेई कहीअहि धंनि।
आपण लीआ जे मिलै विछुड़ि किउ रोवंनि।
साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि।
हरि जेठु रंगीला तिसु धणी जिस कै भागु मथंनि॥

जेठ महीने द्वारा गुरुजी कहते हैं, हरि में मन जुड़ा हुआ होना चाहिए, जिसके समक्ष सब झुकते हैं। सज्जन हरि के साथ जुड़कर अर्थात् शरणागत हुए किसको संरक्षण नहीं दिया जाता? अर्थात् प्रभु शरणागत-रक्षक हैं। प्रभु का नाम माणिक्य-मोती के तुल्य है, उस प्रभु-नाम-रूपी धन को सेंध नहीं लगाई जा सकती। जितने जीवों के मन परमात्म-प्रेम में रंगे हैं, अर्थात् प्रभु-रंग में रंगे हैं, वे सभी रंग नारायण के हैं। जो-जो कर्म हरि कराना चाहते हैं, जीव वही-वही कर्म करते हैं। जो पुरुष प्रभु ने अपने दास बनाए हैं, वही स्तुति योग्य कहे जाते हैं। यदि अपनाया हुआ हरि मिल जाए तो परमेश्वर से बिछुड़कर जीव क्यों रोएँ? ईश्वर-प्राप्ति के विषय में गुरु जी कहते हैं कि जिनको सन्तों का संग प्राप्त हुआ है, वे हरि को प्राप्त होकर आनन्द भोगते हैं। जेठ के द्वारा नानक कहते हैं कि हरिप्रेमी उसे प्राप्त होता है, जिसके मस्तक में श्रेष्ठ भाग्य है।

* आषाढ़ *

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि।
जग जीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस।
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास।
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु।
रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास।
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु।
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस।
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि।
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास॥

जिनके पास हरि प्रियतम नहीं उन्हें आषाढ़ तपता हुआ लगता है। जो जगजीवन पुरुष को त्यागकर मनुष्य की आशा करते हैं वे द्वैतभाव के कारण दुखी होते हैं और उनके गले में यम का फन्दा पड़ा हुआ समझो। वह जैसा कर्म करेगा वैसा भोगेगा अर्थात् जैसा बोएगा वैसा काटेगा। मस्तक में जो लेख लिखा था, (वही अब व्यावहारिक रूप में प्रकट हुआ है)। जब रात्रि-रूपी अवस्था बीत गई तब जीव-रूपी स्त्री पश्चाताप करती हुई, निराश होकर उठकर चली गई। जिनको सन्त पुरुष मिले हैं वे दरबार में बन्धनमुक्त हुए हैं। हे प्रभु, ऐसी कृपा कर जिससे तेरे दर्शनों की चाह हो। नानक कहते हैं, हे प्रभु, तुझसे अलग दूसरा कोई नहीं है (इसलिए) मेरी तेरे समक्ष विनती है। हे हरि, जिसके मन में तेरे चरणों का निवास है, अर्थात् ध्यान है, उसी को आषाढ़ सुहावना लगता है।

❊ श्रावण ❊

सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु।
मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु।
बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु।
हरि अंम्रित बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु।
वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ संम्रथ पुरख अपारु।
हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु।
जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार।
नानक हरि जी मइआ करि सबदि सवारणहारु।
सावणु तिना सुहागणी जिन रामनामु उरि हारु॥

सावन द्वारा गुरुजी कहते हैं, जो जीव-रूपी स्त्री चरण कमलों में नेह लगाती है, वह आनन्द को प्राप्त होती है। जिन्होंने एक नाम का आधार लिया है, उनका मन, तन सच्चे प्रेम में डूबा है। विषयों के सभी रंग झूठे और नाशमान दिखाई देते हैं। हरि-नाम शोभनीय एवं अमृत की बूँद है, परन्तु उसे, सन्तों के साथ मिलकर पीनेवाला हुआ जाता है। अपार सामर्थ्यवान पुरुष प्रभु की सत्ता के साथ वन के साथ तृणवत प्रफुल्लित हो रहा है। हरि के मिलाप को बहुत अधिक मन चाहता है, लेकिन शुभ कर्म ही मिलानेवाले हैं। जिन सन्त-रूपी सखियों ने प्रभु को पाया है, मैं उन पर सदा बलिहारी जाता हूँ। नानक कहते हैं, हरि जीवों पर दया करके गुरु-उपदेश से उन्हें शुद्ध करनेवाला है। उन्हीं सुहागिनों का सावन सफल है, जिन्होंने राम के नाम का हार हृदय में धारण किया है।

* भाद्रपद *

भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु।
लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु।
जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु।
पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु।
छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु।
हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु।
जेहा बीजै सो लुणै करमा मंदड़ा खेतु।
नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु।
से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखणवाला हेतु॥

भादों के महीने के द्वारा गुरुजी कहते हैं, जो जीव-रूपी स्त्रियाँ भ्रम के कारण भूली हुई हैं, उनका द्वैत में प्रेम लगा है। यद्यपि लाख प्रकार के शृंगार बनाए हैं अर्थात् अगणित प्रकार से अपने आपको सुसज्जित किया है, तो भी सब कुछ निष्फल है। जिस दिन देह नष्ट हो जाएगी, उसी समय लोग प्रेत कहेंगे। (दुष्कर्म करनेवालों को) यमदूत पकड़कर यमपुरी भेज देंगे और किसी के साथ भेद नहीं करेंगे। जिन सम्बन्धियों के साथ नेह लगा है, वे एक क्षण में ही ममत्व छोड़कर खड़े हो जाएँगे। जीव हाथ मलेगा, उसका शरीर यमराज के भय से काँपेगा और उसका रंग काला हो जायेगा। जीव जैसा बोता है, वैसा ही काटता है, यह शरीर कर्मों का खेत है। नानक कहते हैं, जो प्रभु की शरण को प्राप्त हुए हैं, उन्हें वह प्रभु चरण-रूपी जहाज देता है। जिनके प्रेम का गुरु रक्षक है, वे नरक में नहीं डाले जाते।

❋ आश्विन ❋

असुनि प्रेम उमाहड़ा किउ मिलीऐ हरि जाइ।
मनि तनि पिआस दरसन घणी कोई आणि मिलावै माइ।
संत सहाई प्रेम के हउ तिन कै लागा पाइ।
विणु प्रभ किउ सुखु पाईऐ दूजी नाही जाइ।
जिन्ही चाखिआ प्रेम रसु से त्रिपति रहे आघाइ।
आपु तिआगि बिनती करहि लेहु प्रभू लड़ि लाइ।
जो हरि कंति मिलाईआ सि विछुड़ि कतहि न जाइ।
प्रभ विणु दूजा को नही नानक हरिसरणाइ।
असू सुखी वसंदीआ जिना मइआ हरि राइ॥

आश्विन मास द्वारा गुरुजी कहते हैं कि प्रेम उमड़ आया है, इसलिए हरि को किस प्रकार मिला जाए? सन्तजनों के मन, तन में दर्शन की बहुत अधिक चाह है, कोई आकर मिलाए। जो सन्तजन प्रेम के सहायक हैं, मैं उनके चरण छूता हूँ। परमेश्वर के बिना कैसे सुख पाया जाए क्योंकि उससे अलग सुखदायक स्थान कोई नहीं है। जिन्होंने प्रेम-रस का आस्वादन किया है, वे लोक-परलोक के पदार्थों से तृप्त हुए हैं। वे अहंकार को त्यागकर ऐसे विनती करते हैं कि हे प्रभु, अपने साथ बाँध लो अर्थात् ईश्वर-प्रेम में ओत-प्रोत कर दो। जिन्हें हरि प्रियतम ने अपने साथ मिलाया है, वे जीव स्त्रियाँ बिछुड़कर कहीं नहीं जातीं। नानक कहते हैं, प्रभु से अलग दूसरा कोई (रक्षक) नहीं है, इसीलिए हरि की शरण ली है। जिन पर हरि राजा की दया है, वे आश्विन में सुखी रहती हैं।

❋ कार्तिक ❋

कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु।
परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग।
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग।
खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग।
विचु न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज।
कीता किछू न होवई लिखिआ धुरि संजोग।
वडभागी मेरा प्रभु मिलै तां उतरहि सभि बिओग।
नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच।
कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच॥

कार्तिक मास द्वारा गुरुजी कहते हैं, जैसे जीव कर्म कमाता है, वैसे ही फल भोगता है, किसी को दोष देना उपयुक्त नहीं। परमेश्वर को विस्मृत करनेवाले व्यक्तियों को सब रोग लगते हैं। जो राम से विमुख हुए हैं, उनको जन्म से बिछोह का दुःख मिलता है। जितने माया के भोग थे, जो मधुर लगते थे, अन्तिम समय में क्षणमात्र के भीतर दुखदायक हो गए; कोई भी माध्यम नहीं बन सकता। किसके पास हमेशा का रोना रोएँ! अपना किया हुआ कुछ नहीं होता, सब कुछ पूर्वनिर्धारित है अर्थात् ईश्वर द्वारा लिखा गया है। जब सौभाग्यवश मेरा प्रभु मिलता है, तब वियोग के दुःख मिट जाते हैं। नानक कहते हैं, हे प्रभु स्वामी, तू वासना-रूपी बेड़ियों को काटकर रक्षा कर अर्थात् अपने संरक्षण में रख क्योंकि जब सन्तों का सत्संग हो तब सम्पूर्ण शोक विनष्ट हो जाता है।

❋ मार्गशीर्ष ❋

मंघिरि माहि सोहंदीआ हरि पिर संगि बैठड़ीआह।
तिन की सोभा किआ गणी जि साहिबि मेलड़ीआह।
तनु मनु मउलिआ राम सिउ संगि साध सहेलड़ीआह।
साध जना ते बाहरी से रहनि इकेलड़ीआह।
तिन दुखु न कबहू उतरै से जम कै वसि पड़ीआह।
जिनी राविआ प्रभु आपणा से दिसनि नित खड़ीआह।
रतन जवेहर लाल हरि कंठि तिना जड़ीआह।
नानक बांछै धूड़ि तिन प्रभ सरणी दरि पड़ीआह।
मंघिरि प्रभु आराधणा बहुड़ि न जनमड़ीआह॥

मार्गशीर्ष महीने के द्वारा गुरुजी कहते हैं, जो हरि प्रियतम के साथ बैठती हैं अर्थात् भजन करती हैं, वे शोभा पाती हैं। जिन्हे स्वामी ने मिलाया है, उनकी शोभा की क्या गिनती है? अर्थात् उनकी शोभा अपार है। जिन्हें सन्त-रूपी सहेलियों का संग हुआ है, उनका तन, मन राम से मिल गया है, अर्थात् राममय हो गया है। जो संतों की संगति से अलग हैं, वे पति के बिना अकेली रहती हैं। इसलिए उनका दुःख कभी दूर नहीं होता। वे यमराज के वश में पड़ गई हैं और जिन्होंने प्रभु को अपना समझकर स्वीकारा है, वे नित्य प्रभु-भजन में सावधान देखी गई हैं। उनके कण्ठ में रत्न, जवाहर, लाल-रूपी हरिनाम जड़ित है। नानक कहते हैं, जिन्हें प्रभु के द्वार पर शरण मिली है, मैं उनकी चरणधूलि चाहता हूँ। मार्गशीर्ष द्वारा कहते हैं, जिन्होंने प्रभु की उपासना की है, उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

❊ पौष ❊

पोखि तुखारु न विआपई कंठि मिलिआ हरि नाहु।
मनु बेधिआ चरनारबिंद दरसनि लगड़ा साहु।
ओट गोविंद गोपाल राइ सेवा सुआमी लाहु।
बिखिआ पोहि न सकई मिलि साधू गुण गाहु।
जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु।
करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु।
बारि जाउ लख बेरीआ हरि सजणु अगम अगाहु।
सरम पई नाराइणै नानक दरि पईआहु।
पोखु सुहोंदा सरब सुख जिसु बखसे वेपरवाहु॥

पूस महीने द्वारा कहते हैं, जिनको जड़ता-रूपी शीत नहीं लगता उनके कण्ठ में हरि प्रियतम मिला है। जिनका मन हरि के चरण-कमलों में मिला है, उनको परमेश्वर का साक्षात्कार (दर्शन) हुआ है। (उन्होंने) गोविन्द-गोपाल स्वामी का सहारा लिया है और वे स्वामी की सेवा का लाभ लेते हैं। उनको विषयवासना स्पर्श नहीं कर सकती जो सत्संग में मिलकर प्रभु-गुण गाते हैं। जीव-रूपी स्त्री जिस परमेश्वर से उपजी थी उसी में मिल गई है, इसलिए सच्ची प्रीति का आनन्द अनुभूत हुआ है। पारब्रह्म ने जो जीव-रूपी स्त्री मन-रूपी हाथ से पकड़ ली है, वह फिर अलग नहीं होती। हरि प्रियतम अगम्य अथाह है, पर मैं लाख बार बलिहारी जाता हूँ। नानक कहते हैं, कि जो नारायण के द्वार पर पड़े हैं, उनके लिए नारायण को लाज आई है। (परमात्मा शरणागत-रक्षक हैं, इसलिए द्वार पर पड़े लोगों के सम्बन्ध में सोचना स्वाभाविक है) पूस में वही पुरुष सुख-सम्पन्न तथा शोभनीय है, जिसे बेपरवाह परमात्मा बख्श दे अर्थात् अभयदान दे।

❀ माघ ❀

माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु।
हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु।
जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ गुमानु।
कामि करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु।
सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु।
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु।
जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु।
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु।
माघि सुचे से कांढीअहि जिन पूरा गुरु मिहरवानु॥

माघ महीने में स्नान आदि का फल उसको है, जो साधुओं की चरणरज के साथ स्नान करते हैं, अर्थात् सत्संग द्वारा परमेश्वर-भक्ति में लीन रहते हैं। हरि का नाम स्मरण कर और श्रवण कर और उसे सबको बाँट। उससे जन्मान्तरों की कर्म-मैल उतर जायगी और मन से अहंकार जाता रहेगा। काम-क्रोध मोहित नहीं कर पाता और लोभ-रूपी कुत्ता मर जाता है। सत्य-मार्ग पर चलनेवालों की जगत् स्तुति करता है। अठसठ तीर्थों के स्नान और सम्पूर्ण पुण्य जीवों पर दया करने के तुल्य हैं। वाहिगुरु दया करके जिसे अपना नाम देता है, वही पुरुष चतुर है। नानक कहते हैं, जिनको अपना स्वामी हरि मिला है, उनपर मैं कुरबान जाता हूँ। माघ में वे ही पवित्र कहे जाते हैं, जिनपर पूर्ण-सतिगुरु दयालु है।

❊ फाल्गुन ❊

फलगुणि अनद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ।
संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ।
सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ।
इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ।
मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ।
हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ।
हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ।
संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ।
जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ।
फलगुणि नित सलाहीऐ जिसनो तिलु न तमाइ॥

फाल्गुन में उनको आनन्द उपजा है, जिन पर हरि सज्जन प्रकट हुए हैं। लेकिन जब राम के प्यारे सन्तजन सहायक हुए तब उन्होंने कृपा करके (वाहिगुरु से) मिला दिया है। समस्त सुखों के होने से अन्तःकरण-रूपी सेज सुशोभित है, इसलिए अब दुखों की जगह नहीं रही। जिन्होंने हरि-राजा वर को पाया है, उन सौभाग्यशाली जीवों की सम्पूर्ण इच्छाएँ पूर्ण हुई हैं। जो सन्तजन-रूपी सखियाँ प्रभु-गुण गाती हैं, उनके साथ मिलकर गोविन्द के मांगलिक गीत गाऊँ। उन्हें हरि जैसा कोई दूसरा दिखाई नहीं देता, इसलिए कोई दूसरा उसके सदृश या उसके पास नहीं लाया जाता। प्रभु ने उन पुरुषों का लोक-परलोक सँवारा है और उनमें बुद्धि जाग्रत कर दी है, अर्थात् उन्हें निश्चलता दी है। उनकी संसार-समुद्र से रक्षा की है और वे फिर जन्मते-मरते नहीं। नानक कहते हैं, जिह्वा एक है और परमात्मा के गुण अनेक हैं। जिन जीवों को हरि ने अपने चरणों में जगह दी है, वही पार हुए हैं। फाल्गुन द्वारा नानक कहते हैं, उसकी फाल्गुन में प्रतिदिन सराहना करें, जिसे तिलमात्र भी इच्छा नहीं, अर्थात् जो पूर्ण निष्काम है।

जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे।
हरिगुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे।
सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे।
प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे।
कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे।
पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे।
माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे।
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३२-१३६)

जिन-जिन पुरुषों ने नाम-स्मरण किया है, उनके कार्य पूर्ण हुए हैं। निश्चय करके जिन्होंने पूर्ण-गुरु की आराधना की है, वे पुरुष हरि के दरबार में शुद्ध सिद्ध हुए हैं। समस्त सुखों की निधि हरि के चरणों को पाकर संसार-समुद्र से पार हुए हैं। उन्होंने प्रेमा-भक्ति की है और वे विषय-वासनाओं में नहीं जलते। उनके मन में स्थित झूठ आदि विकार चले गए हैं, द्वैत-भावना भाग गई है तथा पूर्ण-परमेश्वर के निश्चय से हृदय भरे हुए हैं। वे मन में एक पारब्रह्म को धारण कर सेवा करते हैं। जिस पर परमात्मा कृपा करता है, उसे मास, दिवस सब मुहूर्त भले हैं। नानक कहते हैं, आनन्ददाता परमेश्वर, मैं तेरा दर्शन-दान माँगता हूँ। कृपा कीजिए अर्थात् दर्शन दें।

बावन अखरी

॥ रागु गउड़ी पूरबी बावन अखरी कबीर जीउ की ॥

॥ १ ओंकार सतिनामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

बावन अछर लोक त्रै सभु कछु इन ही माहि।
ए अखर खिरि जाहिगे ओइ अखर इन महि नाहि ॥ १ ॥
जहा बोल तह अछर आवा। जह अबोल तह मनु न रहावा।
बोल अबोल मधि है सोई। जस ओहु है तस लखै न कोई ॥२ ॥
अलह लहउ तउ किआ कहउ कहउ त को उपकार।
बटक बीज महि रवि रहिओ जा को तीनि लोक बिसथार ॥ ३ ॥
अलह लहंता भेद छै कछु कछु पाइओ भेद।
उलटि भेद मनु बेधिओ पाइओ अभंग अछेद ॥ ४ ॥
तुरक तरीकति जानीऐ हिंदू बेद पुरान।
मन समझावन कारने कछूअक पड़ीऐ गिआन ॥ ५ ॥
ओअंकार आदि मै जाना। लिखि अरु मेटै ताहि न माना।
ओअंकार लखै जउ कोई। सोई लखि मेटणा न होई ॥ ६ ॥

बावन अक्षर सारे जगत में (प्रयुक्त किए जा रहे हैं।) जगत का सारा व्यवहार इन अक्षरों के द्वारा चल रहा है। परन्तु ये अक्षर नष्ट हो जाएँगे (अर्थात् बोलियाँ और उनमें प्रयुक्त होनेवाले अक्षर नाशवान् हैं)। अकालपुरुष से मिलाप जिस शक्ल में अनुभव होता है, उसकी अभिव्यक्ति के लिए कोई भी अक्षर ऐसे नहीं हैं जो इन अक्षरों में आ सकें ॥ १ ॥ जो व्यवहार व्यक्त किया जा सकता है, अक्षर (केवल)

वहीं प्रयोग किए जाते हैं; जो अवस्था वर्णन से परे है, वहाँ (व्यक्त करनेवाला) मन (आप ही) नहीं रह जाता। जहाँ अक्षर प्रयोग किए जा सकते हैं (अर्थात्, जो अवस्था व्यक्त की जा सकती है) और जिस हालत का वर्णन नहीं हो सकता (अर्थात्, परमात्मा में ऐक्य होने की अवस्था)—इन (दोनों ओर) परमात्मा आप ही है, इसलिए जैसा वह (परमात्मा) है वैसा (बिल्कुल वैसा) कोई व्यक्त नहीं सकता॥ २॥ यदि उस अलभ्य (परमात्मा) को मैं प्राप्त कर (भी) लूँ तो मैं उसका सही वर्णन नहीं कर सकता; यदि कुछ वर्णन भी करूँ तो उसका किसी को लाभ नहीं हो सकता। (वैसे) जिस परमात्मा का यह तीनों लोक ही प्रसार है, वह इसमें ऐसे व्यापक है जैसे बरगद (का वृक्ष) बीज में है॥ ३॥ परमात्मा को मिलने का यत्न करते-करते (मेरी) दुविधा का नाश हो गया है और (दुविधा का नाश होने पर मैंने परमात्मा का) सब रहस्य समझ लिया है। दुविधा को पलटने पर मन (परमात्मा में) रम गया है और मैंने उस अविनाशी तथा अभेद प्रभु को प्राप्त कर लिया है॥ ४॥ (मन को प्रभु-चरणों में जुड़े रखने के लिए) मन को ऊँचे जीवन की सूझ देने के लिए (उच्च) हिन्दू उसे जो वेदों और पुराणों की खोज करता होवे॥ ५॥ जो शाश्वत, सर्वव्यापक परमात्मा सबको बनानेवाला है, मैं उसे अविनाशी समझता हूँ; दूसरे जिस व्यक्ति को वह प्रभु पैदा करता है और फिर मिटा देता है, उसे मैं (परमात्मा के तुल्य) नहीं मानता। यदि कोई मनुष्य उस सर्वव्यापक परमात्मा को समझ ले तो उसे समझने पर (उस मनुष्य की उस परम आत्मिक सुरति का) नाश नहीं होता॥ ६॥

❋ क ❋

कका किरणि कमल महिपावा।

ससि बिगास संपट नही आवा।

अरु जे तहा कुसम रसु पावा।

अकह कहा कहि का समझावा॥ ७॥

यदि मैं (ज्ञान-रूपी सूर्य की) किरण (हृदय-रूपी) कमल-पुष्प में टिका लूँ तो (माया-रूपी) चन्द्रमा की चाँदनी से, वह (खिला हुआ हृदय पुष्प) (दोबारा) बन्द नहीं हो जाता। और यदि कभी मैं उस खिलने की हालत में (पहुँचकर) (उस खिले हुए हृदय-रूपी कमल) पुष्प का आनन्द (भी) भोग सकूँ तो उसका वर्णन कथन से परे है। वह मैं कहकर क्या समझा सकता हूँ?

❋ ख ❋

खखा इहै खोड़ि मन आवा।

खोड़े छाडि न दहदिस धावा।

खसमहि जाणि खिमा करि रहै।

तउ होइ निखिअउ अखै पदु लहै॥ ८॥

जब यह मन (-पक्षी जिस को ज्ञान की किरण मिल चुकी है) स्व-स्वरूप के खेल में (प्रभु-चरणों में) आ टिकता है तो इस घोंसले (-प्रभु-चरणों) को छोड़कर इधर-उधर नहीं दौड़ना पड़ता। पति-प्रभु के साथ मेल करके क्षमा के स्रोत प्रभु में टिका रहता है और तब अविनाशी (प्रभु के साथ एक) होकर वह पदवी प्राप्त कर लेता है, जो कभी नष्ट नहीं होती।

✻ ग ✻

गगा गुर के बचन पछाना।
दूजी बात न धरई काना।
रहै बिहंगम कतहि न जाई।
अगह गहै गहि गगन रहाई॥ ९॥

जिस मनुष्य ने सतिगुरु की वाणी के द्वारा परमात्मा से मेल कर लिया है, उसे (प्रभु की गुणस्तुति के बिना) कोई दूसरी बात खींच ही नहीं पाती। वह पक्षी (की तरह सदा निर्लिप्त) रहता है; कभी भी नहीं भटकता; जिस प्रभु को जगत की माया ग्रस नहीं सकती, उसे यह अपने हृदय में बसा लेता है; हृदय में बसाकर अपनी सुरति को प्रभु-चरणों में टिकाए रखता है।

✻ घ ✻

घघा घटि घटि निमसै सोई।
घट फूटे घटि कबहि न होई।
ता घट माहि घाट जउ पावा।
सो घटु छाडि अवघट कतधावा॥ १०॥

हरएक शरीर में वह प्रभु ही विद्यमान है। यदि कोई शरीर (रूपी घड़ा) टूट जाए तो कभी प्रभु के अस्तित्व में कोई घाटा नहीं पड़ता। जब (कोई जीव) इस शरीर के भीतर ही (संसार-समुद्र से पार उतरने के लिए) नाव प्राप्त कर लेता है तो इस नाव को छोड़कर वह गड्ढों में कहीं नहीं भटकता फिरता।

❋ ङ ❋

ङङा निग्रहि सनेहु करि निरवारो संदेह।

नाही देखि न भाजीऐ परम सिआनप एह॥११॥

(हे भाई! अपनी इन्द्रियों को) भली प्रकार रोक, प्रभु से प्रेम कर और अविश्वास दूर कर। (यह काम कठिन अवश्य है, पर) इस ख्याल से कि यह काम हो नहीं सकता (इस काम से) भागना नहीं चाहिए— (बस) सबसे बड़ी अक्ल (की बात) यही है।

❋ च ❋

चचा रचित चित्र है भारी।

तजि चित्रै चेतहु चितकारी।

चित्र बचित्र इहै अवझेरा।

तजि चित्रै चितु राखि चितेरा॥१२॥

(प्रभु का) बनाया हुआ यह जगत (मानो) एक बहुत बड़ी तस्वीर है। (हे भाई!) इस तस्वीर को छोड़कर तस्वीर बनानेवाले को स्मरण रख; (क्योंकि बड़ा) झंझट यह है कि यह (संसार-रूपी) तस्वीर मन मोह लेनेवाली है। (इसलिए) तस्वीर (का ख्याल) छोड़कर तस्वीर बनानेवाले में अपने चित्त को पिरोकर रख।

❋ छ ❋

छछा इहै छत्रपति पासा।

छकि कि न रहहु छाडि कि न आसा।

रे मन मै तउ छिन छिन समझावा।

ताहि छाडि कत आपु बधावा॥ १३॥

(हे मेरे मन! दूसरी) आशाएँ छोड़कर और स्वस्थ होकर क्यों तू

इस (चित्रकार प्रभु) के पास नहीं रहता जो (सबका) बादशाह है? हे मन! तुझे हरवक्त समझाता हूँ कि उसे भुलाकर कहाँ (उसके बनाए चित्र में) तू अपने आपको जकड़ रहा है।

❊ ज ❊

जजा जउ तन जीवत जरावै।
जोबन जारि जुगति सो पावै।
असजरि परजरि जरि जब रहै।
तब जाइ जोति उजारउ लहै॥ १४॥

जब (कोई जीव) माया में रहता हुआ ही शरीर (की इच्छाएँ) जला लेता है, वह मनुष्य यौवन जलाकर जीने की विधि सीख लेता है; जब मनुष्य अपने (धन के अहंकार) को तथा पराई (दौलत की आशा) को जलाकर संयम में रहता है, तब ऊँची आत्मिक अवस्था में पहुँचकर प्रभु की ज्योति का प्रकाश प्राप्त करता है।

❊ झ ❊

झझा उरझि सुरझि नही जाना।
रहिओ झझकि नाही परवाना।
कत झखि झखि अउरन समझावा।
झगरु कीए झगरउ ही पावा॥ १५॥

जिस मनुष्य ने (चर्चाओं में पड़कर निकम्मी) उलझनों में ही फँसना सीखा, उलझनों में से निकलने की विधि न सीखी, वह (सारी उम्र) भयभीत ही रहा, (उसका जीवन) स्वीकृत न हो सका। वादविवाद कर-करके दूसरों को सीख देने का क्या लाभ? चर्चा करते हुए अपने आपको तो केवलमात्र चर्चा करने की ही आदत पड़ गई।

❋ ञ ❋

ञंञा निकटि जु घट रहिओ दूरि कहा तजि जाइ।
जा कारणि जगु ढूढिअउ नेरउ पाइअउ ताहि ॥ १६ ॥

(हे भाई!) जो प्रभु निकट बस रहा है, जो हृदय में बस रहा है, उसे छोड़कर तू दूर कहाँ जाता है? (जिस प्रभु को मिलने के लिए) (हमने सारा) जगत खोजा था, उसे निकट ही (अपने भीतर ही) प्राप्त कर लिया है।

❋ ट ❋

टटा बिकट घाट घट माही।
खोलि कपाट महलि कि न जाही।
देखि अटल टलि कतहि न जावा।
रहै लपटि घट परचउ पावा॥ १७॥

(प्रभु के महल में पहुँचानेवाला) विकट घाट है (जो) हृदय में ही है। (हे भाई! माया के मोह वाले) दरवाजे खोलकर तू प्रभु की सेवा में क्यों नहीं पहुँचता? (जिसने हृदय में ही) सदा स्थिर रहनेवाले प्रभु का दर्शन कर लिया है, वह चलायमान होकर किसी दूसरी ओर नहीं जाता, वह (प्रभु-चरणों के साथ) मेल कर लेता है।

❋ ठ ❋

ठठा इहै दूरि ठग नीरा।
नीठि नीठि मनु कीआ धीरा।
जिनि ठगि ठगिआ सगल जगु खावा।
सो ठगु ठगिआ ठउर मनु आवा॥ १८॥

यह माया इस प्रकार है, जिस प्रकार दूर से दिखती हुई वह रेत, जो पानी लगती है। इसलिए मैंने बहुत गौर से देख-देखकर मन को

धैर्यवान बना लिया है। जिस (मोह-रूपी) ठग ने सारे जगत को भ्रम में डाल दिया है, सारे जगत को अपने वश में कर लिया है, उस (मोह-) ठग को काबू करने पर मेरा मन एक ठिकाने पर आ गया है।

❋ ड ❋

डडा डर उपजे डरु जाई।
ता डर महि डरु रहिआ समाई।
जउ डर डरै त फिरि डरु लागै।
निडरु हूआ डरु उर होइ भागै॥ १९॥

यदि परमात्मा का भय मनुष्य के हृदय में पैदा हो जाए तो (दुनिया वाला) भय दूर हो जाता है और उसका लौकिक डर समाप्त हो जाता है; लेकिन यदि मनुष्य, परमात्मा का भय मन में न बसाए, तो (दुनिया वाला) भय दोबारा आ दबाता है। (और प्रभु का भय मन में बसाकर जो मनुष्य) निर्भय हो गया तो उसके मन का जो भी भय है वह सब नष्ट हो जाता है।

❋ ढ ❋

ढढा ढिग ढूढहि कत आना।
ढूढत ही ढहि गए पराना।
चढ़ि सुमेरि ढूढि जब आवा।
जिह गड़ु गड़िओ सु गड़ महि पावा॥ २०॥

(परमात्मा तो तेरे) निकट ही है, तू उसे कहाँ खोजता है? (बाहर) खोजते-खोजते तेरे प्राण भी थक गए हैं। सुमेरु पर्वत पर (भी) चढ़कर और (परमात्मा को वहाँ) खोज-खोजकर जब मनुष्य (अपने शरीर में) आता है, (अर्थात् अपने भीतर देखता है), तो वह प्रभु इस (शरीर-रूपी) किले में ही मिल जाता है जिसने यह शरीर-रूपी किला बनाया है।

❊ ण ❊

णाणा रणि रूतउ नर नेही करै।
ना निवै ना फुनि संचरै।
धंनि जनमु ताही को गणै।
मारै एकहि तजि जाइ घणै॥ २१॥

(जगत-रूपी इस) रणभूमि में जूझता हुआ जो मनुष्य विकारों को वश में करने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है, जो (विकारों के समक्ष) न झुकता है, न ही (उनसे) मेल करता है, जगत उसी आदमी के जीवन को भाग्यशाली मानता है, क्योंकि वह मनुष्य (अपने) एक मन को मारता है और इन बहुत से (विकारों) को छोड़ देता है।

❊ त ❊

तता अतर तरिओ नह जाई।
तन त्रिभवण महि रहिओ समाई।
जउ त्रिभवण तन माहि समावा।
तउ ततहि तत मिलिआ सचु पावा॥ २२॥

यह जगत एक ऐसा समुद्र है जिसे पार करना कठिन है, जिसमें से पार हुआ नहीं जा सकता (क्योंकि) आँख, कान, नाक आदि ज्ञानेन्द्रियाँ दुनिया (के रसों) में डूबे रहते हैं; पर जब संसार (के रस) शरीर के भीतर ही मिट जाते हैं, तब (जीव की) आत्मा (प्रभु की) ज्योति में मिल जाती है, तब सत्यस्वरूप परमात्मा मिल जाता है।

✻ थ ✻

थथा अथाह थाह नही पावा।
ओहु अथाह इहु थिरु न रहावा।
थोड़ै थलि थानक आरंभै।
बिनु ही थाभह मंदिरु थंभै॥ २३॥

(मनुष्य का मन) अथाह परमात्मा की थाह नहीं ले सकता; (क्योंकि एक ओर तो) वह प्रभु अनन्त गहरा है, (और, दूसरी ओर, मनुष्य का) यह मन कभी टिककर नहीं रहता। यह मन थोड़ी जितनी (मिली) भूमि में (कई नगर बनाने) शुरू कर देता है (अर्थात्, थोड़ी सी उम्र में कई प्रसार कर बैठता है) और यह सब पसारे पसारना व्यर्थ काम है, यह (मानो) थमलों (दीवारों) के बिना ही घर बना रहा है।

✻ द ✻

ददा देखि जु बिनसनहारा।
जस अदेखि तस राखि बिचारा।
दसवै दुआरि कुंची जब दीजै।
तउ दइआल को दरसनु कीजै॥ २४॥

जो यह संसार (इन आँखों से) दिख रहा है, यह सारा नाशमान है, (हे भाई!) तू सदा प्रभु में सुरति जोड़, जो (इन आँखों से) दिखाई नहीं देता है। लेकिन उस दयालु प्रभु का दर्शन तब ही किया जा सकता है, जब (गुरु-वाणी-रूपी) कुंजी दसवें द्वार में लगाएँ।

❊ ध ❊

धधा अरधहि उरध निबेरा।
अरधहि उरधह मंझि बसेरा।
अरधह छाडि उरध जउ आवा।
तउ अरधहि उरध मिलिआ सुख पावा॥२५॥

जब जीवात्मा का निवास परमात्मा में होता है, (अर्थात्, जब जीव प्रभु-चरणों में जुड़ता है), तो प्रभु के साथ (एक होने पर ही) जीव के जन्म-मरण का विनाश होता है। जब जीव निम्न अवस्था को छोड़कर उच्चावस्था को प्राप्त होता है, तब जीव को परमात्मा मिल जाता है, और इसे (वास्तविक) सुख प्राप्त हो जाता है।

❊ ञ ❊

नंना निसि दिनु निरखत जाई।
निरखत नैन रहे रतवाई।
निरखत निरखत जब जाइ पावा।
तब ले निरखहि निरख मिलावा॥ २६ ॥

(जिस जीव का) दिन-रात्रि (अर्थात् प्रत्येक पल) प्रतीक्षा में गुजरता है, देखते-देखते उसके नेत्र (प्रभु-दर्शनों के लिए) मतवाले हो जाते हैं। दर्शन की इच्छा करते-करते जब आखिर दर्शन होता है तो वह इष्ट प्रभु दर्शन की इच्छा रखनेवाले (अपने प्रेमी) को अपने साथ मिला लेता है।

❊ प ❊

पपा अपर पारु नही पावा।
परम जोति सिउ परचउ लावा।
पांचउ इंद्री निग्रह करई।
पापु पुंनु दोऊ निरवरई॥ २७॥

परमात्मा सबसे बड़ा है, उसका किसी ने अन्त नहीं पाया। जिस ज़ीव ने प्रकाश के स्रोत प्रभु के साथ प्रेम जोड़ा है, वह अपनी पाँचों-ज्ञानेन्द्रियों को (इस तरह) वश में कर लेता है कि वह जीव पाप और पुण्य दोनों को दूर कर देता है।

❊ फ ❊

फफा बिनु फूलह फलु होई।
ता फल फंक लखै जउ कोई।
दूणि न परई फंक बिचारै।
ता फल फंक सभै तन फारै॥ २८॥

यदि जीव अपने आप पर अभिमान करना छोड़ दे, तो इसे (नाम-पदार्थ-रूपी) वह फल मिल जाता है, (जिसकी खातिर मनुष्य-जन्म मिला है)। और, यदि कोई उस ईश्वरीय सूझ का तनिकमात्र भी रहस्य समझ ले, यदि उस रहस्य को सोचे तो वह मनुष्य-जन्म के गड्ढे में नहीं पड़ता, (क्योंकि) ईश्वरीय सूझ का यह थोड़ा सा ही संकेत उसके देह-अभ्यास (अभिमान) को पूर्णतः समाप्त कर देता है।

❊ ब ❊

बबा बिंदहि बिंद मिलावा।
बिंदहि बिंदि न बिछुरन पावा।
बंदउ होइ बंदगी गहै।
बंदक होइ बंध सुधि लहै॥ २९॥

(जैसे पानी की) बूँद में (पानी की) बूँद मिल जाती है, (और, फिर अलग नहीं हो सकती,) वैसे प्रभु के साथ निमिषमात्र भी मेल करके (जीव प्रभु से) बिछुड़ नहीं सकता, (क्योंकि जो मनुष्य प्रभु का)

सेवक बनकर प्रेमपूर्वक (प्रभु की) भक्ति करता है, वह (प्रभु के द्वार का) स्तुति करनेवाला (माया-मोह की) जंजीरों का भेद पा लेता है (और इनके धोखे में नहीं आता)।

❋ भ ❋

भभा भेदहि भेद मिलावा।
अब भउ भानि भरोसउ आवा।
जो बाहरि सो भीतरि जानिआ।
भइआ भेदु भूपति पहिचानिआ॥ ३०॥

जो मनुष्य (प्रभु से हुई) दूरी को समाप्त करके (अपने मन को प्रभु की याद में) जोड़ता है, उस याद के प्रभाव से (सांसारिक) भय दूर करने पर उसे प्रभु के प्रति श्रद्धा बन जाती है। जो परमात्मा सारे जगत में व्यापक है, उसे वह अपने भीतर बसता जान लेता है, (और जैसे-जैसे) यह रहस्य उसे पता चलता है (कि सर्वत्र बाहर-भीतर प्रभु बस रहा है) वह सृष्टि के मालिक-प्रभु के साथ (याद का) सम्बन्ध बना लेता है।

❋ म ❋

ममा मूल गहिआ मनु मानै।
मरमी होइ सु मन कउ जानै।
मत कोई मन मिलता बिलमावै।
मगन भइआ ते सो सचु पावै॥ ३१॥

यदि जगत के मूल प्रभु को अपने मन में बसा लिया जाए तो मन भटकाव से बच जाता है। जो जीव यह भेद पा लेता है, वह जीव मन (की भाग-दौड़ को) समझ लेता है। (सो) यदि (मन प्रभु-चरणों में) जुड़ने लगे तो कोई इस काम में ढील न करे; (क्योंकि प्रभु-चरणों में

अनुरक्ति से) मन (प्रभु में) लीन हो जाता है और उस सत्यस्वरूप रहनेवाले प्रभु को प्राप्त कर लेता है।

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ।
मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥ ३२॥

(जीव का वास्तविक) काम मन के साथ है, (यह काम मानसिक संयम है)। मन को वश में करने से ही (जीव को वास्तविक मनोरथ की) कामयाबी होती है। कबीर कहता है (कि जीव का असली काम) केवलमात्र मन के साथ ही है, मन जैसा (जीव को) दूसरा कोई नहीं मिला (जिसके साथ इसका असली सम्पर्क होवे)।

इहु मनु सकती इहु मनु सीउ।
इहु मनु पंच तत को जीउ।
इहु मनु ले जउ उनमनि रहै।
तउ तीनि लोक की बातै कहै॥ ३३॥

(माया के साथ मिलकर) यह मन माया (का रूप) हो जाता है। (आनन्द-स्वरूप हरि के साथ मिलकर) यह मन शरीर-रूप ही हो जाता है। लेकिन जब मनुष्य इस मन को वश में करके उन्मनावस्था में टिकता है, तब वह सारे जगत में व्यापक प्रभु की बातें करता है।

❊ य ❊

यया जउ जानहि तउ दुरमति हनि करि बसि काइआ गाउ।
रणि रूतउ भाजै नही सूरउ थारउ नाउ॥ ३४॥

(हे भाई!) यदि तू (जीवन का सही रास्ता) जानना चाहता है तो (अपनी) दुर्बुद्धि को समाप्त कर दे, इस शरीर (-रूपी) गाँव को (अपने) वश में कर। (इस शरीर को वश में लाना, एक युद्ध है) यदि तू इस युद्ध में लगकर पराजय न पाए तो ही तेरा नाम शूरवीर (हो सकता) है।

❋ र ❋

रारा रसु निरस करि जानिआ।
होइ निरस सु रसु पहिचानिआ।
इह रस छाडे उह रसु आवा।
उह रसु पीआ इह रसु नही भावा ॥ ३५ ॥

जिस मनुष्य ने माया के स्वाद को फीका सा समझ लिया है, उसने भौतिक आस्वादनों से बचे रहकर वह आत्मिक आनन्द प्राप्त कर लिया है। जिसने यह (लौकिक) आस्वादन छोड़ दिए हैं, उसे वह (प्रभु के नाम का आनन्द) प्राप्त हो गया है; (क्योंकि) जिसने वह (नाम-) रस पान किया है, उसे (यह मायावाला) आस्वादन अच्छा नहीं लगता।

❋ ल ❋

लला ऐसे लिव मनु लावै।
अनत न जाइ परम सचु पावै।
अरु जउ तहा प्रेम लिव लावै।
तउ अलह लहै लहि चरन समावै ॥ ३६ ॥

यदि (किसी मनुष्य का) मन ऐसी एकाग्रता से (प्रभु की याद में) वृत्ति जोड़ ले कि किसी दूसरी ओर न भटके तो उसे सर्वोच्च तथा सत्यस्वरूप प्रभु मिल पड़ता है; इसलिए यदि उस लो की दशा में प्रेम का तार जोड़ दे तो उस अप्राप्य प्रभु को वह प्राप्त हो जाता है और प्राप्त करके सदा के लिए उसके चरणों में टिका रहता है।

❋ व ❋

ववा बारबार बिसन सम्हारि।
बिसन संम्हारि न आवै हारि।
बलि बलि जे बिसन तना जसु गावै।
विसन मिले सभ ही सचु पावै॥ ३७॥

(हे भाई!) सदा प्रभु को (अपने हृदय में) याद रखकर (जीव मनुष्य-जन्म की बाजी) हारकर नहीं आता, मैं उस भक्तजन पर न्यौछावर हूँ, जो प्रभु के गुण गाता है। प्रभु को मिलकर वह सर्वत्र सत्यस्वरूप प्रभु को ही देखता है।

वावा वाही जानीऐ वा जाने इहु होइ।
इहु अरु ओहु जब मिलै तब मिलत न जानै कोइ॥ ३८॥

(हे भाई!) उस प्रभु के साथ जान-पहचान करनी चाहिए। उस प्रभु के साथ मेल करने पर यह जीव (उस प्रभु का रूप ही) हो जाता है। जब वह जीव और वह प्रभु एकरूप हो जाते हैं तो इन मिले हुए को कोई नहीं समझ सकता।

❋ स ❋

ससा सो नीका करि सोधहु।
घट परचा की बात निरोधहु।
घट परचै जउ उपजै भाउ।
पूरि रहिआ तह त्रिभवण राउ॥ ३९॥

भली प्रकार उस परमात्मा की रक्षा करो। अपने मन को उन शब्दों में लाकर जोड़ो, जिससे यह मन परमात्मा में मिल जाए। प्रभु में मन रम जाने पर जब (भीतर) प्रेम पैदा होता है तो उस अवस्था में तीनों भवनों का मालिक परमात्मा ही (सर्वत्र) व्यापक दिखता है।

❋ ਖ ❋

खखा खोजि परै जउ कोई।

जो खोजै सो बहुरि न होई।

खोज बूझि जउ करै बीचारा।

तउ भवजल तरत न लावै बारा॥ ४० ॥

यदि कोई मनुष्य परमात्मा की खोज में लग जाए, (तो इस प्रकार) जो भी पुरुष प्रभु को प्राप्त कर लेता है, वह दोबारा जन्मता-मरता नहीं। जो पुरुष प्रभु के गुणों को समझ लेता है और उन्हें बार-बार स्मरण करता है, उसको संसार-सागर को पार करने में देर नहीं लगती।

❋ ਸ ❋

ससा सो सह सेज सवारै।

सोई सही संदेह निवारै।

अलप सुख छाडि परम सुख पावा।

तब इह त्रीअ ओहु कंतु कहावा॥ ४१ ॥

जो (जीव-स्त्री, दुनियावाले) ओछे सुख छोड़कर (प्रभु के प्रेम का) सर्वोच्च सुख प्राप्त करती है, वह (अपनी हृदय-रूपी) पति-प्रभु की सेज सँवारती है। वही (जीव-) सखी (अपनी मन की) शंकाएँ दूर करती है। (इस अवस्था में ही) तब यह (जीव, प्रभु की) स्त्री, और वह (प्रभु, जीव-स्त्री का) पति कहलाता है।

*** ह ***

हाहा होत होइ नही जाना।
जब ही होइ तबहि मनु माना।
है तउ सही लखै जउ कोई।
तब ओही उहु एहु न होई॥ ४२॥

जीव ने मनुष्य-जन्म पाकर उस प्रभु को नहीं पहचाना जो सचमुच अस्तित्व वाला है। जब जीव को प्रभु की हस्ती का निश्चय हो जाता है, तब ही इसका मन (प्रभु में) विश्वस्त हो जाता है। (परमात्मा है तो जरूर) (लेकिन इस विश्वास का लाभ तब ही होता है) जब कोई जीव (इस बात को) समझ ले। तब यह जीव उस प्रभु का रूप हो जाता है, यह (अलग अस्तित्ववाला) नहीं रह जाता।

लिंउ लिंउ करत फिरै सभु लोगु।
ता कारणि बिआपै बहु सोगु।
लखिमीबर सिउ जउ लिउ लावै।
सोगु मिटै सभ ही सुख पावै॥ ४३॥

सारा जगत यही कहता फिरता है कि मैं (माया) सँभाल लूँ, मैं (माया) एकत्रित कर लूँ। इस माया की खातिर ही (फिर जीव को) बड़ी फिक्र घटित हो जाती है। पर जब जीव माया के पति परमात्मा के साथ प्रीति जोड़ता है, तब (इसकी) फिक्र समाप्त हो जाती है और यह सारे सुख प्राप्त कर लेता है।

खखा खिरत खपत गए केते।
खिरत खपत अजहूं नह चेते।
अब जगु जानि जउ मना रहै।
जह का बिछुरा तह थिरु लहै॥ ४४॥

मरते-खपते जीव के कई जन्म बीत गए हैं; लेकिन आवागमन में पड़ा हुआ अभी तक यह (प्रभु को) याद नहीं करता। अब यदि जगत की असलियत को समझकर (इसका) मन (प्रभु में) टिक जाए तो जिस प्रभु से यह बिछुड़ा हुआ है, उसमें इसे ठिकाना मिल सकता है।

बावन अखर जोरे आनि।
सकिआ न अखरु एकु पछानि।
सत का सबदु कबीरा कहै।
पंडित होइ सु अनभै रहै।
पंडित लोगह कउ बिउहार।
गिआनवंत कउ ततु बीचार।
जा कै जीअ जैसी बुधि होई।
कहि कबीर जानैगा सोई॥ ४५॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ३४०-३४३)

(जगत ने) बावन अक्षर प्रयोग करके पुस्तकें तो लिख दी हैं, परन्तु (पुस्तकों के द्वारा) यह जगत उस एक प्रभु को नहीं पहचान सका, जो नाशरहित है। हे कबीर! जो मनुष्य (इन अक्षरों के द्वारा) प्रभु की गुणस्तुति करता है, वही पण्डित है, और, वह ज्ञानावस्था में टिका रहता है। लेकिन पण्डित लोगों को तो यह विचार प्राप्त हो चुका है (कि अक्षर जोड़कर दूसरों को बुलावा देते हैं), ज्ञानी लोगों के लिए (यह अक्षर) तत्व के चिन्तन का सहारा है। कबीर कहता है—जिस जीव के भीतर ऐसी अक्ल होती है, वह (इन अक्षरों के द्वारा भी) वही कुछ समझेगा (अर्थात् पुस्तकें पढ़कर आत्मिक जीवन के जाननेवाला होना जरूरी नहीं है)।

੧ੳ

दुख भंजनी साहिब

दुःख निवारक ३४ शबदों का संग्रह

इसके नियमित पाठ करने से सभी दुखों, रोगों और क्लेशों का नाश होता है।

दुख भंजनी साहिब

दुख भंजनु तेरा नाम जी

❋ १ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

दुख भंजनु तेरा नामु जी दुख भंजनु तेरा नामु।
आठ पहर आराधीऐ पूरन सतिगुर गिआनु॥ १ ॥ रहाउ ॥
जितु घटि वसै पारब्रहमु सोई सुहावा थाउ।
जम कंकरु नेड़ि न आवई रसना हरिगुण गाउ॥ १ ॥
सेवा सुरति न जाणीआ ना जापै आराधि।
ओटि तेरी जगजीवना मेरे ठाकुर अगम अगाधि॥ २ ॥
भए क्रिपाल गुसाईआ नठे सोग संताप।
तती वाउ न लगई सतिगुरि रखे आपि॥ ३ ॥
गुरु नाराइणु दयु गुरु गुरु सचा सिरजणहारु।
गुरि तुठै सभ किछु पाइआ जन नानक सद बलिहार॥
४ ॥ २ ॥ १७० ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २१८)

हे प्रभु! तेरा नाम दुखों का नाशक है। यह आठों प्रहर स्मरण, करना चाहिए—पूर्ण सतिगुरु का यही उपदेश है जो परमात्मा से ऐक्य करा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस हृदय में परमात्मा आ बसता है, वही हृदय-स्थान सुन्दर बन जाता है। जो मनुष्य अपनी जीभ से परमात्मा के गुण गाता है, यमदूत उसके निकट नहीं जाता॥ १ ॥ हे जगत् की जिन्दगी के आसरे पालनहार, अगम्य, अथाह प्रभु! मैंने तेरी सेवा-भक्ति की सूझ का मूल्य न जाना, मुझे तेरे नाम की आराधना करना न

आया, (लेकिन अब) मैंने तेरा आसरा लिया है ॥ २ ॥ सृष्टि के मालिक-प्रभु जिस मनुष्य पर दयालु होते हैं, उसकी सारी चिन्ताएँ और क्लेश मिट जाते हैं। जिस मनुष्य की गुरु ने आप रक्षा की, उसे दुःख का स्पर्श नहीं होता॥ ३ ॥ (हे भाई!) गुरु नारायण का रूप है, गुरु सब पर दया करनेवाले प्रभु का रूप है, गुरु उस कर्त्तार का रूप है जो सदा स्थिर रहने वाला है। यदि गुरु प्रसन्न हो जाए तो सब कुछ प्राप्त हो जाता है। हे दास नानक! (कह—) मैं गुरु पर बलिहारी जाता हूँ॥ ४ ॥

❋ २ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

सूके हरे कीए खिन माहे॥
अंमृत द्रसटि संचि जीवाए॥ १ ॥
काटे कसट पूरे गुरदेव॥
सेवक कउ दीनी अपुनी सेव॥ १ ॥ रहाउ॥
मिटि गई चिंत पुनी मन आसा॥
करी दइआ सतिगुरि गुणतासा॥ २ ॥
दुख नाठे सुख आइ समाए॥
ढील न परी जा गुरि फुरमाए॥ ३ ॥
इछ पुनी पूरे गुर मिले॥
नानक ते जन सुफल फले॥ ४ ॥ ५८ ॥ १२७ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १९१)

आत्मिक जीवन देनेवाली दृष्टि से गुरु नाम-धन सींच कर जिन्हें आत्मिक जीवन देता है, उस आत्मिक जीवन के रस से शून्य हो चुके मनुष्यों को गुरु क्षण भर में हरे (अर्थात् आत्मिक जीवन वाले) बना देता है॥ १ ॥ जिस सेवक को (परमात्मा ने) अपनी सेवा-भक्ति

की देन दी, पूर्णगुरु ने उसके सारे कष्ट काट दिए॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुणों के भण्डार सतिगुरु ने जिस मनुष्य पर कृपा की, उसकी (हरेक किस्म की) चिन्ता मिट गई, उसके मन की (हरेक) आशा पूर्ण हो गई॥ २ ॥ जब गुरु ने जिस मनुष्य पर कृपालु होने का हुक्म दिया, तनिक भी ढील न हुई, उसके सारे दुःख दूर हो गए, उसके भीतर सुख आकर टिक गए॥ ३ ॥ हे नानक! जो मनुष्य पूर्णगुरु को मिले, उनकी (हरेक किस्म की) इच्छा पूर्ण हो गई, उन्हें उच्च आत्मिक गुणों के सुन्दर फल मिल गए॥ ४ ॥

❋ ३ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

ताप गए पाई प्रभि सांति॥
सीतल भए कीनी प्रभ दाति॥ १ ॥
प्रभ किरपा ते भए सुहेले॥
जनम जनम के बिछुरे मेले॥ १ ॥ रहाउ॥
सिमरत सिमरत प्रभ का नाउ॥
सगल रोग का बिनसिआ थाउ॥ २ ॥
सहजि सुभाइ बोलै हरि बाणी॥
आठ पहर प्रभ सिमरहु प्राणी॥ ३ ॥
दूखु दरदु जमु नेड़ि न आवै॥
कहु नानक जो हरि गुन गावै॥ ४॥ ५९॥ १२८॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १९१)

जिन्हें परमात्मा अपने नाम की देन देता है, वह शान्त मन वाले बन जाते हैं। परमात्मा ने उनके भीतर ऐसी आत्मिक शान्ति दी है कि उनके सारे ताप-क्लेश दूर हो जाते हैं॥ १ ॥ (जिन मनुष्यों को परमात्मा

अपने नाम की देन देता है, वे मनुष्य) परमात्मा की कृपा से सुखी हो जाते हैं, उन अनेक जन्मों के बिछुड़े हुए मनुष्यों को परमात्मा (अपने साथ) मिला लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (जिन्हें परमात्मा नाम की देन देता है) परमात्मा का नाम-स्मरण कर (उनके भीतर से) सारे रोगों का निशान ही मिट जाता है ॥ २ ॥ वह आत्मिक स्थिरता में टिककर प्रेम में लीन होकर परमात्मा की गुणस्तुति की वाणी उच्चरित करता है। हे प्राणी! आठों प्रहर प्रभु का नाम-स्मरण करता रह ॥ ३ ॥ हे नानक! कह—(परमात्मा की कृपा से) जो मनुष्य परमात्मा के गुण गाता है, कोई दुख-दर्द उसके निकट नहीं आता, उसे मौत का भय नहीं छूता ॥ ४ ॥

❋ ४ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

जिसु सिमरत दूखु सभु जाइ ॥
नामु रतनु वसै मनि आइ ॥ १ ॥
जपि मन मेरे गोविंद की बाणी ॥
साधू जन रामु रसन वखाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥
इकसु बिनु नाही दूजा कोइ ॥
जा की द्रसटि सदा सुखु होइ ॥
साजनु मीतु सखा करि एकु ॥
हरि हरि अखर मन महि लेखु ॥ ३ ॥
रवि रहिआ सरबत सुआमी ॥
गुण गावै नानकु अंतरजामी ॥ ४ ॥ ६२ ॥१३१ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १९२)

(हे भाई! उस गोविंद की वाणी जप) जिसका स्मरण करने से हरेक किस्म का दुख दूर हो जाता है (और, वाणी के प्रभाव से)

परमात्मा का अमूल्य नाम मन में आ बसता है॥ १॥ हे मेरे मन! परमात्मा की गुणस्तुति की वाणी का उच्चारण कर। (जिसके द्वारा) संतजन अपनी जीभ से परमात्मा के गुण गाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ (हे भाई! उस गोविंद की गुणस्तुति करता रह) जिसकी कृपादृष्टि से आत्मिक आनन्द मिलता है, और जिसके बराबर का कोई नहीं है॥ २॥ एक गोविंद को अपना साथी बना और उस हरि की गुणस्तुति के अक्षर अपने मन में लिख ले॥ ३॥ (सारे जगत् का वह) स्वामी हर स्थान पर व्यापक है और हरेक के दिल की जानता है, नानक (भी) उस अन्तर्यामी स्वामी के गुण गाता है॥ ४॥

❋ ५ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

कोटि बिघन हिरे खिन माहि॥
हरि हरि कथा साध संगि सुनाहि॥ १॥
पीवत राम रसु अंमृत गुण जासु॥
जपि हरि चरण मिटी खुधितासु॥ १॥ रहाउ॥
सरब कलिआण सुख सहज निधान॥
जा कै रिदै वसहि भगवान॥ २॥
अउखध मंत्र तंत्र सभि छारु॥
करणैहारु रिदे महि धारु॥ ३॥
तजि सभि भरम भजिओ पारब्रहमु॥
कहु नानक अटल इहु धरमु॥ ४॥ ८०॥ १४९॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १९५)

(हे भाई!) जो मनुष्य सत्संगति में परमात्मा की गुणस्तुति सुनते हैं, उनकी जिन्दगी के मार्ग में आनेवाली करोड़ों रुकावटें एक क्षण में

नष्ट हो जाती हैं॥ १॥ (हे भाई!) परमात्मा का नाम-रस पीते हुए, परमात्मा के आत्मिक जीवन देनेवाले गुणों का यश गाते हुए, परमात्मा के चरण जपकर (माया की) भूख मिट जाती है॥ १॥ रहाउ॥ (हे भगवान!) जिस मनुष्य के हृदय में तू बस जाता है, उसे सारे सुखों के खजाने और आत्मिक स्थिरता के आनन्द मिल जाते हैं॥ २॥ (हे भाई!) सृजनहार प्रभु को अपने हृदय में टिकाए रख, सारे टोने-टोटके और मन्त्र बेकार हैं॥ ३॥ हे नानक! कह—जिस मनुष्य ने सारे भ्रम त्याग कर पारब्रह्म प्रभु का भजन किया है, (उसने देख लिया है कि भजन, स्मरण आदि) धर्म ऐसा है जो कभी भी फल देने में आनाकानी नहीं करता॥ ४॥

❋ ६ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

सांति भई गुर गोबिदि पाई॥
ताप पाप बिनसे मेरे भाई॥ १॥ रहाउ॥
राम नामु नित रसन बखान॥
बिनसे रोग भए कलिआन॥ १॥
पारब्रहम गुण अगम बीचार॥
साधू संगमि है निसतार॥ २॥
निरमल गुण गावहु नित नीत॥
गई बिआधि उबरे जन मीत॥ ३॥
मन बच क्रम प्रभु अपना धिआई॥
नानक दास तेरी सरणाई॥ ४॥ १०२॥ १७१॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २००)

हे भाई! गोबिन्द-रूपी गुरु ने (जिस मनुष्य को नाम की देन)

प्रदान कर दी, उसके भीतर शान्ति हो गई, उसके सारे दुख-क्लेश और पाप नष्ट हो गए॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! जो मनुष्य अपनी जिह्वा से सदैव परमात्मा का नाम उच्चरित करता है, उसके सारे रोग दूर हो जाते हैं, उसके भीतर आनन्द ही आनन्द बना रहता है ॥ १ ॥ हे भाई! जो मनुष्य अगम्य पारब्रह्म प्रभु के गुणों का विचार करता रहता है, गुरु की संगति में रहकर उसका (संसार-समुद्र से) उद्धार हो जाता है ॥ २ ॥ हे मित्र! सदा परमात्मा के गुण गाते रहो। (जो परमात्मा के गुण गाते हैं उनका प्रत्येक) दुःख दूर हो जाता है, वे मनुष्य रोगों, विकारों से बचे रहते हैं ॥ ३ ॥ हे नानक! (प्रभु-चरणों में प्रार्थना कर और कह—हे प्रभु!) मैं तेरा दास तेरी शरण आया हूँ (कृपा कर कि) मैं अपने मन, वचन, कर्म के द्वारा सदा अपने मालिक प्रभु को स्मरण करता रहूँ॥ ४ ॥

❋ ७ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

नेत्र प्रगासु कीआ गुरदेव॥
भरम गए पूरन भई सेव॥ १ ॥ रहाउ ॥
सीतला ते रखिआ बिहारी॥
पारब्रहम प्रभ किरपा धारी॥ १ ॥
नानक नामु जपै सो जीवै॥
साध संगि हरि अंमृत पीवै॥ २ ॥ १०३ ॥ १७२ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २००)

गुरुदेव ने ज्ञानचक्षु दिये। भ्रम का निवारण हुआ; (अन्धविश्वास से दूर रहकर) गुरु-सेवा सफल रही॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे पारब्रह्म, कृपालु प्रभु! तूने ही कृपा करके सीतला से बचाया है। (लोक-धारणा है कि एक बार चेचक का भयंकर प्रकोप हुआ जिसकी लपेट में श्रीगुरु हरि

गोविन्द जी बचपन में आ गए थे। बड़ी भयंकर स्थिति में भी गुरु अर्जुनदेवजी ने परमात्मा पर ही विश्वास रखा और किसी धार्मिक कर्मकाण्ड के पचड़े में नहीं पड़े) ॥ १ ॥ हे नानक! (कह—हे भाई!) जो मनुष्य (दूसरे तमाम आसरे छोड़कर) परमात्मा का नाम जपता है, वह आत्मिक जीवन प्राप्त कर लेता है (क्योंकि) वह सत्संगति में रहकर आत्मिक जीवन देनेवाला हरि-नाम का रस पीता रहता है ॥ २ ॥

❋ ८ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

थिरु घरि बैसहु हरि जन पिआरे ॥
सतिगुरि तुमरे काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥
दुसट दूत परमेसरि मारे ॥
जन की पैज रखी करतारे ॥
बादिसाह साह सब वसि करि दीने ॥
अंमृत नाम महा रसि पीने ॥ १ ॥
निरभउ होइ भजहु भगवान ॥
साध संगति मिलि कीनो दानु ॥ ३ ॥
सरणि परे प्रभ अंतरजामी ॥
नानक ओट पकरी प्रभ सुआमी ॥ ४ ॥ १०८ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २०१)

हे प्रिय भक्तजनो! अपनी आत्मा में स्थिर होकर बैठो और यह पूर्ण विश्वास बनाओ कि सतिगुरु हमारे सब काम सँवारता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (जो ईश्वर पर आस्था रखता है) परमेश्वर ने उसके सब दुश्मन समाप्त कर दिए हैं, कर्तार ने अपने सेवक की प्रतिष्ठा अवश्य रखी है ॥ १ ॥ (परमात्मा ने अपने सेवकों को) दुनिया के शाहों-बादशाहों की ओर से

निश्चिन्त कर दिया है, परमेश्वर के सेवक आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-रस (सर्वश्रेष्ठ रस) पीते रहते हैं ॥ २ ॥ (हे भक्तजनो! परमात्मा ने तुम पर) नाम की कृपा की है, तुम सत्संगति में मिलकर, निर्भय होकर भगवान का नाम-स्मरण करते रहो ॥ ३ ॥ हे नानक! (प्रभु-द्वार पर प्रार्थना कर और कह—) हे अन्तर्यामी प्रभु! मैं तेरी शरणागत हूँ, मैंने तेरा आसरा लिया है, (मुझे अपने नाम की देन दे) ॥ ४ ॥

❋ ९ ❋

॥ गउड़ी महला ५ ॥

राखु पिता प्रभ मेरे ॥
मोहि निरगुनु सभ गुन तेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥
पंच बिखादी एकु गरीबा राखहु राखनहारे ॥
खेदु करहि अरु बहुतु संतावहि
आइओ सरनि तुहारे ॥ १ ॥
करि करि हारिओ अनिक बहु भाती छोडहि कतहूं नाही ॥
एक बात सुनि ताकी ओटा
साध संगि मिटि जाही ॥ २ ॥
करि किरपा संत मिले मोहि तिन ते धीरजु पाइआ ॥
संती मंतु दीओ मोहि निरभउ ॥
गुर का सबदु कमाइआ ॥ ३ ॥
जीति लए ओइ महा बिखादी सहज सुहेली बाणी ॥
कहु नानक मनि भइआ परगासा
पाइआ पदु निरबाणी ॥ ४ ॥ ४ ॥ १२५ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २०५)

हे मेरे मित्र-प्रभु! मुझ गुणहीन को बचा लो। समस्त गुण तेरे (वश में हैं, जिसे प्रभु देना चाहता है उसे ही वे मिलते हैं) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सहायता करने में समर्थ प्रभु! मैं गरीब अकेला हूँ तथा मेरे कामादिक पाँच शत्रु हैं, मेरी सहायता कर, मैं तेरी शरणागत हूँ। ये पाँचों मुझे दुःख देते हैं और बहुत सताते हैं ॥ १ ॥ मैं अनेकों प्रकार के यत्न करके हार गया हूँ, ये किसी प्रकार भी मुझे मुक्त नहीं करते। यह सुनकर कि ये सत्संगति में रहकर समाप्त हो जाते हैं, मैंने तेरी सत्संगति का आसरा लिया है ॥ २ ॥ (सत्संगति में) कृपा करके मुझे तेरे संतजन मिल गए, उनसे मुझे ढाढस मिला है। संतों ने मुझे निर्भय कर देनेवाला उपदेश दिया है और मैंने गुरु का शब्द अपने मन में ग्रहण किया है ॥ ३ ॥ गुरु की आत्मिक स्थिरता तथा सुखदात्री बाणी के प्रभाव से मैंने वे पाँचों झगड़ालू जीत लिए। हे नानक! कह—मेरे मन में आत्मिक प्रकाश हो गया है, मैंने वह आत्मिक स्थान प्राप्त कर लिया है, जहाँ कोई वासना स्पर्श नहीं कर सकती ॥ ४ ॥

❋ १० ❋

॥ बिलावलु महला ५ ॥

सरब कलिआण कीए गुरदेव ॥
सेवकु अपनी लाइओ सेव ॥
बिघनु न लागै जपि अलख अभेव ॥ १ ॥
धरति पुनीत भई गुन गाए ॥
दुरतु गइआ हरि नामु धिआए ॥ १ ॥ रहाउ ॥
सभनी थांई रविआ आपि ॥
आदि जुगादि जा का वड परतापु ॥
गुर परसादि न होइ संतापु ॥ २ ॥

गुर के चरन लगे मनि मीठे॥
निरबिघन होइ सभ थांई वूठे॥
सभि सुख पाए सतिगुर तूठे॥ ३॥
पारब्रहम प्रभ भए रखवाले॥
जिथै किथै दीसहि नाले॥
नानक दास खसमि प्रतिपाले॥ ४॥ २॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८०१)

मेरे गुरुदेव ने मेरा समस्त कल्याण किया है; अपने सेवक को सेवा में लगा लिया है। उस अदृश्य और नित्य रहस्यमय प्रभु का नाम जपने से सब प्रकार के विघ्न नष्ट हो गये हैं॥ १॥ उसका गुण गाने से हृदय रूपी धरती पुण्यमयी हो गयी है; हरि-नाम का ध्यान करने से पाप दूर हो गये हैं॥ १॥ रहाउ॥ परमात्मा स्वयं सब जगह व्याप्त है; वह आदिपुरुष है और उसका महान प्रताप है। गुरु की कृपा से जीव सब सन्तापों से मुक्त रहता है॥ २॥ गुरु के चरणों में शरण लेने से मन मीठा हो जाता है। तब जीव निर्विघ्नभाव से सब जगह रह सकता है। सतिगुरु के सन्तुष्ट होने से उसे सब सुख प्राप्त हो जाते हैं॥ ३॥ परब्रह्म परमात्मा स्वयं जीव का रक्षक होता है, जहाँ कहीं भी उसका साथ देता है। गुरु नानक कहते हैं कि स्वामी सेवक का प्रतिपालक होता है॥ ४॥

❋ ११ ❋

॥ बिलावलु महला ५॥

चरन कमल प्रभ हिरदै धिआए॥
रोग गए सगले सुख पाए॥ १॥
गुरि दुखु काटिआ दीनो दानु॥
सफल जनमु जीवन परवानु॥ १॥ रहाउ॥

अकथ कथा अंमृत प्रभ बानी ॥

कहु नानक जपि जीवे गिआनी ॥ २ ॥ २ ॥ २० ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८०६)

जो जीव परमात्मा के चरण-कमलों को हृदय में धारण करते हैं, उनके सब दुःख दूर होते और उन्हें परमसुख की प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ गुरु ने कृपा करके उसके दुःखों को दूर कर दिया है और अब उसका जीवन सफल और प्रभु के द्वारा स्वीकृत हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि विवेकशील जीव परमात्मा की अमृत-वाणी की अकथ कथा सुनकर मुक्ति को प्राप्ति करते हैं ॥ २ ॥

❋ १२ ❋

॥ बिलावलु महला ५ ॥

सांति पाई गुरि सतिगुरि पूरे ॥

सुख उपजे बाजे अनहद तूरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥

ताप पाप संताप बिनासे ॥

हरि सिमरत किलविख सभि नासे ॥ १ ॥

अनदु करहु मिलि सुंदर नारी ॥

गुरि नानकि मेरी पैज सवारी ॥ २ ॥ ३ ॥ २१ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८०६)

सच्चे गुरु का प्रश्रय पाकर जीव को शान्ति मिलती है, सुख उपजता है और अनाहत ध्वनि होने लगती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब प्रकार के कष्ट, पाप और व्यग्रता नष्ट होती है। हरि का स्मरण करने से सब मलिनताएँ दूर हो जाती हैं ॥ १ ॥ हे सुन्दर जीवात्मा रूपी नारी! गुरु नानक कहते हैं, सतिगुरु ने तुझे शरण दी है, अब उससे मिलकर परम आनन्द को प्राप्त करो ॥ २ ॥

❋ १३ ❋

॥ बिलावलु महला ५ ॥

सगल अनंदु कीआ परमेसरि
अपणा बिरदु सम्हारिआ॥
साध जना होए किरपाला
बिगसे सभि परवारिआ॥ १॥
कारजु सतिगुरि आपि सवारिआ॥
वडी आरजा हरि गोबिंद की
सूख मंगल कलिआण बीचारिआ॥ १॥ रहाउ॥
वणतृण त्रिभवण हरिआ होए
सगले जीअ साधारिआ॥
मन इछे नानक फल पाए
पूरन इछ पुजारिआ॥ २॥ ५॥ २३॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८०६)

हे परमेश्वर! तुमने अपने स्वभावानुसार परमसुख की सृष्टि की। सन्तों की कृपा से तुम्हारा सारा परिवार प्रसन्न हुआ॥ १॥ हमारे सब कार्य स्वयं सतिगुरु ने पूरे कर दिये और हरगोबिन्दजी की आयु बड़ी करके हमारे सुख-कल्याण का ध्यान रखा॥ १॥ रहाउ॥ (कथन है कि इस शब्द का उच्चारण गुरु अर्जुनदेवजी ने तब किया था, जब बालक हरिगोबिन्द कठिन रोग से मुक्त हुए थे।) जंगल की वनस्पति और तीनों भुवन हरे-भरे हो गये अर्थात् सब जगह आनन्द व्याप्त हुआ। सभी जीव तुम्हारी शरण पाकर प्रसन्न हो उठे। गुरु नानक कहते हैं कि हे इच्छाओं को पूर्ण करनेवाले प्रभु! तुम्हारी कृपा से हमने सब मनोरथ पूरे कर लिये हैं॥ २॥

❊ १४ ❊

॥ बिलावलु महला ५ ॥

रोगु गइआ प्रभि आपि गवाइआ ॥

नीद पई सुख सहज घरु आइआ १ ॥ रहाउ ॥

रजि रजि भोजनु खावहु मेरे भाई ॥

अंमृत नामु रिद माहि धिआई ॥ १ ॥

नानक गुर पूरे सरनाई ॥

जिनि अपने नाम की पैज रखाई ॥२ ॥ ८ ॥ २६ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८०७)

प्रभु की कृपा से अब रोग-मुक्त हो गये; मिलनोल्लास की निद्रा में जीव ने चतुर्थ पद को प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब, ऐ मेरे भाई, इस अमृत रूपी नाम को हृदय में धारण करो, पूर्णतृप्ति से इसका भोजन करो ॥ १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि पूरे गुरु की शरण में आने से उसी के विरद की पुष्टि होती है अर्थात् गुरु की शरण लेनेवाला उसके उदार स्वभाव के कारण मुक्ति प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥

❊ १५ ❊

॥ बिलावलु महला ५ ॥

ताप संताप सगले गए बिनसे ते रोग ॥

पारब्रहमि तू बखसिआ संतन रस भोग ॥ रहाउ ॥

सरब सुखा तेरी मंडली तेरा मनु तनु आरोग ॥

गुन गावहु नित राम के इह अवखद जोग ॥ १ ॥

आइ बसहु घर देस महि इह भले संजोग ॥

नानक प्रभ सुप्रसंन भए लहि गए बिओग ॥ २ ॥ १० ॥२८ ॥

प्रभु की कृपा से हमारे रोग-सन्ताप नष्ट हो गये हैं। परब्रह्म ने हमें सन्तों की संगति रूपी रस प्रदान किया है ॥ रहाउ ॥ गुरु का नैकट्य पाकर सब सुख तुम्हारे साथ हैं और तुम्हारा तन-मन अरोग हो गया है। आरोग्य को पाने के लिए एक ही उपयुक्त दवा है कि तुम नित्यप्रति राम-नाम का गुणगान करो ॥ १ ॥ अब जीव को अपने ही घर में रहने का संयोग मिला है (अर्थात् इधर-उधर माया-मोह में भटकने की अपेक्षा अब उसे एकाग्रचित्त होने का सुअवसर प्राप्त है)। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की प्रसन्नता से जीव के सब वियोग दूर हो गये अर्थात् वह परममिलन की अवस्था में पहुँच गया है ॥ २ ॥

※ १६ ※

॥ गउड़ी महला ५ ॥

बंधन काटे आपि प्रभि होआ किरपाल ॥
दीन दइआल प्रभ पारब्रहम ता की नदरि निहाल ॥ १ ॥
गुरि पूरै किरपा करी काटिआ दुखु रोगु ॥
मनु तनु सीतलु सुखी भइआ
प्रभ धिआवन जोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥
अउखधु हरि का नामु है जितु रोगु न विआपै ॥
साध संगि मनि तनि हितै फिरि दूखु न जापै ॥ २ ॥
हरि हरि हरि हरि जापीऐ अंतरि लिवलाई ॥
किल विख उतरहि सुधु होइ साधू सरणाइ ॥ ३ ॥
सुनत जपत हरि नाम जसु ता की दूरि बलाई ॥
महा मंत्र नानक कथै हरि के गुण गाई ॥ ४ ॥ २३ ॥ ५३ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८१४)

परमात्मा जब कृपा करता है तो सब बन्धन काट देता है। दीनदयालु, परब्रह्म प्रभु की कृपादृष्टि जनों को निहाल कर देती है ॥ १ ॥ सतगुरु ने कृपा करके हमारे सब दुःख दूर कर दिये हैं। अब मन, तन सब शीतल हो गया है और सुखपूर्वक परमात्मा की आराधना के योग्य बन गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का नाम सबसे बड़ी औषधि है, जिसके सम्मुख कोई रोग नहीं ठहरता। सन्तों की संगति में रहते हुए जब यह औषधि तन-मन में संचरित होती है, तो किसी रोग का भान भी नहीं रह जाता॥ २ ॥ (अतः) हरि-हरि नाम का जाप करो, मन में उसी का ध्यान लगाओ और सन्तों की शरण ग्रहण करो—इससे सब पाप धुल जाते हैं ॥ ३ ॥ जो जीव हरि-नाम का श्रवण करता है, हरि-नाम का जाप करता है, उसकी सब मुसीबतें दूर हो जाती हैं; तभी तो गुरु नानक हरि-गुणगान को महामन्त्र कहकर पुकारते हैं ॥ ४ ॥

❊ १७ ❊

॥ बिलावलु महला ५ ॥

हरि हरि हरि आराधीऐ होईए आरोग ॥
रामचंद की लसटिका जिनि मारिआ रोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥
गुरु पूरा हरि जापीऐ नित कीचै भोगु ॥
साध संगति कै वारणै मिलिआ संजोगु ॥ १ ॥
जिसु सिमरत सुखु पाइए बिनसै बिओगु ॥
नानक प्रभ सरनागती करण कारण जोगु ॥२ ॥३४ ॥६४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८१७)

बार-बार हरि की आराधना करके हमें आरोग्य-प्राप्ति होती है। हरि-स्मरण ही श्रीराम का वह राज्य-संकेत (लकड़ी, जो प्रजा को नियन्त्रण में रखने का संकेत होती है) है, जो प्रजा के समस्त रोगों का निदान करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमगुरु की दया से हरि-नाम जपने से

नित्य आनन्द प्राप्त होता है। साधु–सन्तों की संगति में प्रभु से मिलाप का अवसर मिलता है, अत: ऐसे सन्तों पर हम बलिहार जाते हैं ॥ १ ॥ जिसका सिमरन करने से सुख मिलता और वियोग नष्ट होता है, गुरु नानक उसी समर्थ की शरण चाहते हैं ॥ २ ॥

❊ १८ ❊

॥ बिलावलु महला ५ दुपदे घरु ५ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

अवरि उपाव सभि तिआगिआ दारू नामु लइआ ॥
ताप पाप सभि मिटे रोग सीतल मनु भइआ ॥ १ ॥
गुरु पूरा आराधिआ सगला दुखु गइआ ॥
राखनहारे राखिआ अपनी करि मइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
बाह पकड़ि प्रभि काढिआ कीना अपनइआ ॥
सिमरि सिमरि मन तन
सुखी नानक निरभइआ ॥ २ ॥ १ ॥६५ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८१७)

(सांसारिक रोगों के निदान के लिए) अन्य सभी उपाय छोड़कर केवल नाम की औषधि ग्रहण करो। इससे सब प्रकार के पाप, कष्ट आदि मिटते हैं और मन को परमशान्ति प्राप्त होती है ॥ १ ॥ पूर्णगुरु की आराधना करने से सब दु:ख निरस्त हो जाते हैं और सर्वरक्षक प्रभु दया करके जीवों की रक्षा कर लेता है॥ १ ॥ रहाउ॥ परमात्मा ने बाँह पकड़कर जीव को वासना के गर्त से निकालकर अपना लिया है; इसलिए गुरु नानक हरि–स्मरण द्वारा न केवल सुख को प्राप्त कर सके हैं, बल्कि पूर्णत: निर्भय हो गये हैं ॥ २ ॥

❋ १९ ❋

॥ बिलावलु महला ५ ॥

रोगु मिटाइआ आपि प्रभि उपजिआ सुखु सांति॥
वड परतापु अचरज रूपु हरि कीनी दाति॥ १॥
गुरि गोविंदि कृपा करी राखिआ मेरा भाई॥
हम तिसकी सरणागती जो सदा सहाई॥ १ ॥ रहाउ॥
बिरथी कदे न होवई जन की अरदासि॥
नानक जोरु गोविंद का पूरन गुणतासि॥ २ ॥१३ ॥७७॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८१९)

परमात्मा ने अपने विरद के हित महान आश्चर्य प्रकट किया है— दुनिया के सब रोगों, भोगों को मिटाकर चतुर्दिक् सुख-शान्ति स्थापित कर दी है॥ १॥ परमात्मा ने कृपा करके मेरे प्यारे की भी रक्षा की है; मैं उसी महान की शरण चाहता हूँ जो सदैव सबका सहायक है॥ १॥ रहाउ॥ सेवक की प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा के बल पर आश्रित जीव सदैव गुणवान होता है॥२॥

❋ २० ❋

॥ बिलावलु महला ५ ॥

ताती वाउ न लगई पारब्रहम सरणाई॥
चउगिरद हमारै राम कार दुखु लगै न भाई॥ १॥
सतिगुरु पूरा भेटिआ जिनि बणत बणाई॥
राम नामु अउखधु दीआ एका लिव लाई॥ १ ॥ रहाउ॥
राखि लीए तिनि रखनहारि सभ बिआधि मिटाई॥
कहु नानक किरपा भई प्रभ भए सहाई॥ २॥ १५ ॥७९॥

परब्रह्म के शरणागत को कभी कोई कष्ट नहीं होता (ताती हवा तक नहीं लगती), क्योंकि उसके गिर्द रक्षक लक्ष्मण-रेखा खिंच जाती है और कोई दुःख उसका अतिक्रमण नहीं कर सकता ॥ १ ॥ सतगुरु के मिलने पर ऐसा विधान होता कि जीव एकाग्र होकर राम-नाम में ही लीन हो जाता है (राम-नाम की दवा लेकर शक्ति पाता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रक्षक प्रभु नित्य रक्षा करता है और सब प्रकार के सन्तापों को दूर करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब परमात्मा कृपा करता है, तो जीवों का सहायक हो जाता है ॥ २ ॥

❊ २१ ❊

॥ बिलावलु महला ५ ॥

अपणे बालक आपि रखिअनु ॥
पारब्रहम गुरदेव ॥
सुख सांति सहज आनद भए पूरन भई सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥
भगत जना की बेनती सुणी प्रभि आपि ॥
रोग मिटाइ जीवालिअनु जा का वड परतापु ॥ १ ॥
दोख हमारे बखसिअनु अपणी कल धारी ॥
मन बांछत फल दितिअनु नानक बलिहारी ॥ २ ॥ १६ ॥ ८० ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८१९)

वाहिगुरु स्वयं अपने सेवकों की रक्षा करता है। सुख-शान्ति और सहज-आनन्द पाकर उनकी सेवा पूर्ण हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु भक्तों की विनती सुनकर अपने प्रताप द्वारा उनके रोगों को मिटाता और जीवन का दान देता है ॥ १ ॥ हे प्रभु! अपनी शक्ति से हमारे दोषों को क्षमा कर दो और नानक को मनोवांछित फल प्रदान करो, वह नित्य उस पर बलिहार है ॥ २ ॥

✻ २२ ✻

॥ बिलावलु महला ५ ॥

तापु लाहिआ गुर सिरजनहारि॥
सतिगुर अपने कउ बलि जाई
जिनि पैज रखी सारै संसारि॥ १ ॥रहाउ ॥
करु मसतकि धारि बालिकु रखि लीनो॥
प्रभि अंमृत नामु महा रसु दीनो॥ १ ॥
दास की लाज रखै मिहरवानु॥
गुरु नानकु बोलै दरगह परवानु॥ २ ॥ ६ ॥ ८६ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८२१)

गुरु–कृपा से सृजनहार ने हमारी पीड़ाओं का निस्तार कर दिया है। मैं सतगुरु पर नित्य बलिहार जाता हूँ, जिसने सारे संसार के सामने मेरी प्रतिष्ठा बना दी॥ १ ॥ रहाउ॥ मेरे माथे पर हाथ रखकर बालक की तरह मुझे संरक्षण दिया। परमात्मा ने अपने नाम का महारस मुझे पान करवाया॥ १ ॥ प्रभु बहुत कृपालु है, दास जानकर उसने मेरी लाज रखी। गुरु–कथन है कि भक्त का प्रत्येक वाक्य प्रभु के दरबार में परवान है॥ २ ॥

✻ २३ ✻

॥ बिलावलु महला ५ ॥

ताप पाप ते राखे आप॥
सीतल भए गुरचरनी लागे
राम नाम हिरदे महि जाप॥ १ ॥ रहाउ॥
करि किरपा हसत प्रभि दीने जगत उधार नवखंड प्रताप॥

दुख बिनसे सुख अनद प्रवेसा
तृसन बुझी मन तन सचु ध्राप॥ १ ॥
अनाथ को नाथु सरणि समरथा
सगल सृसटि को माई बापु॥
भगति वछल भै भंजन सुआमी
गुण गावत नानक आलाप॥ २ ॥ २० ॥ १०६ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ८२५)

मेरा प्रभु पापों और पीड़ाओं से स्वयं मेरी रक्षा करता है। हृदय में राम-नाम जाप करते हुए जब मैं उसके चरणों में आता हूँ, तो मेरे सब परिताप शीतल हो जाते हैं॥ १ ॥ रहाउ॥ परमात्मा कृपा करके मुझे सहायता का हाथ देता है, वह संसार का उद्धार करनेवाला और महा प्रतापी है। उसकी कृपा से दुःख नष्ट होते हैं, सुख-आनन्द की उपलब्धि होती है; तृष्णा की अग्नि बुझ जाती है और सत्य-लाभ करके तन-मन तृप्त हो जाता है॥ १ ॥ परमात्मा अनाथों का नाथ है और समूची सृष्टि का सर्जक तथा सबको शरण देने में समर्थ है। वह भक्तवत्सल है और सभी मानसिक भीतियों का निवारक है; इसीलिए गुरु नानक उसका गुणगान करते हैं॥ २ ॥

❊ २४ ❊

॥ सोरठि महला ५ ॥

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना मन तन भए अरोगा॥
कोटि बिघन लाथे प्रभ सरणा प्रगटे भले संजोगा॥ १ ॥
प्रभ बाणी सबदु सुभाखिआ॥
गावहु सुणहु पड़हु नित भाई गुर पूरै तू राखिआ॥ रहाउ॥

साचा साहिबु अमिति वडाई भगति वछल दइआला ॥
संता की पैज रखदा अइआ आदि बिरदु प्रतिपाला ॥२ ॥
हरि अंमृत नामु भोजनु नित भुंचहु सरब वेला मुखि पावहु ॥
जरा मरा तापु सभु नाठा गुण गोबिंद नित गावहु ॥ ३ ॥
सुणी अरदासि सुआमी मेरै सरब कला बणि आई ॥
प्रगट भई सगले जुग अंतरि
गुर नानक की वडिआई ॥ ४ ॥ ११ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६११)

प्रातःकाल स्नान करके और प्रभु का नाम-स्मरण करके मन, तन निरोग हो जाते हैं क्योंकि प्रभु की शरण लेकर करोड़ों रुकावटें दूर हो जाती हैं और प्रभु के साथ मिलाप के अवसर बन जाते हैं ॥ १ ॥ हे भाई! गुरु ने अपना सुन्दर उपदेश दिया है, जो प्रभु की गुणस्तुति की वाणी है, इसे सदा गाते रहो, सुनते रहो और पढ़ते रहो, (ऐसा करने पर यह निश्चित है कि अनेक मुसीबतों से) पूर्णगुरु ने तुझे बचा लिया है ॥ रहाउ ॥ हे भाई! मालिक-प्रभु सत्यस्वरूप है, उसका बड़प्पन मापा नहीं जा सकता, वह भक्ति से प्रेम करनेवाला है, दया का स्रोत है, सन्तों की प्रतिष्ठा की रक्षा करता आया है और अपना यह विरद वह आदिमकाल से ही निभाता आ रहा है ॥ २ ॥ हे भाई! परमात्मा का नाम आत्मिक जीवन देनेवाला है। यह आत्मिक खुराक सदा खाते रहो, प्रतिपल अपने मुँह में डालते रहो। हे भाई! हमेशा गोविन्द का गुणगान करते रहो, न बुढ़ापा आएगा, न मृत्यु आएगी और प्रत्येक दुख-क्लेश दूर हो जायगा॥ ३ ॥ हे भाई! (नाम-स्मरण करनेवाले) मनुष्य की प्रार्थना मेरे स्वामी ने सुन ली, (अब प्रभु-कृपा होने पर) उसके भीतर पूर्ण शक्ति पैदा हो जाती है। हे नानक! गुरु की यह महानता तमाम युगों में उजागर रहती है ॥ ४ ॥

❊ २५ ❊

॥ सोरठि महला ५ ॥

सूख मंगल कलिआण सहज धुनि प्रभ के चरण निहारिआ ॥
राखनहारै राखिओ बारिकु सतिगुरि तापु उतारिआ ॥ १ ॥
उबरे सतिगुर की सरणाई
जाकी सेव न बिरथी जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥
घर महि सूख बाहरि फुनि सूखा प्रभ अपुने भए दइआला ॥
नानक बिघनु न लागै कोऊ
मेरा प्रभु होआ किरपाला ॥ २ ॥ १२ ॥ ४० ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६१९)

गुरु ने अपनी शरण में आए व्यक्ति का सन्ताप दूर कर दिया, रक्षा करने में समर्थ गुरु ने उस बालक को बचा लिया जैसे पिता अपने बच्चों को बचाता है। जिसने परमात्मा के चरणों का दर्शन कर लिया, उसके भीतर सुख, आनन्द और उल्लास का प्रवाह बह उठा ॥ १ ॥ हे भाई! जिस गुरु की सेवा व्यर्थ नहीं जाती, उस गुरु की शरण जो मनुष्य लेते हैं वे (सांसारिक बाधाओं से) बच जाते हैं ॥ रहाउ ॥ गुरु के शरणागत व्यक्ति के हृदय में आत्मिक आनन्द बना रहता है, बाहर लौकिक व्यवहार निभाते हुए भी उसे आत्मिक सुख मिला रहता है, उस पर हमेशा प्रभु दयालु रहता है। हे नानक! उस मनुष्य की जिन्दगी के रास्ते में कोई रुकावट नहीं आती, उस पर परमात्मा कृपालु हुआ रहता है ॥ २ ॥

❊ २६ ❊

॥ सोरठि महला ५ ॥

गए कलेस रोग सभि नासे प्रभि अपुनै किरपा धारी ॥
आठ पहर आराधहु सुआमी पूरन घाल हमारी ॥ १ ॥

हरि जीउ तू सुख संपति रासि ॥
राखि लैहु भाई मेरे कउ प्रभ आगै अरदासि ॥ रहाउ ॥
जो मागउ सोई सोई पावउ अपने खसम भरोसा ॥
कहु नानक गुरु पूरा भेटिओ
मिटिओ सगल अंदेसा ॥ २ ॥ १४ ॥ ४२ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६१९)

हे भाई! जिस मनुष्य पर भी प्यारे प्रभु ने कृपा की, उसके सब क्लेश तथा रोग दूर हो गए। हे भाई! मालिक-प्रभु को आठों प्रहर स्मरण करते रहा करो, हम जीवों की मेहनत अवश्य सफल होती है ॥ १ ॥ हे प्रभु! तुम ही मुझे आत्मिक आनन्द की धन-दौलत देनेवाले हो। हे प्रभु! मुझे क्लेशों से बचा लो। मेरी तुम्हारे आगे ही प्रार्थना है ॥ रहाउ ॥ हे भाई! मैं तो जो कुछ माँगता हूँ, वही कुछ प्राप्त कर लेता हूँ। मुझे अपने मालिक-प्रभु पर विश्वास है। नानक का कथन है कि जिस मनुष्य को पूर्णगुरु मिल जाता है, उसकी समस्त फिक्र दूर हो जाती हैं ॥२ ॥

❋ २७ ❋

॥ सोरठि महला ५ ॥

सिमरि सिमरि गुरु सतिगुरु अपना सगला दूखु मिटाइआ ॥
ताप रोग गए गुर बचनी मन इछे फल पाइआ ॥ १ ॥
मेरा गुरु पूरा सुखदाता ॥
करण कारण समरथ सुआमी पूरन पुरखु बिधाता ॥ रहाउ ॥
अनंद बिनोद मंगल गुण गावहु गुर नानक भए दइआला ॥
जै जैकार भए जग भीतरि
होआ पारब्रहमु रखवाला ॥२ ॥१५ ॥४३ ॥

गुरु की शरण लेनेवाला मनुष्य बार-बार सतिगुरु को स्मरण कर अपना हरेक प्रकार का दुख दूर कर लेता है। गुरु की शिक्षा पर चलकर उसके सारे रोग, सारे क्लेश दूर हो जाते हैं और वह मनोवांछित फल प्राप्त कर लेता है॥ १॥ हे भाई! मेरा गुरु सर्वगुणसम्पन्न है, सब सुख देनेवाला है। गुरु उस सर्वव्यापक सृजनहार का रूप है, जो सारे जगत का मूल है, जो सर्वशक्तिमान् है॥ रहाउ॥ नानक का कथन है कि यदि तुझ पर सतिगुरु दयालु हुए हैं, तो तू प्रभु की गुणस्तुति के गीत गाता रह, इससे तेरे भीतर आनन्द, खुशियाँ और सुख बने रहेंगे। गुणस्तुति से जगत में शोभा मिलती है (क्योंकि यह सर्वथा सत्य है कि) परमात्मा हमेशा रक्षक है॥ २॥

※ २८ ※

॥ सोरठि महला ५॥

दुरतु गवाइआ हरि प्रभि आपे सभु संसारु उबारिआ॥
पारब्रहमि प्रभि किरपा धारी अपणा बिरदु समारिआ॥१॥
होई राजे राम की रखवाली॥
सूख सहज आनद गुण गावहु मनु तनु देह सुखाली॥रहाउ॥
पतित उधारणु सतिगुरु मेरा मोहि तिसका भरवासा॥
बखसि लए सभि सचै साहिबि
सुणि नानक की अरदासा॥ २॥ १७॥ ४५॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६२०)

(जिस प्राणी पर प्रभु कृपालु हो गए) उसका पूर्वकृत पाप प्रभु ने दूर कर दिया, इस प्रकार प्रभु सारे संसार को आप ही बचाता है। प्रभु हमेशा अपना विरद स्मरण रखता है॥ १॥ हे भाई! प्रभु-बादशाह (पापों से) जिसकी रक्षा करता है, उसका मन सुखी हो जाता है, उसका शरीर सुखी हो जाता है। तुम भी उस परमात्मा के गुणों के गीत गाया करो, तुम्हें भी सुख और सहजावस्था को अनुभूत होनेवाला आनन्द

प्राप्त होगा॥ रहाउ॥ हे भाई! मेरा गुरु विकारग्रंस्त जीवों को बचानेवाला है। मुझे भी उसका ही सहारा है। जिस सत्यस्वरूप प्रभु ने सारे जीव (गुरु का शरणागत करके) बख्श दिए हैं अर्थात् सबको क्षमा कर दिया है, वह प्रभु नानक की प्रार्थना भी सुननेवाला है॥ २॥

❊ २९ ❊

॥ सोरठि महला ५॥

बखसिआ पारब्रहम परमेसरि सगले रोग बिदारे॥
गुर पूरे की सरणी उबरे कारज सगल सवारे॥ १॥
हरि जनि सिमरिआ नाम अधारि॥
तापु उतारिआ सतिगुरि पूरै अपणी किरपा धारि॥ रहाउ॥
सदा अनंद करह मेरे पिआरे हरि गोविंदु गुरि राखिआ॥
वडी वडिआई नानक करते की
साचु सबदु सति भाखिआ॥ २॥ १८॥ ४६॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६२०)

हे भाई! पारब्रह्म परमेश्वर ने जिस पर कृपा की, उसके सारे रोग उसने दूर कर दिए। जो मनुष्य गुरु की शरण लेते हैं, वे दुख-क्लेशों से बच जाते हैं। गुरु उनके सारे कार्य सँवार देता है॥ १॥ हे भाई! परमात्मा के जिस सेवक ने परमात्मा का नाम स्मरण किया, नाम के आसरे पर रहा, पूर्णगुरु ने कृपा करके उसका दुख (ज्वर) दूर कर दिया॥ रहाउ॥ हे मेरे प्यारे भाई! गुरु की शरण लेकर सदा आनन्द मानो, हरिगोबिन्द को भी गुरु ने ही ज्वर से बचाया है। हे नानक! सृजनहार कर्तार महान शक्तियों का स्वामी है। उस सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति का शब्द ही उच्चारण करना चाहिए (गुरु ने यह उपयुक्त उपदेश दिया है)॥ २॥

[कहते हैं कि एक समय गुरु अर्जुनदेव के सुपुत्र हरिगोबिन्द को तीव्र ज्वर हुआ था। प्रभु-कृपा से जब वे ज्वर-मुक्त हुए, तो गुरुजी ने उपर्युक्त शब्दोच्चारण किया। कतिपय आगे के पद भी इसी संदर्भ में हैं।]

✿ ३० ✿

॥ सोरठि महला ५ ॥

भए कृपाल गुरु गोविंदा सगल मनोरथ पाए॥
असथिर भए लागि हरि चरणी गोविंद के गुण गाए॥१॥
भलो समूरतु पूरा॥
सांति सहज आनंद नामु जपि वाजे अनहद तूरा॥१॥रहाउ॥
मिले सुआमी प्रीतम अपुने घर मंदर सुखदाई॥
हरिनामु निधानु नानक जन
पाइआ सगली इछ पुजाई॥ २ ॥ ८ ॥ ३६ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६१८)

हे भाई! जिस मनुष्य पर परमात्मा का रूप गुरु दयालु होता है, उसके मन की सब आकांक्षाएँ पूर्ण हो जाती हैं क्योंकि परमात्मा की गुणस्तुति के गीत गा-गाकर प्रभु-चरणों में लगन लगाकर वह मनुष्य (माया के प्रति उपजनेवाले) आकर्षण से हट जाता है॥ १ ॥ वह समय सुहावना होता है, शुभ होता है, जब परमात्मा का नाम जपकर उसके भीतर शान्ति आत्मिक स्थिरता, आनन्द का अनहद नाद होने लगता है॥ १ ॥ रहाउ॥ हे भाई! जिस मनुष्य को मालिक-प्रियतम प्रभुजी मिल पड़ते हैं, उसे ये घर-घाट सब सुखदायक प्रतीत होते हैं। हे दास नानक! जिस मनुष्य ने परमात्मा का नाम-खजाना प्राप्त कर लिया, उसकी हरेक मनोकामना पूर्ण हो जाती है॥ २ ॥

✿ ३१ ✿

॥ सोरठि महला ५ ॥

संतहु हरि हरि नामु धिआई।
सुख सागर प्रभु विसरउ नाही
मन चिंदिअड़ा फलु पाई॥ १ ॥ रहाउ॥

सतिगुरि पूरै तापु गवाइआ अपणी किरपा धारी।
पारब्रहम प्रभ भए दइआला दुखु मिटिआ सभ परवारी ॥१ ॥
सरब निधान मंगल रस रूपा हरि का नामु अधारो।
नानक पति राखी परमेसरि
उधरिआ सभु संसारो ॥ २ ॥ २० ॥ ४८ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६२०)

हे सन्तो! (मेरी कामना है कि) मैं सदा परमात्मा का नाम स्मरण करता रहूँ। सुखों का समुद्र प्रभु मुझे कभी विस्मृत न हो और मैं मनोवांछित फल प्राप्त करता रहूँ॥ १ ॥ रहाउ॥ हे सन्तो! पूर्णगुरु ने (बालक हरिगोबिन्द का) दुःख दूर कर दिया, इस प्रकार गुरु ने कृपा की है, परमात्मा कृपालु हुआ है और सारे परिवार का दुःख मिट गया है ॥ १ ॥ हे सन्तो! परमात्मा का नाम ही एकमात्र सहारा है, नाम ही सब खुशियों, रसों, रूपों का भण्डार है। नानक का कथन है कि परमेश्वर ने हमारी प्रतिष्ठा की रक्षा की है (क्योंकि) वही समस्त संसार की रक्षा करनेवाला है ॥ २ ॥

❋ ३२ ❋

॥ सोरठि महला ५ ॥

मेरा सतिगुरु रखवाला होआ
धारि क्रिपा प्रभ हाथ दे राखिआ
हरि गोविदु नवा नरोआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
तापु गइआ प्रभि आपि मिटाइआ जन की लाज रखाई ॥
साध संगति ते सब फल पाए सतिगुर कै बलि जांई ॥१ ॥
हलतु पलतु प्रभ दोवै सवारे
हमरा गुणु अवगुणु न बीचारिआ ॥

अटल बचनु नानक गुर तेरा
सफल करु मसतकि धारिआ ॥ २ ॥ २१ ॥ ४९ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६२०)

हे भाई! मेरा गुरु मेरा सहायक बना है, जिसके परिणामस्वरूप प्रभ ने कृपा करके बालक हरिगोबिन्द को बचा लिया है और हरिगोबिन्द बिल्कुल स्वस्थ हो गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! (हरिगोबिन्द का) दुःख दूर हो गया है, प्रभु ने आप दूर किया है, प्रभु ने अपने सेवक की प्रतिष्ठा की रक्षा की है। हे भाई! गुरु की संगति से मैंने सारे फल प्राप्त किए हैं, (इसलिए) मैं हमेशा गुरु पर बलिहारी हूँ ॥ १ ॥ (सेवक) का लोक-परलोक परमात्मा सँवार देता है। समर्पित जीवों का कोई अवगुण परमात्मा मन में नहीं रखता। नानक का कथन है कि हे गुरु! तुम्हारा यह वचन अपरिवर्तनीय है (कि प्रभु जीव का रक्षक है)। हे सतिगुरु! तुम्हारा वरद हाथ हमारे सिर पर सदा बना रहे ॥ २ ॥

❋ ३३ ❋

॥ सोरठि महला ५ ॥

जीअ जंत्र सभि तिसके कीए सोई संत सहाई ॥
अपने सेवक की आपे राखै पूरन भई बडाई ॥ १ ॥
पारब्रहमु पूरा मेरै नालि ॥
गुरि पूरै पूरी सभ राखी ॥
होए सरब दइआल ॥ १ ॥ रहाउ ॥
अनदिनु नानकु नामु धिआए जीअ प्रान का दाता ॥
अपुने दास कउ कंठि लाइ राखै
जिउ बारिक पित माता ॥ २ ॥ २२ ॥ ५० ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६२१)

हे भाई! समस्त जीव उसके द्वारा ही उत्पादित हैं। वह प्रभु ही सन्तजनों का सहायक है। परमात्मा अपने सेवक की प्रतिष्ठा आप रखता है, उसी की कृपा से सेवक की प्रतिष्ठा पूर्णतौर से बनी रहती है॥ १॥ हे भाई! पूर्णपरमात्मा सदा मेरा सहायक है। उसी ने भली प्रकार से मेरी प्रतिष्ठा का निर्वाह किया है। गुरु समस्त जीवों पर दयालु रहता है॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! नानक उसका नाम प्रतिपल स्मरण करता रहता है, जो प्राणदाता है और जो श्वासों का दाता है। हे भाई! जैसे माँ-बाप अपने बच्चों का ख्याल रखते हैं, उसी प्रकार सेवक को परमात्मा अपने गले से लगाकर रखता है॥ २॥

❋ ३४ ❋

॥ सोरठि महला ५॥

ठाढि पाई करतारे॥
तापु छोडि गइआ परवारे॥
गुरि पूरै है राखी॥
सरणि सचे की ताकी॥ १॥
परमेसुरु आपि होआ रखवाला॥
सांति सहज सुख खिन महि उपजे
मनु होआ सदा सुखाला॥ रहाउ॥
हरि हरि नामु दीओ दारू॥
तिनि सगला रोगु बिदारू॥
अपणी किरपा धारी॥
तिनि सगली बात सवारी॥२॥
प्रभि अपना बिरदु समारिआ॥
हमरा गुणु अवगुणु न विचारिआ॥

गुर का सबदु भइओ साखी॥
तिनि सगली लाज राखी॥३॥
बोलाइआ बोली तेरा॥
तू साहिब गुणी गहेरा॥
जपि नानक नामु सचु साखी॥
अपुने दास की पैज राखी॥ ४॥ ६॥ ५६॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६२२)

हे भाई! जिस मनुष्य के भीतर कर्तार ने शान्ति प्रतिष्ठापित कर दी, उसका परिवार भी (विकारों के) ताप से मुक्त हो जाता है। हे भाई! पूर्णगुरु ने जिस मनुष्य की सहायता की, उसने सत्यस्वरूप परमात्मा का सहारा पा लिया॥ १ ॥ जिस मनुष्य का रक्षक आप परमात्मा बन जाता है, उसका मन हमेशा के लिए सुखी हो जाता है, (उसके भीतर) एक क्षण में आत्मिक टिकाव, सुख, शान्ति पैदा हो जाते हैं॥ रहाउ॥ हे भाई! गुरु ने जिसे परमात्मा की नाम रूपी औषधि दी, उस नाम रूपी औषधि ने उस मनुष्य का सारा ही विकार-(रोग) दूर कर दिया। मनुष्य पर प्रभु-कृपा हुई तो उसकी तमाम जीवन-कथा ही सुन्दर बन गई॥ २ ॥ हे भाई! प्रभु ने सदा अपने विरद को स्मरण रखा है। वह हम जीवों का कोई गुण या अवगुण स्मरण नहीं रखता। (जिस मनुष्य के भीतर) गुरु के ज्ञान ने प्रभाव दिखाया, उसकी समस्त प्रतिष्ठा का बचाव हो गया॥ ३ ॥ हे प्रभु! तुम हमारे स्वामी हो, गुणों के भण्डार हो और गहन गम्भीर हो। जब तुम प्रेरणा देते हो, तब ही मैं तुम्हारी गुणस्तुति कर सकता हूँ। हे नानक! सत्यस्वरूप प्रभु का नाम जपा कर, यही सदा साक्षी रहेगा। प्रभु अपने सेवकों की लाज (प्रतिष्ठा) बचाता ही आया है॥ ४ ॥

ੴ

शबद हजारे

[प्रभु स्मृति को दृढ़ बनाने वाले शबद]

और

कुछ अन्य शबद

[गायन करने योग्य वाणियों का संग्रह]

शबद हजारे

॥ माझ महला ५ चौपदे घरु १ ॥

मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई।
बिलप करे चात्रिक की निआई।
त्रिखा न उतरै सांति न आवै बिनु दरसन
संत पिआरे जीउ॥ १॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई गुर दरसन
संत पिआरे जीउ॥ १॥ रहाउ॥
तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी।
चिरु होआ देखे सारिंगपाणी।
धंनु सु देसु जहा तूं वसिआ मेरे सजण
मीत मुरारे जीउ॥ २॥
हउ घोली हउ घोलि घुमाई गुर सजण
मीत मुरारे जीउ॥ १॥ रहाउ॥
इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता।
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता।
मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै बिनु
देखे गुर दरबारे जीउ॥ ३॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई तिसु
सचे गुर दरबारे जीउ॥ १॥ रहाउ॥
भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ।
प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ।

सेव करी पलु चसा न विछुड़ा जन
नानक दास तुमारे जीउ॥ ४॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई जन नानक
दास तुमारे जीउ॥ रहाउ॥ १॥ ८॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९६)

हे गुरुजी, आपके दर्शन के लिए मेरा मन व्याकुल है और चातक की तरह विलाप करता है। हे सन्तजनों के प्यारे, आपके दर्शनों के बिना प्यास नहीं बुझती॥ १॥ हे सन्तों के प्रिय, मैं आपके दर्शनों के लिए मन, वाणी और देह से बलिहारी जाता हूँ॥ १॥ रहाउ॥ तेरा मुख शोभनीय है और वाणी सहज अर्थात् शान्तिरूप है। हे सारंगपाणी, आपके दर्शन किए चिरकाल हो गया है, अथवा ऐसी अवस्था हो गई है जैसे जल की चाह में चातक की अवस्था होती है। हे मेरे प्रभु, मेरे मित्र, मेरे सज्जन, वह स्थान धन्य है जहाँ आप बस रहे हैं॥ २॥ मैं मन, तन और बाणी से आप पर बलिहार जाता हूँ, क्योंकि हे सज्जन, हे गुरुजी, आप प्रभु के प्रिय हो॥ १॥ रहाउ॥ एक घड़ी दर्शन न होने पर तो समय कलियुग-सा लगता है, अर्थात् विछोह के एक घड़ी समय का आभास कलियुग (बहुत दुखदकाल) की तरह होता है, लेकिन हे प्यारे, अब आपको कब मिलूँगा। हे गुरु, आपका दरबार देखे बिना मुझे नींद नहीं आती और न ही मेरी रात्रि बीतती है॥ ३॥ मैं मन, तन और बाणी से उस गुरु पर बलिहारी जाता हूँ जिसका दरबार सच्चा है॥ १॥ रहाउ॥ जब पुण्यों का प्रभाव हुआ, अर्थात् जब सौभाग्य हुआ तब सन्तों ने आप ही गुरु से मिलाप करा दिया और अब (आपकी कृपा से)

* [टिप्पणी—इस पद के विभिन्न अंश अलग-अलग लिखे गए थे। कहते हैं एक बार गुरु अर्जुन को अपने पिता से अलग रहना पड़ा। वे बराबर मिलने की इजाजत पाने के लिए एक-एक अंश लिखकर भेजते रहे, किन्तु दुष्टों के षड्यन्त्र के कारण वे अंश गुरु अर्जुन के पिता श्री गुरु रामदास के पास पहुँच ही नहीं सके।]

अविनाशी प्रभु अन्तःकरण-रूपी घर में प्राप्त हुआ है। अब प्रार्थना है कि आपकी सेवा करते हुए पल या चसा भर भी (अर्थात् क्षणमात्र भी) न बिछड़ूँ। मैं आपका दास हूँ॥ ४॥ नानक कहते हैं कि मैं मन-तन वाणी से उन पर बलिहारी हूँ जो आपके दास हैं॥ १॥ ८॥

॥ धनासरी महला १ चौपदे घरु १ ॥

जीउ डरतु है आपणा कै सिउ करी पुकार।
दूख विसारणु सेविआ सदा सदा दातारु॥ १॥
साहिबु मेरा नीत नवा सदा सदा दातारु॥ १॥ रहाउ॥
अनदिनु साहिबु सेवीऐ अंति छडाए सोइ।
सुणि सुणि मेरी कामणी पारि उतारा होइ॥ २॥
दइआल तेरै नामि तरा।
सद कुरबाणै जाउ॥ १॥ रहाउ॥
सरबं साचा एकु है दूजा नाही कोइ।
ताकी सेवा सो करे जाकउ नदरि करे॥ ३॥
तुधु बाझु पिआरे केव रहा।
सा वडिआई देहि जितु नामि तेरे लागि रहां।
दूजा नाही कोइ जिसु
आगै पिआरे जाइ कहा॥ १॥ रहाउ॥
सेवी साहिबु आपणा अवरु न जाचंउ कोइ।
नानकु ताका दासु है बिंद बिंद चुख चुख होइ॥ ४॥
साहिब तेरे नाम विटहु बिंद
बिंद चुख चुख होइ॥ १॥ रहाउ॥ ४॥ १॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६६०)

सांसारिक दुखों को देखकर मेरी आत्मा काँपती है (कोई बचानेवाला दृष्टिगत नहीं होता), जिसके पास जाकर मैं प्रार्थना करूँ। (इसलिए) मैं दुःखनाशक प्रभु को ही स्मरण करता हूँ, वह हमेशा ही कृपा करनेवाला है॥ १ ॥ मेरा मालिक-प्रभु हमेशा कृपा तो करता रहता है अर्थात् प्रभु देन देता रहता है, लेकिन उसकी निरन्तर कृपा हमें इस प्रकार प्रतीत होती है, जैसे पहली बार ही कृपा करने लगा है॥ १ ॥ रहाउ॥ हे मेरी आत्मा! प्रतिदिन उस मालिक को ही स्मरण करना चाहिए, आखिर में वही दुखों से बचाता है। हे आत्मा! ध्यानपूर्वक सुन। (प्रभु-कृपा द्वारा ही) पार उतरा जा सकता है॥ २ ॥ हे दयालु प्रभु! मैं हमेशा तुम पर बलिहारी हूँ। तुम्हारे नाम के द्वारा ही संसार-समुद्र से पार उतर सकता हूँ॥ १ ॥ रहाउ॥ सत्यस्वरूप प्रभु ही सर्वत्र मौजूद है, उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं। जिस जीव पर वह कृपादृष्टि करता है वही उसका स्मरण करता है॥ ३ ॥ हे प्यारे प्रभु! तुम्हारी स्मृति के बिना मैं दुखी हो जाता हूँ। मुझे वह वरदान दो, जिसके परिणामस्वरूप मैं तुम्हारे नाम में लीन रहूँ। हे प्यारे! तुम्हारे बिना कोई दूसरा ऐसा नहीं है, जिसके पास जाकर मैं यह प्रार्थना कर सकूँ॥ १ ॥ रहाउ॥ (दुखों से मुक्ति के लिए) मैं अपने मालिक-प्रभु को ही स्मरण करता हूँ, किसी दूसरे से मैं यह माँग नहीं माँगता। नानक उस मालिक का ही सेवक है और उस मालिक पर ही क्षण-क्षण बलिहारी जाता है॥ ४ ॥ हे मेरे मालिक! मैं तुम्हारे नाम पर बलिहारी जाता हूँ॥ १ ॥ रहाउ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ तिलंग महला १ घरु ३ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे लीतड़ा लबि रंगाए। मैरै कंत न भावै चोलड़ा पिआरे किउ धन सेजै जाए॥१॥ हंउ कुरबानै जाउ मिहरवाना हंउ कुरबानै जाउ।

हंउ कुरबानै जाउ तिना कै लैनि जो तेरा नाउ।
लैनि जो तेरा नाउ तिना कै हंउ सद कुरबानै जाउ॥ १॥
रहाउ॥
काइआ रंङणि जे थीऐ पिआरे पाईऐ नाउ मजीठ।
रंङण वाला जे रंङै साहिबु ऐसा रंगु न डीठ॥ २॥
जिन के चोले रतड़े पिआरे कंतु तिना कै पासि।
धूड़ि तिना की जे मिलै जी कहु नानक की अरदासि॥ ३॥
आपे साजे आपे रंगे आपे नदरि करेइ।
नानक कामणि कंतै भावै आपे ही रावेइ॥ ४॥

जीव-स्त्री के शरीर रूपी वस्त्र को माया की लाग लगी है और तदन्तर इसे झूठ के साथ रँगा है, यह जीवन-स्त्री प्रभु-पति के चरणों में नहीं पहुँच सकती, क्योंकि वह वस्त्र (रूपी जीवन) प्रभु-पति को अपनाकर शय्या पर नहीं जाया जा सकता॥ १॥ हे कृपालु प्रभु! मैं बलिहारी हूँ मैं उन पर बलिहारी हूँ, जो तुम्हारा नाम स्मरण करते हैं। जो व्यक्ति तुम्हारा नाम लेते हैं, मैं उन पर सदा बलिहारी हूँ॥ १॥ रहाउ॥ यदि यह शरीर कपड़ा रंगने की मटकी बन जाए और यदि इसमें मजीठ जैसे पक्के रंग वाला प्रभु का नाम रंग डाला जाए, तदन्तर मालिक-प्रभु आप रंगरेज बनकर जीव-स्त्री के मन को रँगे तो अभूतपूर्व रंग चढ़ता है अर्थात् अद्‌भुत रंग चढ़ता है॥ २॥ हे प्यारे! जिन जीव-स्त्रियों के शरीर रूपी वस्त्र प्रभु के नाम-रंग में रँगे गए हैं, प्रभु-पति उनके समीप विद्यमान रहता है। हे सज्जन! नानक की ओर से उनके पास प्रार्थना कर (ताकि) नानक को उनके चरणों की धूलि मिल सके॥ ३॥ हे नानक! जिस जीव-स्त्री पर प्रभु स्वयं कृपा-दृष्टि करता है, उसे वह आप ही सँवारता है, आप ही रँगता है, वह जीव-स्त्री प्रभु-पति को भली लगती है और उसे प्रभु अपने चरणों में जगह देता है॥ ४॥

॥ तिलंग महला १ ॥

इआनड़ीए मानड़ा काइ करेहि।
आपनड़ै घरि हरि रंगो की न माणेहि।
सहु नेड़ै धन कंमलीए बाहरु किआ ढूढेहि।
भै कीआ देहि सलाईआ नैणी भाव का करि सीगारो।
ता सोहागणि जाणीऐ लागी जा सहु धरे पिआरो॥ १ ॥
इआणी बाली किआ करे जा धन कंत न भावै।
करण पलाह करे बहुतेरे सा धन महलु न पावै।
विणु करमा किछु पाईऐ नाही जे बहुतेरा धावै।
लब लोभ अहंकार की माती माइआ माहि समाणी।
इनी बाती सहु पाईऐ नाही भई कामणि इआणी॥ २ ॥
जाइ पुछहु सोहागणी वाहै किनी बाती सहु पाईऐ।
जो किछु करे सो भला करि
मानीऐ हिकमति हुकमु चुकाईऐ।
जाकै प्रेमि पदारथु पाईऐ तउ चरणी चितु लाईऐ।
सहु कहै सो कीजै तनु मनो दीजै ऐसा परमलु लाईऐ।
एव कहहि सोहागणी भैणे इनी बाती सहु पाईऐ॥ ३ ॥
आपु गवाईऐ ता सहु पाईऐ अउरु कैसी चतुराई।
सहु नदरि करि देखै सो दिनु लेखै कामणि नउनिधि पाई।
आपणे कंत पिआरी सा सोहागणि नानक सा सभराई।
ऐसै रंगि राती सहज की माती अहिनिसि भाइ समाणी।
सुंदरि साइ सरूप बिचखणि कहीऐ सा सिआणी॥ ४ ॥

(गु. ग्रं. सा. पन्ना ७२२)

हे अबोध जीव! तू इतना अभिमान क्यों करती है? परमात्मा तेरे हृदय में अवस्थित है। तू उसका आनन्द अनुभवन क्यों नहीं करती? हे भोली जीव-स्त्री! प्रभु-पति तुम्हारे निकट विद्यमान है, तू उसे बाहरी संसार में क्यों खोजती फिरती है? आँखों में प्रभु के प्रीति-भाव का अंजन लगाकर प्रभु के प्रेम का हार-शृंगार कर जीव-स्त्री तब ही भाग्यशालिनी तथा प्रभु के चरणों में स्थान पानेवाली समझी जाती है, जब प्रभु-पति उससे प्रेमभाव रखे॥ १॥ यदि परमात्मा उसे न चाहे तो बेचारी जीव-स्त्री क्या कर सकती है? ऐसी जीव-स्त्री चाहे कितना ही करुण-प्रलाप करे, वह प्रभु-पति का महल अथवा घर प्राप्त नहीं कर सकती। (वैसे) जीव-स्त्री चाहे कितनी ही भाग-दौड़ करे, प्रभु की कृपादृष्टि के बिना उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता। यदि जीव-स्त्री लोभ, आस्वादन, अहंकार आदि में ही लीन रहे और सदा माया में डूबी रहे तो इन बातों से प्रभु-पति नहीं मिलता। वह जीव-स्त्री मूर्ख ही रही (जिसने अन्यान्य तरीकों से ईश्वर को पाना चाहा)॥ २॥ निस्सन्देह (प्रभु-पति को प्राप्त करनेवाली) सौभाग्यवती स्त्रियों से पूछ लो कि किन बातों से प्रभु-पति प्राप्त होता है? (तुम्हें पता लग जाएगा।) चालाकी और छल-प्रपंच छोड़ दो; जो कुछ प्रभु करता है, वह भला समझकर स्वीकार कर लो। जिस प्रभु के प्रेम द्वारा नाम-वस्तु प्राप्त होती है, उसके चरणों में मन लगाओ। प्रभु-पति जो हुक्म करता है, उसे मानो, अपना तन-मन उसके प्रति अर्पित करो। यह सुगन्धि रूपी समझ इस्तेमाल करो। सौभाग्यवती स्त्रियाँ यही कहती हैं कि इन बातों से ही प्रभु-पति प्राप्त होता है॥ ३॥ प्रभु-पति तब ही मिलता है, जब अहंभाव दूर किया जाय। इसके अतिरिक्त अन्य सब प्रयास व्यर्थ की चालाकी हैं। वह दिन सफल जानो, जब प्रभु-पति तुम्हें कृपादृष्टि से देखे। जिस जीव-स्त्री पर प्रभु कृपा करता है, वह मानो नौ निधियाँ पा लेती है। हे नानक! जो जीव-स्त्री प्रभु-पति को प्यारी है, वह सौभाग्यवती है, वह संसार रूपी परिवार में आदर-सम्मान प्राप्त करती है। जो प्रभु

के प्रेम-रंग में रँगी रहती है, जो स्थिरचित्त रहती है, जो प्रभु के प्रेम में रात-दिन खोई रहती है, वही सुन्दर है, वही रूपसी है, वही बुद्धिमान और समझदार कही जाती है ॥ ४ ॥

॥ सूही महला १ ॥

कउण तराजी कवणु तुला तेरा कवणु सराफु बुलावा।
कउणु गुरू कै पहि दीखिआ लेवा कै पहि मुलु करावा ॥१ ॥
मेरे लाल जीउ तेरा अंतु न जाणा।
तूं जल थलि महीअलि भरि पुरि
लीणा तूं आपे सरब समाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥
मनु ताराजी चितु तुला तेरी सेव सराफु कमावा।
घट ही भीतरि सो सहु तोली इन बिधि चितु रहावा ॥ २ ॥
आपे कंडा तोलु तराजी आपे तोलणहारा।
आपे देखै आपे बूझै आपे है वणजारा ॥ ३ ॥
अंधुला नीच जाति परदेसी खिनु आवै तिलु जावै।
ता की संगति नानकु रहदा किउ करि मूड़ा पावै ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ७३०)

हे प्रभु! कोई ऐसी तराजू नहीं, ऐसा बाँट नहीं (जो तुम्हारा सही मूल्यांकन कर सके), कोई ऐसा सर्राफ़ नहीं, जिसे मैं (तुम्हारे गुणों का अनुमान करने के लिए) बुला सकूँ। मुझे कोई ऐसा गुरु नहीं मिलता, जिससे मैं तुम्हारा मूल्यांकन कराऊँ अथवा मूल्यांकन कराने का ढंग सीख सकूँ ॥ १ ॥ हे मेरे सुन्दर प्रभुजी! मैं तुम्हारे गुणों का भेद नहीं पा सकता (कि वे कितने हैं?) तुम पानी में परिव्याप्त हो, धरती के भीतर व्याप्त हो। तुम आकाश में सर्वत्र मौजूद हो और तुम आप ही सब जीवों में समाए हुए हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु! यदि मेरा मन तराजू बन जाए,

यदि मेरा हृदय तोलनेवाला बाँट बन जाए, यदि मैं तुम्हारी सेवा कर सकूँ, तुम्हारा स्मरण कर सकूँ (यदि यह सेवा, नाम-स्मरण मेरे लिए) सर्राफ़ बन जाएँ (तो भी गुणों का अन्त नहीं पा सकूँगा, लेकिन) इन तरीकों से मैं अपने हृदय को तुम्हारे चरणों में लगाए रख सकूँगा। हे भाई! मैं अपने हृदय में उस प्रभु-पति को स्थिर कर जाँच कर सकूँगा॥ २॥ वह प्रभु आप ही तराजू है, आप ही बाँट है, आप ही तराजू की ऊपरी रस्सी है (जिसे पकड़कर तोला जाता है) और वह आप ही तोलनेवाला भी है। वह स्वयं सब जीवों की देखभाल करता है, सबके मन की समझता है, आप ही जीव-रूप होकर जगत में नाम-व्यापार कर रहा है॥ ३॥ अज्ञानी (नानक) परमात्मा के गुणों का मूल्यांकन नहीं कर सकता, क्योंकि इसकी संगति सदा उस मन के साथ है जो माया-मोह में अन्धा है, जो निम्न जाति का है, जो सदा भटकता रहता है, तनिक भी एक स्थान पर रह नहीं सकता॥ ४॥

॥ रागु बिलावलु महला १ चउपदे घरु १ ॥

तू सुलतानु कहा हउ मीआ तेरी कवन वडाई।
जो तू देहि सु कहा सुआमी मै मूरख कहणु न जाई॥१॥
तेरे गुण गावा देहि बुझाई।
जैसे सच महि रहउ रजाई॥ १ ॥ रहाउ॥
जो किछु होआ सभु किछु तुझ ते तेरी सभ असनाई।
तेरा अंतु न जाणा मेरे साहिब मै अंधुले किआ चतुराई॥२॥
किआ हउ कथी कथे कथि देखा मै अकथु न कथना जाई।
जो तुधु भावै सोई आखा तिलु तेरी वडिआई॥ ३॥
एते कूकर हउ बेगाना भउका इसु तन ताई।
भगति हीणु नानकु जे होइगा ता खसमै नाउ न जाई॥४॥

हे परमेश्वर! तुम तो सबके बादशाह हो, इसलिए यदि मैं तुम्हें मियाँ (सम्माननीय) कह भी दूँ, तो इसमें तुम्हारी क्या बड़ाई है? हे मालिक! तुम जैसा भी नाम-कथन करने की शक्ति देते हो, मैं वैसा ही कथन कर लेता हूँ; अन्यथा मैं मूर्ख जीव क्या कह सकता हूँ?॥ १ ॥ मैं तुम्हारे गुण गा सकूँ, मुझे ऐसी समझ (बुद्धि) प्रदान करो। हे रज़ा के स्वामी! ऐसी कृपा करो कि मैं तुम्हारे सत्यस्वरूप में स्थित रह सकूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह जो कुछ भी (जड़-चेतन) विश्व-प्रपंच निर्मित है, सब कुछ तुमसे ही हुआ है, और यह सब तुम्हारी ही प्रीति से हुआ है। हे मालिक! मैं जीव तुम्हारा अन्त क्या पा सकता हूँ। मुझ अन्धे में क्या सामर्थ्य है कि तुम्हारा अन्त प्राप्त कर सकूँ॥ २ ॥ मैं तुम्हारे गुण क्या वर्णन कर सकता हूँ; क्योंकि वर्णन कर-करके भी जब देखता हूँ तो भी यही कहना पड़ता है कि तुम अकथ हो, तुम्हारा गुणगान मुझसे अकथनीय है अर्थात् मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं कि तुम्हारे गुण वर्णन कर सकूँ। हे ईश्वर! मैं तुम्हारी तिल भर भी वही बड़ाई (गुण आदि) करने में अपने को समर्थ पाता हूँ, जो तुम्हें भाती है॥ ३ ॥ काम-क्रोधादि कुत्तों के बीच फँसा हुआ मैं इस शरीर की मुक्ति के लिए पुकार रहा हूँ। हे भगवन्! (गुरु नानक कहते हैं,) यदि मैं भक्ति से हीन भी होऊँ तो भी मैं तुम्हारा ही रहूँगा, तब भी तुम्हारा नाम मेरे साथ रहेगा अर्थात् मुझे तुम्हारा ही दास कहा जाएगा॥ ४ ॥

॥ बिलावलु महला १ ॥

मनु मंदरु तनु वेस कलंदरु घट ही तीरथि नावा।
एकु सबदु मैरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा॥ १ ॥
मनु बेधिआ दइआल सेती मेरी माई।
कउणु जाणै पीर पराई।
हम नाही चिंत पराई॥ १ ॥ रहाउ॥

अगम अगोचर अलख अपारा चिंता करहु हमारी।
जलि थलि महीअलि भरिपुरि
लीणा घटि घटि जोति तुम्हारी॥ २॥
सिख मति सभ बुधि तुम्हारी मंदिर छावा तेरे।
तुझ बिनु अवरु न जाणा मेरे साहिबा
गुण गावा नित तेरे॥ ३॥
जीअ जंत सभि सरणि तुम्हारी सरब चिंत तुधु पासे।
जो तुधु भावै सोई चंगा इक नानक की अरदासे॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ७९५)

मेरा मन ही प्रभु का मन्दिर है और मेरा शरीर क़लंदर का वेश धारण किए हुए है, मैं हृदय-तीर्थ में ही स्नान करता हूँ। केवल एक शब्द 'ब्रह्म' ही मेरे प्राणों में निवास करता है, इसलिए मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा अर्थात् मुक्त हो जाऊँगा॥ १॥ हे माँ! मेरा मन उस दयालु परमेश्वर से जुड़ (बिंध) चुका है। उस परमेश्वर के अतिरिक्त पर-पीड़ा को कौन समझ सकता है। इसीलिए हम किसी अन्य (देवी-देव) के सम्बन्ध में सोचते ही नहीं॥ १॥ रहाउ॥ हे अगम, अगोचर, अलख, अपार परमेश्वर! तुम्हीं हमारी चिन्ता करनेवाले हो। जल में, थल में, पृथ्वी-आकाश में सर्वत्र तुम्हीं व्याप्त हो और घट-घट में तुम्हारा ही प्रकाश है॥ २॥ समस्त जीवों को समझ-बूझ, बुद्धि तुम्हारी ही प्रदान की हुई है, सब जीवों के शरीर में तुम्हारा ही निवास है। हे मालिक! तुम्हारे अतिरिक्त मैं अन्य किसी को नहीं जानता, मैं तो तुम्हारे ही गुणगान करता हूँ॥ ३॥ सब जीव-जन्तु तुम्हारी ही शरण हैं और तुम्हें ही सबकी चिन्ता है। (गुरु) नानक की यही प्रार्थना है कि जो तुम्हें अच्छा लगे, उसमें ही मेरी रुचि रहे अर्थात् तुम्हारी रज़ा के अनुकूल चलता रहूँ॥ ४॥

कुछ अन्य शबद

॥ सिरीरागु ॥

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा।
कनक कटिक जल तरंग जैसा॥ १ ॥
जउपै हम न पाप करंता अहे अनंता।
पतितपावन नामु कैसे हुंता ॥ १ ॥ रहाउ ॥
तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी।
प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी ॥ २ ॥
सरीरु आराधै मोकउ बीचारु देहू।
रविदास समदल समझावै कोऊ॥ ३ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९३)

हे परमात्मा तुम में और मुझ में अन्तर ही क्या? (मुझ में तुम्हारा ही अंश है—तुम समष्टि हो और मैं व्यष्टि, किन्तु तत्त्व-भेद हममें कुछ नहीं।) यदि दृश्य स्तर पर कोई अन्तर दीखता भी है तो वह स्वर्ण और आभूषण अथवा जल और तरंग जैसा है (जैसे सोने के आभूषण भी सोना ही हैं, लहरें जल की भिन्न रूप होते भी जल हैं, वैसे ही जीव और ब्रह्म है) ॥ १ ॥ हे अनन्तर भगवन्, यदि हम लोग, सांसारिक प्राणी पाप न करते, तो तुम पतित-पावन का पद क्योंकर धारण कर सकते?॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे अन्तर्यामी परमेश्वर, यदि तुम अपने को स्वामी और हमें दास मानकर भेद स्थापित करना चाहते हो, तो वह भी सम्भव नहीं। क्योंकि स्वामी से दास जाने जाते हैं और दासों से स्वामी, अर्थात् ये दोनों शब्द अन्योन्याश्रित हैं। दास-विहीन स्वामी की कोई सत्ता नहीं और स्वामी की अनुपस्थिति में कोई दास नहीं होता॥ २ ॥ हे परमात्मा मुझे शक्ति दो कि जब तक शरीर बना रहे, मैं तुम्हारी आराधना में मग्न

रहूँ। भक्त रविदास जी कहते हैं कि मुझे ऐसे सतिगुरु की शरण दो, जो मुझे समस्त जीवों के बीच परम-सत्य ईश्वर का ज्ञान दे सके॥ ३॥

॥ माझ महला ५॥

सभ किछु घर महि बाहरि नाही।
बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही।
गुरपरसादी जिनी अंतरि पाइआ
सो अंतरि बाहरि सुहेला जीउ॥ १॥
झिमि झिमि वरसै अंम्रित धारा।
मनु पीवै सुनि सबदु बीचारा।
अनद बिनोद करे दिन राती
सदा सदा हरि केला जीउ॥ २॥
जनम जनम का विछुड़िआ मिलिआ।
साध क्रिपा ते सूका हरिआ।
सुमति पाए नामु धिआए
गुरमुखि होए मेला जीउ॥ ३॥
जलतरंगु जिउ जलहि समाइआ।
तिउ जोती संगि जोति मिलाइआ।
कहु नानक भ्रम कटे किवाड़ा
बहुड़ि न होईऐ जउला जीउ॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १०२)

हे परमात्मा! सब कुछ अर्थात् सब गुणों के सहित तुम भीतर अन्तःकरण में हो, बाहर नहीं हो। जो पुरुष भ्रमवश भूले हैं वे बाहर ढूँढ़ते हैं। जिन्होंने सतिगुरु की कृपावश तुझे हृदय में पाया है वे भीतर

और बाहर सुखी है॥ १॥ सतिगुरु-रूपी बादल से नाम-रूपी अमृत रिम-झिम बरसते हैं, उस उपदेश को सुनकर अर्थात् विवेक-युक्त विचार को परखकर सेवक का मन पान करता है, अर्थात् नाम धारण करता है। इसीलिए रात-दिन मन, वचन, कर्म से हरि के संग विलास कर रहा है॥ २॥ हे वाहिगुरु! तू जन्म-जन्मान्तरों का बिछुड़ा हुआ मिला है। सन्तों की कृपा से सूखा हुआ मन हरा हुआ है। गुरमुखों के साथ मिलाप होने से सुमति पाकर तेरे नाम का स्मरण किया है॥ ३॥ जैसे जल की तरंग जल के बीच समाहित है, उसी प्रकार है ज्योति-स्वरूप परमेश्वर! तूने जीव की ज्योति को अपने भीतर समाहित किया है। नानक कहते हैं कि हे परमात्मा! जब भ्रम-रूपी किवाड़ कट जाते हैं, तब पुनः तुझसे वियुक्त नहीं हुआ जाता॥ ४॥

॥ माझ महला ५॥

तूं मेरा पिता तूं है मेरा माता।
तूं मेरा बंधपु तूं मेरा भ्राता।
तूं मेरा राखा सभनी थाई
ता भउ केहा काड़ा जीउ॥ १॥
तुमरी क्रिपा ते तुधु पछाणा।
तूं मेरी ओट तूं है मेरा माणा।
तुझ बिनु दूजा अवरु न कोई
सभु तेरा खेलु अखाड़ा जीउ॥ २॥
जीअ जंत सभि तुधु उपाए।
जितु जितु भाणा तितु तितु लाए।
सभ किछु कीता तेरा होवै
नाही किछु असाड़ा जीउ॥ ३॥

नामु धिआइ महा सुखु पाइआ।
हरिगुण गाइ मेरा मनु सीतलाइआ।
गुरि पूरै वजी वाधाई
नानक जिता बिखाड़ा जीउ॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १०३)

तू ही मेरा पिता है, तू ही मेरी माता है। तू ही मेरा सम्बन्धी है और तू मेरा भाई है। जब तू सब स्थानों पर मेरा रक्षक है, तब मुझे किसी का भय और दुःख कैसे होगा?॥ १॥ तेरी कृपा से ही मैंने तुझे पहचाना है, इसलिए तू ही मेरी ओट है और तू ही मेरा मान है। तुझसे अलग कोई दूसरा नहीं है, यह सम्पूर्ण जगत तेरा खेलने का अखाड़ा है॥ २॥ जीव और जन्तु सब तूने उत्पन्न किए हैं। जिस-जिस कार्य में जीवों को तूने लगाना चाहा है—उसी-उसी में लगाए हैं। सब कुछ तेरा किया हुआ है। हमारा किया कुछ नहीं है॥ ३॥ तेरे नाम को स्मरण कर मैंने महासुख पाया है। हे हरि! तेरे गुण गाकर मेरा मन शीतल हो गया है। हे नानक! पूर्णगुरु द्वारा प्रसन्नता प्रकट हुई है, अर्थात् आत्मानन्द की प्राप्ति हुई है और जिससे संसार-रूपी विषम अखाड़ा जीत लिया है॥ ४॥

[प्रस्तुत अंश में 'आत्मनिवेदन' भक्ति के प्रायोगिक रूप का प्रदर्शन किया है और अपना सब कुछ 'वाहिगुरु' को स्थापित किया गया है।]

॥ माझ महला ५ ॥

मनु तनु तेरा धनु भी तेरा।
तूं ठाकुरु सुआमी प्रभु मेरा।
जीउ पिंडु सभु रासि तुमारी
तेरा जोरु गोपाला जीउ॥ १॥

सदा सदा तूं है सुखदाई।
निवि निवि लागा तेरी पाई।
कार कमावा जे तुधु भावा
जा तूं देहि दइआला जीउ॥ २॥
प्रभ तुम ते लहणा तूं मेरा गहणा।
जो तूं देहि सोई सुखु सहणा।
जिथै रखहि बैकुंठु तिथाई
तूं सभना के प्रतिपाला जीउ॥ ३॥
सिमरि सिमरि नानक सुखु पाइआ।
आठ पहर तेरे गुण गाइआ।
सगल मनोरथ पूरन होए
कदे न होइ दुखाला जीउ॥४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १०६)

मेरा मन और तन तेरा है, धन भी तेरा है। हे ठाकुर, तू मेरा समर्थ स्वामी है। हे गोपाल! जीव की देह सब तुम्हारी ही पूँजी है और मुझे तेरा ही बल है॥ १॥ तू ही सर्वदा सुखदाता है और मैं विनम्र होकर तेरे चरणों को स्पर्श करता हूँ। हे दयालु! मैं वही कार्य करूँ जो तू दे और जो तुझे भावे॥ २॥ हे प्रभु! मुझे तुझसे लाभ है और तू मेरा गहना है, अर्थात् मेरी शोभा में वृद्धि करनेवाला है। जो सुख-दुःख तू देता है वह मैं प्रसन्न होकर सहन करता हूँ। हे भगवान! जहाँ तू रखे वहीं बैकुण्ठ है। तू सबके प्राणों की रक्षा करता है॥ ३॥ नानक जी कहते हैं कि हमने तेरा नाम-स्मरण किया है और आठ प्रहर तेरे गुणों का गायन किया है, इसीलिए सुख पाया है। तेरे गुण-गान से सकल मनोरथ पूर्ण हुए हैं तथा हमारा चित्त कभी भी दुखी नहीं हुआ॥ ४॥

[अब गुरुजी जीव की दस दशाएँ बतलाकर जीव को अविनाशी सिद्ध करते हैं।]

॥ महला १ ॥

पहिलै पिआरि लगा थण दुधि।
दूजै माइ बाप की सुधि।
तीजै भया भाभी बेब।
चउथै पिआरि उपंनी खेड।
पंजवै खाण पीअण की धातु।
छिवै कामु न पुछै जाति।
सतवै संजि कीआ घर वासु।
अठवै क्रोधु होआ तन नासु।
नावै धउले उभे साह।
दसवै दधा होआ सुआह।
गए सिगीत पुकारी धाह।
उडिआ हंसु दसाए राह।
आइआ गइआ मुइआ नाउ।
पिछै पतलि सदिहु काव।
नानक मनमुखि अंधु पिआरु।
बाझु गुरु डुबा संसारु॥ २॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३७)

जन्मोपरान्त सर्वप्रथम माता के दूध में जीव का मन लगा है। दूसरे माता-पिता की सुधि आई और तीसरे भाभी, बहन की पहचान हुई। चौथी यह दशा हुई कि खेलने में प्रीति उत्पन्न हुई। पाँचवें खाने-

पीने में ललक जगी और छठी अवस्था में कामवश स्त्रियों की जात-पात नहीं पूछता। सातवें, पदार्थों का संग्रह कर घर में वास किया और आठवें, बुढ़ापे में क्रोध अधिक बढ़ गया और शरीर क्षीण हो गया। नौवीं अवस्था में केश श्वेत हो गये और वह उखड़े हुए श्वास लेने लगा, जिसे लोग लम्बे साँस कहते हैं। दसवीं दशा में मृत शरीर जलकर राख हो गया। जो जलाने के लिए साथ गए थे, उन्होंने अत्यन्त रोदन किया और देह से अलग होने पर जीव यमदूतों से मार्ग को पूछता है। जो जीव इस शरीर को प्राप्त हुआ था, वह इसे त्यागकर अन्य स्वरूप को पा गया है। वह केवल नाममात्र को मृत कहा गया है। मरणोपरान्त सम्बन्धी व्यक्ति श्राद्धों के दिनों में पत्तल परोसकर कौवों को बुलाते हैं। नानक कहते हैं, कि मनमुख अज्ञानी जीव हैं और उनका अन्धविश्वासों में लगाव है। सतिगुरु के उपदेश बिना जीव संसार में डूबा हुआ है॥ २॥

॥ महला १ ॥

दस बालतणि बीस रवणि तीसा का सुंदरु कहावै।
चालीसी पुरु होइ पचासी पगु खिसै सठी के बोढेपा आवै।
सतरि का मतिहीणु असीहां का विउहारु न पावै।
नवै का सिहजासणी मूलि न जाणै अपबलु।
ढंढोलिमु ढूढिमु डिठु मै नानक जगु धूए का धवलहरु॥३॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३८)

दस वर्ष पर्यन्त बाल अवस्था होती है, दस से लेकर बीस वर्ष तक खेलने-कूदने की अवस्था होती है। तीस वर्ष की अवस्था में जीव सुन्दर कहा जाता है। चालीस वर्ष में पूर्ण बल हो जाता है, पचास वर्ष तक बल का पैर खिसक जाता है और साठवें तक बुढ़ापा आ जाता है। सत्तर वर्ष में जीव बुद्धिहीन हो जाता है और अस्सी वर्षीय जीव

व्यवहार नहीं कर पाता। नब्बे वर्षीय जीव घूमने-फिरने योग्य नहीं रहता और जीव का मूल जो परमेश्वर है, वह उसे भी नहीं जानता है तथा अपना बल तब भी दिखाता है। नानक कहते हैं, मैंने (वेद-शास्त्रों को भी पढ़ा है और) प्रत्यक्ष देख लिया है कि जगत धूएँ का घर है॥३॥

॥ महला १ ॥

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ।
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ।
गली भिसति न जाईऐ छुटै सचु कमाइ।
मारण पाहि हराम महि होइ हलालु न जाइ।
नानक गली कूड़ीई कूड़ो पलै पाइ॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १४१)

॥ महला १ ॥ गुरुजी कहते हैं, पराया हक़ खाना मुसलमान के लिए सूअर के समान और हिन्दू को गाय के समान है। हिन्दुओं के गुरु और मुसलमानों के पीर तभी रक्षा करने की स्वीकृति देंगे, यदि हराम न खाया जाय। बहुत बातें बनाने से जीव स्वर्ग नहीं जाता। सच्चा नाम कमाने से जीव नरक की आग से छुटता है। यदि हराम के मांस में मसाले डाले जाएँ तो वह हलाल नहीं हो जाता, क्योंकि रिश्वत का धन कुछ मात्रा में खैरात (दान करने) से शुद्ध नहीं बन जाता। नानक कहते हैं, इन झूठी बातों से झूठ ही पल्ले में पड़ता है॥ २ ॥

॥ महला १ ॥

पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ।
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ।
चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ।

करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ।
नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ॥ ३॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १४१)

पाँच नमाज़ें हैं और पाँच ही वक्त हैं तथा पाँचों के पाँच ही नाम हैं। (मुसलमानों के अनुसार नमाज़े सुबह, नमाज़े पेशीन, नमाज़े दीगर, नमाज़े शाम, नमाज़े खुफतन—पाँच नमाज़े हैं) गुरुजी ने भी पाँच नमाज़ें गिनवाई हैं, पहली सत्य की, दूसरी हलाल की, तीसरी खुदा के नाम पर ख़ैर देने की, चौथी मन की नीयत अर्थात् वृत्तियों को मर्यादा के अनुकूल रखना और पाँचवीं नमाज़ परमेश्वर की स्तुति करना। बन्दगी में कार्यरत रहना ही शुभ कर्म है, यही शुभ कर्मरूपी कलमा पढ़कर अपने आपको मुसलमान कहलाओ। भाव यह है कि शुभ करनी के बिना वास्तविक मुसलमान कहलाना भूल है। गुरुजी कहते हैं, जितने झूठे हैं, उनकी प्रतिष्ठा भी झूठी है॥ ३॥

॥ गउड़ी चेती महला १ ॥

कत की माई बापु कत केरा किदू थावहु हम आए।
अगनि बिंब जल भीतरि निपजे काहे कंमि उपाए॥ १॥
मेरे साहिबा कउणु जाणै गुण तेरे।
कहे न जानी अउगण मेरे॥ १॥ रहाउ॥
केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए।
केते नाग कुली महि आए केते पंख उड़ाए॥ २॥
हट पटण बिज मंदर भंनै करि चोरी घरि आवै।
अगहु देखै पिछहु देखै तुझ ते कहा छपावै॥ ३॥
तट तीरथ हम नव खंड देखे हट पटण बाजारा।

* [नमाज़ के सम्बन्ध में गुरुजी की धारणा बिल्कुल अलग है।]

कि तू तो) हमारे हृदय में ही बसता है ॥ ४ ॥ (हे मेरे साहिब!) जैसे (अतुलित) पानी से समुद्र भरा हुआ है, उसी प्रकार हम जीवों के अनगिनत अवगुण हैं। (हम इन्हें धोने में असमर्थ हैं), तू आप ही दया कर, कृपा कर। तू तो डूबते पत्थरों को तार सकता है ॥ ५ ॥ (हे मेरे साहिब!) मेरी देह आग के समान तप रही है, मेरे भीतर तृष्णा की छुरी चल रही है। नानक प्रार्थना करता है—जो मनुष्य परमात्मा की रज़ा को समझ लेता है, उसके भीतर रात-दिन आत्मिक आनन्द बना रहता है ॥ ६ ॥

॥ गउड़ी बैरागणि महला १ ॥

रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ।
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ॥ १ ॥
नामु न जानिआ राम का।
मूड़े फिरि पाछै पछुताहि रे॥ १ ॥ रहाउ ॥
अनता धनु धरणी धरे अनत न चाहिआ जाइ।
अनत कउ चाहन जो गए से आए अनत गवाइ॥ २ ॥
आपण लीआ जे मिलै ता सभु को भागठु होइ।
करमा उपरि निबड़ै जे लोचै सभु कोइ॥ ३ ॥
नानक करणा जिनि कीआ सोई सार करेइ।
हुकमु न जापी खसम का किसै वडाई देइ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १५६)

(हे मूर्ख!) तू रात्रि सोकर गुजारता जा रहा है और दिन खा-खाकर व्यर्थ बिताता जाता है, तेरा यह मनुष्य-जन्म हीरे जैसा कीमती है, पर (स्मरण के बिना) कौड़ी के भाव जा रहा है ॥ १ ॥ हे मूर्ख! तूने परमात्मा के नाम के साथ गहरा रिश्ता नहीं बनाया, (यदि मनुष्य-जीवन स्मरण के बिना बीत गया, तो) फिर समय बीत जाने पर पश्चाताप करेगा ॥ १ ॥

रहाउ ॥ जो मनुष्य अनन्त धन ही इकट्ठा करता रहता है, उसके भीतर अनन्त प्रभु के स्मरण की इच्छा पैदा नहीं हो सकती। जो भी अनन्त धन की लालसा में दौड़े फिरते हैं, वे अनन्त प्रभु के नाम-धन को गवाँ लेते हैं ॥ २ ॥ (लेकिन) यदि केवलमात्र चाहने से नाम-धन मिलता हो तो हरेक जीव नाम-धन के खजानों का मालिक बन जाए। चाहे जैसे हरेक मनुष्य (केवल मौखिक रूप में) नाम-धन की लालसा में रहता है, पर यह फैसला हरेक व्यक्ति के आचरण पर होता है ॥ ३ ॥ हे नानक! (प्रयास करते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह फलीभूत होगा अथवा नहीं), जिस परमात्मा ने यह जगत रचा है, वह हरेक जीव की सँभाल करता है, (प्रयास के फल के सम्बन्ध में) उस प्रभु-पति का हुक्म समझा नहीं जा सकता (यह पता नहीं लग सकता) कि किस मनुष्य को वह, (नाम जपने की) महानता दे देता है ॥ ४ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

गुरि मिलिऐ हरि मेला होई।
आपे मेलि मिलावै सोई।
मेरा प्रभु सभ बिधि आपे जाणै।
हुकमे मेले सबदि पछाणै ॥ १ ॥
सतिगुर कै भइ भ्रमु भउ जाइ।
भै राचै सच रंगि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
गुरि मिलिऐ हरि मनि वसै सुभाइ।
मेरा प्रभु भारा कीमति नही पाइ।
सबदि सालाहै अंतु न पारावारु।
मेरा प्रभु बखसे बखसणहारु ॥ २ ॥

गुरि मिलिऐ सभ मति बुधि होइ।
मनि निरमलि वसै सचु सोइ।
साचि वसिऐ साची सभ कार।
ऊतम करणी सबद बीचार॥ ३॥
गुर ते साची सेवा होइ।
गुरमुखि नामु पछाणै कोइ।
जीवै दाता देवणहारु।
नानक हरिनामे लगै पिआरु॥४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १५७)

यदि गुरु मिल जाए तो परमात्मा के साथ मिलाप हो जाता है, वह परमात्मा आप ही (जीव को गुरु के साथ) मिलाकर (अपने चरणों में) मिला लेता है। प्यारा प्रभु आप ही (जीवों के अपने चरणों में मिलाने के) सारे तरीके जानता है। (जिस मनुष्य को परमात्मा अपने) हुक्म-अनुसार (गुरु के साथ) मिलाता है, वह मनुष्य गुरु के उपदेश द्वारा परमात्मा के साथ मेल कर लेता है॥ १॥ गुरु के भय-आदर में रहने से (दुनियावी) दुविधा तथा भय दूर हो जाता है। जो मनुष्य (गुरु के) भय-आदर में प्रसन्न रहता है, वह सदा सत्यस्वरूप परमात्मा के रंग में समाया रहता है॥ १॥ रहाउ॥ यदि गुरु मिल जाए तो परमात्मा (भी अपनी) प्रेम-रुचि के कारण (मनुष्य के) अपने मन में आ बसता है। प्यारा प्रभु अनन्त-गुणों का स्वामी है, कोई जीव उसका मूल्यांकन नहीं कर सकता। जो मनुष्य गुरु के उपदेश में जुड़कर उस परमात्मा की गुणस्तुति करता है, जिसके गुणों का रहस्य नहीं पाया जा सकता, जिसके अस्तित्व का ओर-छोर नहीं मिल सकता, क्षमा करनेवाला प्रभु (उसके समस्त दोष) क्षमा कर लेता है॥ २॥ यदि गुरु मिल जाए (तो मनुष्य के भीतर) सद्बुद्धि पैदा हो जाती है, (मनुष्य के) पवित्र मन में वह सत्यस्वरूप प्रभु प्रकट

हो जाता है। यदि सत्यस्वरूप प्रभु (जीव के मन में) आ बसे तो सत्यस्वरूप परमात्मा की गुणस्तुति उसका नित्यप्रति का काम–काज हो जाता है, उसके कर्म श्रेष्ठ हो जाते हैं, गुरु के शब्द का विचार उसके मन में टिका रहता है ॥ ३ ॥ सत्यस्वरूप प्रभु की सेवा–भक्ति गुरु से ही मिलती है, गुरु के सम्मुख रहकर ही कोई मनुष्य प्रभु के नाम से गहरे सम्बन्ध बनाता है। हे नानक! जिस मनुष्य का प्रेम हरि के नाम से परिपक्व हो जाता है, (उसे विश्वास हो जाता है कि सब देन) देने में समर्थ दाता–प्रभु (सदा उसके सिर पर) जीता–जागता स्थित है ॥ ४ ॥

॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥

निरगुण कथा कथा है हरि की।
भजु मिलि साधू संगति जन की।
तरु भउजलु अकथ कथा सुनि हरि की १ ॥
गोबिंद सतसंगति मेलाइ।
हरिरसु रसना रामगुन गाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
जो जन धिआवहि हरि हरिनामा।
तिन दासनिदास करहु हम रामा।
जन की सेवा ऊतम कामा ॥ २ ॥
जो हरि की हरि कथा सुणावै।
सो जनु हमरै मनि चिति भावै।
जन पग रेणु वडभागी पावै ॥ ३ ॥
संत जना सिउ प्रीति बनि आई।
जिन कउ लिखतु लिखिआ धुरि पाई।
ते जन नानक नामि समाई ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १६४)

परमात्मा की गुणस्तुति की बातें तीनों गुंणों से ऊपर हैं। हे भाई! साधु जनों की संगति में मिलकर (उस परमात्मा का) भजन किया कर, उस परमात्मा की गुणस्तुति सुना कर, जिसके गुण अकथनीय हैं (और, गुणस्तुति के प्रभाव से) संसार-समुद्र से पार उतर॥ १ ॥ हे गोविन्द! मुझे सत्संगति का सान्निध्य दे (ताकि मेरी) जिह्वा हरि-नाम का स्वाद (लेकर) हरिगुण गाती रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे हरि! जो मनुष्य तेरा नाम-स्मरण करते हैं, मुझे उनके दासों का दास बना। (तेरे) दासों की सेवा (मनुष्य जीवन में सबसे) श्रेष्ठ काम है। (हे भाई!) जो मनुष्य (मुझे) परमात्मा (की गुणस्तुति) की बातें सुनाता है, वह मुझे प्यारा लगता है। (परमात्मा के) भक्त की चरणधूलि कोई सौभाग्यशाली (ही) प्राप्त करता है ॥ ३ ॥ हे नानक! (प्रभु के) संतजनों के साथ (उन मनुष्यों की प्रीति निभती है, जिनके माथे पर परमात्मा ने अपने दरबार से ही (अपनी कृपा का) लेख लिख दिया हो, वे मनुष्य परमात्मा के नाम में (सदा के लिए) लीनता प्राप्त कर लेते हैं ॥ ४ ॥

॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥

चोजी मेरे गोविंदा चोजी मेरे पिआरिआ
हरिप्रभु मेरा चोजी जीउ।
हरि आपे कान्हु उपाइदा मेरे गोविदा
हरि आपे गोपी खोजी जीउ।
हरि आपे सभ घट भोगदा मेरे गोविंदा
आपे रसीआ भोगी जीउ।
हरि सुजाणु न भुलई मेरे गोविंदा
आपे सतिगुरु जोगी जीउ॥ १ ॥
आपे जगतु उपाइदा मेरे गोविंदा
हरि आपि खेलै बहु रंगी जीउ।

इकना भोग भोगाइदा मेरे गोविंदा
इकि नगन फिरहि नंग नंगी जीउ।
आपे जगतु उपाइदा मेरे गोविंदा
हरि दानु देवै सभ मंगी जीउ।
भगता नामु आधारु है मेरे गोविंदा
हरि कथा मंगहि हरि चंगी जीउ ॥२॥
हरि आपे भगति कराइदा मेरे गोविंदा
हरि भगता लोच मनि पूरी जीउ।
आपे जलि थलि वरतदा मेरे गोविंदा
रवि रहिआ नही दूरी जीउ।
हरि अंतरि बाहरि आपि है मेरे गोविंदा
हरि आपि रहिआ भरपूरी जीउ।
हरि आतमरामु पसारिआ मेरे गोविंदा
हरि वेखै आपि हदूरी जीउ॥ ३॥
हरि अंतरि वाजा पउणु है मेरे गोविंदा
हरि आपि वजाए तिउ वाजै जीउ।
हरि अंतरि नामु निधानु है मेरे गोविंदा
गुरसबदी हरिप्रभु गाजै जीउ।
आपे सरणि पवाइदा मेरे गोविंदा
हरि भगत जना राखु लाजै जीउ।
वडभागी मिलु संगती मेरे गोविंदा
जन नानक नामि सिधि काजै जीउ॥ ४॥

हे मेरे प्यारे गोविन्दा! तू अपनी इच्छा के काम करनेवाला मेरा हरि-प्रभु है। हरि आप ही कृष्ण को पैदा करनेवाला है, हरि आप ही कृष्ण को खोजनेवाली ग्वालिनी है। समस्त शरीरों में व्यापक होकर हरि आप ही सब पदार्थों को भोगता है, हरि आप ही सब माया-सम्बन्धी पदार्थों का रस लेनेवाला है, आप ही भोगनेवाला है। (पर) हरि बहुत चतुर है, (सब पदार्थों के भोगनेवाला होकर भी) भूलता नहीं, वह हरि आप ही भोगों से निर्लिप्त सतिगुरु है॥ १॥ हरि-प्रभु आप ही जगत् पैदा करता है, हरि आप ही अनेक रंगों में खेल रहा है। हरि आप ही अनेक जीवों से सारे पदार्थों के रस लिवानेवाला है, अनेकों जीव ऐसे हैं जो नंगे फिरते हैं (जिनके तन पर कपड़ा नहीं)। हरि आप ही सारे जगत् को पैदा करता है, सारी दुनिया उससे माँगती रहती है, वह सबको देन देता है। उसकी भक्ति करनेवाले व्यक्ति को उसके नाम का ही आसरा है, वे हरि से उसकी श्रेष्ठ गुण-स्तुति ही माँगते हैं॥ २॥ हरि आप ही (अपने भक्तों से) अपनी भक्ति कराता है, भक्तों के मन में (पैदा हुई भक्ति की) इच्छा हरि आप ही पूर्ण करता है। जल-थल सर्वत्र हरि आप ही बस रहा है, (सब जीवों में) व्यापक है (किसी जीव से वह हरि) दूर नहीं है। सब जीवों के भीतर तथा बाहर सर्वत्र हरि आप ही बसता है, हर स्थान पर हरि आप ही भरपूर है। सर्वव्यापक राम आप ही इस जगत्-प्रसार को प्रसारित कर रहा है, हरेक के साथ रहकर हरि आप ही सबकी सँभाल करता है॥ ३॥ सब जीवों के भीतर प्राणरूप होकर हरि आप ही बाजा (बज रहा है) जैसे वह हरेक जीव के भीतर हरि का नाम-भण्डार है, पर गुरु के उपदेश द्वारा ही हरि-प्रभु (जीव के भीतर) प्रकट होता है। हरि आप ही जीव को प्रेरित कर अपनी शरण में लाता है, हरि आप ही भक्तों की इज्जत का रक्षक बनता है। हे दास नानक! तू भी संगति में मिल (हरि-प्रभु का नाम जप और सौभाग्यशाली बन) नाम के प्रभाव से ही जीवन-मनोरथ की सफलता होती है॥ ४॥

॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥

कई जनम भए कीट पतंगा।
कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ।
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥ १ ॥
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ।
चिरंकाल इह देह संजरीआ॥ १ ॥रहाउ॥
कई जनम सैल गिरि करिआ।
कई जनम गरभ हिरि खरिआ।
कई जनम साख करि उपाइआ।
लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ॥ २ ॥
साध संगि भइओ जनमु परापति।
करि सेवा भजु हरि हरि गुरमति।
तिआगि मानु झूठु अभिमानु।
जीवत मरहि दरगह परवानु॥ ३ ॥
जो किछु होआ सु तुझ ते होगु।
अवरु न दूजा करणै जोगु।
ता मिलीऐ जा लैहि मिलाइ।
कहु नानक हरि हरि गुण गाइ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १७६)

(हे भाई!) तू कितने ही जन्मों में कीड़े, पतंगे बनता रहा, कितने ही जन्मों में हाथी, मछली, हिरन बनता रहा, कितने ही जन्मों में पक्षी और साँप बना, कितने ही में तुझे घोड़े, बैल के रूप में जोता गया॥ १ ॥ (हे भाई!) चिरकाल बाद तुझे यह शरीर मिला है, जगत् के मालिक प्रभु

को मिल, (मनुष्य जन्म में ही प्रभु को) मिलने का समय है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (हे भाई!) कितने ही जन्मों में तुझे पत्थर-चट्टान बनाया गया, कितने ही जन्मों में (तेरी माँ का) गर्भ ही गिरता रहा। कितने ही जन्मों में तुझे वृक्ष बनाकर पैदा किया गया और (इस प्रकार) चौरासी लाख योनियों में घुमाया गया ॥ २ ॥ (हे भाई! अब तुझे) मनुष्य जन्म मिला है, सत्संगति में (आकर) गुरु की शिक्षा लेकर (समाज की) सेवा कर और परमात्मा का भजन कर। अभिमान, झूठ और अहंकार छोड़ दे। तू (परमात्मा के) दरबार में (तब ही) स्वीकृत होगा यदि जीवन जीता हुआ ही आपाभाव से अलग रहेगा ॥ ३ ॥ हे नानक! (प्रभु के समक्ष प्रार्थना कर और (कह— हे प्रभु! तेरा स्मरण करने की जीव के भीतर क्या सामर्थ्य हो सकती है?) जो कुछ (जगत् में) होता है वह तेरे (हुक्म) से ही होता है। हे प्रभु! तुझे तब ही मिला जा सकता है यदि तू आप जीव को (अपने चरणों में) मिला ले, तब ही जीव हरि-गुण गा सकता है ॥ ४ ॥

॥ गउड़ी महला ५ ॥

थिरु घरि बैसहु हरिजन पिआरे।
सतिगुरि तुमरे काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥
दुसट दूत परमेसरि मारे।
जन की पैज रखी करतारे ॥ १ ॥
बादिसाह साह सभ वसि करि दीने।
अंम्रितनाम महा रस पीने ॥ २ ॥
निरभउ होइ भजहु भगवान।
साधसंगति मिलि कीनो दानु ॥ ३ ॥
सरणि परे प्रभ अंतरजामी।
नानक ओट पकरी प्रभ सुआमी ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २०१)

हे प्रिय भक्तजनो! अपनी आत्मा में स्थिर होकर बैठो और यह पूर्ण विश्वास बनाओ कि सतिगुरु हमारे सब काम सँवारता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (जो ईश्वर पर आस्था रखता है) परमेश्वर ने उसके सब दुश्मन समाप्त कर दिए हैं, कर्तार ने अपने सेवक की प्रतिष्ठा अवश्य रखी है ॥ १ ॥ (परमात्मा ने अपने सेवकों को) दुनिया के शाहों-बादशाहों की ओर से निश्चिन्त कर दिया है, परमेश्वर के सेवक आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-रस (सर्वश्रेष्ठ रस) पीते रहते हैं ॥ २ ॥ (हे भक्तजनो! परमात्मा ने तुम पर) नाम की कृपा की है, तुम सत्संगति में मिलकर, निर्भय होकर भगवान का नाम-स्मरण करते रहो ॥ ३ ॥ हे नानक! (प्रभु-द्वार पर प्रार्थना कर और कह—) हे अन्तर्यामी प्रभु! मैं तेरी शरणागत हूँ, मैंने तेरा आसरा लिया है, (मुझे अपने नाम की देन दे) ॥ ४ ॥

॥ गउड़ी २ महला ५ ॥

अउध घटै दिनसु रैना रे।
मन गुर मिलि काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥
करउ बेनंती सुनहु मेरे मीता संत टहल की बेला।
ईहा खाटि चलहु हरि लाहा आगै बसनु सुहेला ॥ १ ॥
इहु संसारु बिकारु संसे महि तरिओ ब्रहमगिआनी।
जिसहि जगाइ पीआए हरि रसु अकथ कथा तिनि जानी ॥ २ ॥
जा कउ आए सोई विहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा।
निजघरि महलु पावहु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा ॥ ३ ॥
अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे।
नानकु दासु इही सुखु मागै
मो कउ करि संतन की धूरे ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २०५)

हे भाई! (तेरी) उम्र दिन-रात करके बीत रही है। हे मन! (जिस कार्य के लिए तू जगत् में आया है, अपने उस) कार्य को गुरु से मिलकर पूर्ण कर॥ १ ॥ रहाउ॥ हे मेरे मित्र! सुन, मैं प्रार्थना करता हूँ (यह मनुष्य-जन्म) संतों की सेवा करने का समय है। यहाँ से हरि-नाम का लाभ प्राप्त करके चलो, परलोक में सहज वास प्राप्त होगा॥ १ ॥ (हे भाई!) यह जगत् विकार-रूप बना है। (जीव) चिन्ता में डूबे रहते हैं। जिस मनुष्य ने परमात्मा के साथ ऐक्य कर लिया है, वह (इस संसार-समुद्र से) पार उतर जाता है। जिस मनुष्य को (परमात्मा विकारों की निद्रा से) जगाता है, उसे अपना हरि-नाम रस पिलाता है। उस मनुष्य ने (मानो) फिर उस परमात्मा की गुणस्तुति से ऐक्य कर लिया जिसका पूर्ण-स्वरूप व्यक्त नहीं किया जा सकता॥ २ ॥ हे भाई! जिस (नाम-पदार्थ के खरीदने के लिए) (जगत् में) आए हो, वह सौदा खरीदो। गुरु की कृपा से ही परमात्मा का वास मन में हो सकता है। हे भाई! (गुरु की शरण लेकर) आत्मिक स्थिरता के आनन्द में टिककर अपने हृदय-घर में परमात्मा का ठिकाना खोजो। इस प्रकार दोबारा जन्म-मरण का चक्कर नहीं लगाना पड़ेगा॥ ३ ॥ हे अन्तर्यामी सर्वव्यापक कर्त्तार! मेरे मन की श्रद्धा पूर्ण कर। तेरा दास नानक तुझसे यही सुख माँगता है—मुझे संतजनों के चरणों की धूलि बना दे॥ ४ ॥

॥ गउड़ी महला ५ माझ॥

आउ हमारै राम पिआरे जीउ।
रैणि दिनसु सासि चितारे जीउ।
संत देउ संदेसा पै चरणारे जीउ।
तुधु बिनु कितु बिधि तरीऐ जीउ॥ १ ॥
संगि तुमारै मै करे अनंदा जीउ।
वणि तिणि त्रिभवणि सुख परमानंदा जीउ।

सेज सुहावी इहु मनु बिगसंदा जीउ।

पेखि दरसनु इहु सुखु लहीऐ जीउ॥ २॥

चरण पखारि करी नित सेवा जीउ।

पूजा अरचा बंदन देवा जीउ।

दासनि दासु नामु जपि लेवा जीउ।

बिनउ ठाकुर पहि कहीऐ जीउ॥ ३॥

इछ पुंनी मेरी मनु तनु हरिआ जीउ।

दरसन पेखत सभ दुख परहरिआ जीउ।

हरि हरि नामु जपे जपि तरिआ जीउ।

इहु अजरु नानक सुखु सहीऐ जीउ॥४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २१७)

हे मेरे प्यारे रामजी! मेरे हृदय-घर में आ बस। मैं रात-दिन हरेक श्वास के साथ तुझे स्मरण करता हूँ। संतजनों के चरण-स्पर्श कर (तेरी ओर) सन्देश भेजता हूँ। मैं तेरे बिना किसी प्रकार भी (संसार-समुद्र से) पार नहीं उतर सकता॥ १॥ (हे मेरे प्यारे रामजी!) तेरी संगति में रहकर मैं आनन्द प्राप्त करता हूँ। समस्त वनस्पति तथा तीनों भुवनों में (तेरे दर्शन से) परम आनन्द अनुभव करता हूँ। मेरी हृदय की सेज सुन्दर बन गई है, मेरा मन प्रफुल्लित हो गया है। तेरा दर्शन करके यह (आत्मिक) सुख मिलता है॥ २॥ मालिक प्रभु के पास मुझे यह प्रार्थना कहनी है—(हे मेरे रामजी! तेरे संतजनों के) चरण धोकर उनकी सेवा करता रहूँ, मैं तेरे दासों का दास होकर सदा तेरा नाम जपता रहूँ—यही मेरे लिए देवपूजा है, यही मेरे लिए देवताओं के समक्ष फूलों की भेंट है, और यही देवताओं को नमस्कार है॥ ३॥ (राम की कृपा से) मेरी (प्रभु के मिलाप की) इच्छा पूर्ण हो गई है, मेरा मन

आत्मिक जीवनवाला हो गया है, मेरा शरीर हरा हो गया है, (प्यारे राम का) दर्शन करते हुए मेरा सारा दुःख दूर हो गया है, प्यारे राम का नाम जपकर मैंने (संसार-समुद्र को) पार कर लिया है। हे नानक! (उस प्यारे-राम का दर्शन करने से) एक ऐसा सुख प्राप्त किया जाता है जो अक्षुण्ण होता है ॥ ४ ॥

॥ रागु गउड़ी महला ९ ॥

साधो मन का मानु तिआगउ।
काम क्रोधु संगति दुरजन की ता ते अहिनिसि भागउ ॥ १ ॥
सुखु दुखु दोनो सम करि जानै अउरु मानु अपमाना।
हरख सोग ते रहै अतीता तिनि जगि ततु पछाना ॥ १ ॥
उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पदु निरबाना।
जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना ॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २१९)

हे संतजनो! (अपने) मन का अहंकार छोड़ दो। काम और क्रोध कुसंगति के (तुल्य ही) है, इससे (भी) दिन-रात (हर समय) दूर रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (जो मनुष्य) सुख-दुःख दोनों को एक जैसा जानता है और आदर तथा अनादर दोनों को एक जैसा जानता है, जो खुशी और ग़मी (दुखमय स्थिति) दोनों से निर्लिप्त रहता है, उसने जगत् में जीवन का रहस्य समझ लिया ॥ १ ॥ (हे संतजनो! इस मनुष्य ने वास्तविकता प्राप्त कर ली है, जो) न किसी की खुशामद करता है न निंदा। (जहाँ कोई वासना स्पर्श नहीं कर सकती) वही मुक्ति का पद खोज पाता है। (पर) हे नानक! यह (जीवन) खेल कठिन है। कोई विरला मनुष्य गुरु की शरण लेकर इसे समझता है ॥ २ ॥

॥ गउड़ी महला ९ ॥

साधो रचना राम बनाई।
इकि बिनसै इक असथिरु मानै
अचरजु लखिओ न जाई॥ १ ॥ रहाउ॥
काम क्रोध मोह बसि प्रानी हरि मूरति बिसराई।
झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई॥ १ ॥
जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाई॥
जन नानक जगु जानिओ मिथिआ
रहिओ राम सरनाई॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २१९)

हे संतजनो! परमात्मा ने (जगत् की यह आश्चर्यजनक) रचना रच दी है (कि) एक मनुष्य (तो) मरता है (पर) दूसरा मनुष्य (उसे मरता देखकर अपने आपको) सदा टिके रहनेवाला समझता है। यह एक आश्चर्यजनक तमाशा है जो व्यक्त नहीं किया जा सकता है॥ १ ॥ रहाउ॥ मनुष्य काम, क्रोध और मोह के वशीभूत होता है और परमात्मा के अस्तित्व को भुलाए रखता है। यह शरीर सदा साथ रहनेवाला नहीं है लेकिन मनुष्य इसे सत्यस्वरूप समझता है; जैसे रात के वक्त स्वप्न (आता है और मनुष्य इसे सत्यस्वरूप समझता है)॥ १ ॥ (हे संतजनो!) जैसे बादल की छाया (सदा एक स्थान पर टिकी नहीं रहती, वैसे ही) जो कुछ दृष्टि-गोचर होता है, वह सब नष्ट हो जाता है। हे दास नानक! (जिस मनुष्य ने) जगत् को नाशमान् समझ लिया है, वह (सत्यस्वरूप) परमात्मा की शरण लिए रहता है॥ २ ॥

॥ गउड़ी महला १ ॥

ब्रहमै गरबु कीआ नही जानिआ।
बेद की बिपति पड़ी पछुतानिआ।
जह प्रभ सिमरे तही मनु मानिआ ॥ १ ॥

ऐसा गरबु बुरा संसारै।
जिसु गुरु मिलै तिसु गरबु निवारै ॥ १ ॥ रहाउ

बलि राजा माइआ अहंकारी।
जगन करै बहु भार अफारी।
बिनु गुर पूछे जाइ पइआरी ॥ २ ॥

हरीचंदु दानु करै जसु लेवै।
बिनु गुर अंतु न पाइ अभेवै।
आपि भुलाइ आपे मति देवै ॥ ३ ॥

दुरमति हरणाखसु दुराचारी।
प्रभु नाराइणु गरब प्रहारी।
प्रहलाद उधारे किरपा धारी ॥ ४ ॥

भूलो रावणु मुगधु अचेति।
लूटी लंका सीस समेति।
गरबि गइआ बिनु सतिगुर हेति ॥ ५ ॥

सहसबाहु मधुकीट महिखासा।
हरणाखसु ले नखहु बिधासा।
दैत संघारे बिनु भगति अभिआसा ॥ ६ ॥

जरासंधि कालजमुन संघारे।
रकतबीजु कालुनेमु बिदारे।

दैत संघारि संत निसतारे॥७॥

आपे सतिगुरु सबदु बीचारे।

दूजै भाई दैत संघारे।

गुरमुखि साचि भगति निसतारे॥ ८॥

बूडा दुरजोधनु पति खोई।

रामु न जानिआ करता सोई।

जन कउ दूखि पचै दुखु होई॥९॥

जनमेजै गुर सबदु न जानिआ।

किउ सुखु पावै भरमि भुलानिआ।

इकु तिलु भूले बहुरि पछुतानिआ॥१०॥

कंसु केसु चांडूरु न कोई।

रामु न चीनिआ अपनी पति खोई।

बिनु जगदीस न राखै कोई॥ ११॥

बिनु गुर गरबु न मेटिआ जाइ।

गुरमति धरमु धीरजु हरिनाइ।

नानक नामु मिलै गुण गाइ॥ १२॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २२४)

ब्रह्मा ने अहंकार किया (कि मैं इतना बड़ा हूँ, कमलनाभि से कैसे उत्पन्न हो सकता हूँ?) उसने परमात्मा की अनन्तता को नहीं समझा। जब उसका अभिमान तोड़ने के लिए उसके वेदों के चुराए जाने की विपत्ति उसपर आ पड़ी तो वह बहुत पछताया। जब उसने परमात्मा को स्मरण किया तब उसे विश्वास आया (कि परमात्मा ही सबसे महान् है)॥ १॥ जगत् में अहंकार एक ऐसा विकार है, जो बहुत नीच है। जिस (भाग्यशाली मनुष्य) को गुरु मिल जाता है (वह उसका

अहंकार दूर कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राजा बलि को माया का मान हो गया। उसने बड़े यज्ञ किए। अहंकार में बहुत अधिक अभिमानी हो गया। अपने गुरु की सम्मति लिए बिना (उसने ब्राह्मण-रूपधारी विष्णु को दान देना मान लिया और) पाताल में चला गया ॥ २ ॥ हरिश्चन्द्र (भी) दान करता था, दान की शोभा में मस्त (रहा); गुरु के बिना वह भी यह न समझ सका कि परमात्मा के गुणों का अन्त नहीं है, उसका भेद नहीं पाया जा सकता (उसकी सृष्टि में अगिनत दानी हैं), (पर जीव के क्या वश?) परमात्मा आप ही बुद्धि देता है ॥ ३ ॥ दुर्मति के कारण हिरण्यकशिपु दुराचारी हो गया। पर नारायण प्रभु आप ही (अहंकारियों का) अहंकार दूर करनेवाला है। उसने कृपा की और प्रहलाद की रक्षा की (हिरण्यकशिपु का अभिमान भंग किया) ॥ ४ ॥ मूर्ख रावण अज्ञानवश कुमार्गगामी हो गया। (परिणामस्वरूप) उसकी लंका लूटी गई और उसका सिर भी काटा गया। अहंकार के कारण, गुरु की शरण लिए बिना, अहंकार के मद में रावण बरबाद हुआ ॥ ५ ॥ सहस्त्रबाहु (को परशुराम ने मारा), मधु तथा कैटभ (को विष्णु ने मार दिया), महिषासुर (दुर्गा के हाथों मृत्यु को प्राप्त हुआ) हिरण्यकशिपु (को नृसिंह ने) नाखूनों से मार दिया। ये समस्त राक्षस प्रभु की भक्ति से खाली होने के कारण मारे गए ॥ ६ ॥ परमात्मा ने राक्षस मारकर संतों की रक्षा की। जरासंध तथा कालयवन (श्रीकृष्ण के द्वारा) नष्ट किये गए। रक्तबीज (दुर्गा के हाथों) मारा गया तथा कालनेमि (विष्णु के त्रिशूल से) चीरा गया ॥ ७ ॥ (इस समस्त क्रीड़ा का स्वामी परमात्मा) आप ही गुरु-रूप होकर अपनी गुणस्तुति की वाणी को विचारता है, आप ही दैत्यों को माया के मोह में फँसाकर मारता है, आप ही गुरु की शरण पड़े व्यक्तियों को अपने स्मरण में, अपनी भक्ति में जोड़कर (संसार-समुद्र से) पार उतारता है ॥ ८ ॥ दुर्योधन (अहंकार में) डूबा और अपनी प्रतिष्ठा गवाँ बैठा। (अहंकारवश) उसने परमात्मा को स्मरण न रखा। परन्तु जो परमात्मा के दास को दुख देता है (वह उस) दुख के कारण आप ही दुखी होता है, उसे आप ही वह दुख (मृत्युकारक

हो जाता है) ॥ ९ ॥ राजा जन्मेजय ने अपने गुरु की शिक्षा को न समझा (लेकिन अहंकार के कारण) भ्रम में पड़कर कुमार्गगामी हो गया। फिर सुख कहाँ से मिलता? थोड़ी सी भूल होने पर दोबारा पश्चाताप किया ॥ १० ॥ कंस, केशी और चांडूर (के बराबर कोई नहीं) था। (पर अहंकारवश) इन्होंने परमात्मा की लीला को न समझा और अपनी प्रतिष्ठा गंवा ली। (अपनी शक्ति का अहंकार मिथ्या है) कर्त्तार के अतिरिक्त दूसरा कोई (किसी की) रक्षा नहीं कर सकता ॥ ११ ॥ (अहंकार बहुत शक्तिशाली है) गुरु की शरण लिए बिना इस अहंकार को कोई मिटा नहीं सकता। जो मनुष्य गुरु की शिक्षा धारण करता है, वह (अहंकार मिटाकर) धैर्य धारण करता है, (धैर्य बड़ा महान्) धर्म है। हे नानक! गुरु की शिक्षा पर चलने से ही परमात्मा का नाम प्राप्त होता है, और जीव परमात्मा की गुणस्तुति करता है ॥ १२ ॥

॥ गउड़ी महला ५ ॥

रंग संगि बिखिआ के भोगा इन संगि अंध न जानी ॥ १ ॥
हउ संचउ हउ खाटता सगली अवध बिहानी ॥ रहाउ ॥
हउ सूरा परधानु हउ को नाही मुझहि समानी ॥ २ ॥
जोबनवंत अचार कुलीना मन महि होइ गुमानी ॥ ३ ॥
जिउ उलझाइओ बाध बुधि का मरतिआ नही बिसरानी ॥ ४ ॥
भाई मीत बंधप सखे पाछे तिन हू कउ संपानी ॥ ५ ॥
जितु लागो मनु बासना अंति साई प्रगटानी ॥ ६ ॥
अहंबुधि सुचि करम करि इह बंधन बंधानी ॥ ७ ॥
दइआल पुरख किरपा करहु नानक दास दसानी ॥ ८ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २४२)

आनन्दपूर्वक माया के विषय-भोग (मनुष्य भोगता रहता) है, (माया के मोह में) अन्धा हुआ मनुष्य इन भोगों में डूबा हुआ समझता नहीं

(कि उम्र बीत रही है) ॥ १ ॥ मैं माया जोड़ रहा हूँ, मैं माया प्राप्त करता हूँ, इन ख्यालों में (अन्धे मनुष्य की) उम्र बीत जाती है ॥ रहाउ ॥ मैं शूरवीर हूँ, मैं चौधरी हूँ, कोई मेरे बराबर का नहीं है, मैं सुन्दर हूँ, मैं ऊँचे आचरण वाला हूँ, मैं ऊँची जाति से हूँ—(माया के मोह में अन्धा हुआ मनुष्य अपने) मन में इस प्रकार अहंकारी होता है ॥ २-३ ॥ (माया के मोह में) मारी हुई बुद्धिवाला मनुष्य (जवानी के समय माया-मोह में) फँसा रहता है, मरने के समय भी उसे यह माया नहीं भूलती; भाई, मित्र, रिश्तेदार, साथी, मरने के पश्चात् आखिर इन्हें ही (अपनी तमाम उम्र की इकट्ठी की हुई माया) सौंप जाता है ॥ ४-५ ॥ जिस वासना में मनुष्य का मन लगा रहता है, आखिर मौत के समय वही वासना अपना दबाव डालती है ॥ ६ ॥ अहंकार के सहारे (शारीरिक पवित्रता तथा तीर्थस्नान आदि सोचे हुए धार्मिक) कर्म कर-करके इनके बन्धनों में ही लगा रहता है ॥ ७ ॥ हे नानक! (प्रार्थना कर और कह—) हे दया के घर, सर्वव्यापक प्रभु! मुझ पर कृपा कर, मुझे अपने दासों का दास (बनाए रख, और मुझे इन अहंकार के बन्धनों से बचाए रख) ॥ ८ ॥

॥ सलोकु ॥

आतम रसु जिह जानिआ हरि रंग सहजे माणु।
नानक धनि धनि धंनि जन आए ते परवाणु ॥ १ ॥

॥ पउड़ी ॥

आइआ सफल ताहू को गनीऐ।
जासु रसन हरि हरि जसु भनीऐ।
आइ बसहि साधू कै संगे।
अनदिनु नामु धिआवहि रंगे।
आवत सो जनु नामहि राता।
जा कउ दइआ मइआ बिधाता।

एकहि आवन फिरि जोनि न आइआ।

नानक हरि कै दरसि समाइआ॥ १३॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ २५२)

॥ सलोकु॥ हे नानक! जो व्यक्ति स्थिर अवस्था में टिककर प्रभु की स्मृति का आनन्द लेते हैं, जिन्होंने इस आत्मिक आनन्द से ऐक्य किया है, वे भाग्यशाली हैं, उनका ही जगत् में जन्म लेना सफल है॥ १॥ पउड़ी॥ (जगत् में) उस मनुष्य का आना सफल मानो, जिसकी जीभ सदा परमात्मा की गुणस्तुति करती है। (जो व्यक्ति) गुरु की शरण में आ टिकते हैं, वे प्रति-पल प्रेम सहित परमात्मा का नाम-स्मरण करते हैं। जिस मनुष्य पर सृजनहार की कृपा हुई, वह सदा परमात्मा के नाम में मस्त रहता है, (जगत् में वही) आया समझो। हे नानक! जो मनुष्य परमात्मा के दर्शन में लीन रहता है, (जगत् में) उसका जन्म एक बार होता है, वह बार-बार योनियों में नहीं भटकता है।

॥ सलोकु ॥

टूटे बंधन जनम मरन साध सेव सुखु पाइ।

नानक मनहु न बीसरै गुण निधि गोबिद राइ॥ १॥

॥ पउड़ी॥

टहल करहु तउ एक की जा ते ब्रिथा न कोइ।

मनि तनि मुखि हीऐ बसै जो चाहहु सो होइ।

टहल महल ता कउ मिलै जा कउ साध क्रिपाल।

साधू संगति तउ बसै जउ आपन होहि दइआल।

टोहे टाहे बहु भवन बिनु नावै सुखु नाहि।

टलहि जाम के दूत तिह जु साधू संगि समाहि।

बारि बारि जाउ संत सदके। नानक पाप बिनासे कदि के॥२७॥

॥ सलोकु ॥ हे नानक! गुणों का भण्डार गोबिंद जिस मनुष्य के मन से भूलता नहीं है, उसके वे मोह-बन्धन टूट जाते हैं जो जन्म-मरण के चक्र में डालते हैं, वह मनुष्य गुरु की सेवा करके आत्मिक आनन्द प्राप्त करता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ (हे भाई!) केवल एक परमात्मा की सेवा-भक्ति करो, जिसके द्वार से कोई खाली नहीं जाता। यदि तुम्हारे मन, तन, मुख तथा हृदय में प्रभु बस जाए तो मुँह-माँगा पदार्थ मिलेगा। पर यह सेवा-भक्ति का अवसर उसी को मिलता है जिस पर गुरु दयालु होवे। और, गुरु की संगति में मनुष्य तब टिकता है जब प्रभुजी स्वयं कृपा करें। हमने समस्त स्थान खोजकर देख लिए हैं, प्रभु के भजन के बिना आत्मिक सुख कहीं भी नहीं। जो व्यक्ति गुरुके दरबार में अपने आपको लीन कर लेते हैं, उनसे तो यमदूत भी अलग हो जाते हैं। हे नानक! (कहा—) है बार-बार गुरु पर बलिहारी जाता हूँ। जो मनुष्य गुरु-द्वार पर गिरता है, उसके कई जन्मों के लिए अशुभ कर्मों के संस्कार नष्ट हो जाते हैं।

॥ सलोकु ॥

चारि कुंट चउदह भवन सगल बिआपत राम।
नानक ऊन न देखीऐ पूरन ता के काम ॥१४॥

॥ पउड़ी ॥

चउदहि चारि कुंट प्रभ आप।
सगल भवन पूरन परताप।
दसे दिसा रविआ प्रभु एकु।
धरनि अकास सभ महि प्रभ पेखु।
जल थल बन परबत पाताल।
परमेस्वर तह बसहि दइआल।
सूखम असथूल सगल भगवान।
नानक गुरमुखि ब्रहमु पछान॥ १४॥

॥ सलोकु ॥ चारों दिशाओं तथा चौदह लोक सर्वत्र परमात्मा बस रहा है। हे नानक! (उस परमात्मा के भण्डारों में) कोई कमी नहीं देखी जाती, उसके द्वारा किए सारे ही काम सफल होते हैं ॥ १४ ॥ पउड़ी ॥ चारों ओर परमात्मा आप बस रहा है। सारे भुवनों में उसका तेज-प्रताप चमकता है। केवल एक प्रभु ही दसों दिशाओं में बसता है। (हे भाई!) धरती, आकाश सब में बसते हुए परमात्मा को देखो। पानी, धरती, जंगल, पहाड़, पाताल—इन सब में दया के घर प्रभुजी बस रहे हैं। गोचर और अगोचर तमाम जगत् में परमात्मा मौजूद है। हे नानक! जो मनुष्य गुरु द्वारा बतलाए मार्ग पर चलता है वह परमात्मा को पहचान लेता है।
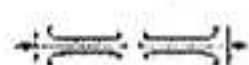
फरीदा काले मैडे कपड़े काला मैडा वेसु।
गुनही भरिआ मै फिरा लोकु कहै दरवेसु॥ ६१॥
तती तोइ न पलवै जे जलि टुबी देइ।
फरीदा जो डोहागणि रब दी झूरेदी झूरेइ॥ ६२॥
जां कुआरी तो चाउ वीवाही तां मामले।
फरीदा एहो पछोताउ वति कुआरी न थीऐ॥ ६३॥
कलर केरी छपड़ी आइ उलथे हंझ।
चिंजू बोड़न्हि ना पीवहि उडण संदी डंझ॥ ६४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३८१)

फ़रीद विनम्रता दर्शाते हुए कहते हैं कि मेरे कपड़े काले हैं, मेरा वेष भी काला (पाखण्डपूर्ण) है। मैं पापों से भरा फिरता हूँ, फिर भी लोग मुझे दरवेश (साधु) कहते हैं (अर्थात् मैं तो इस योग्य नहीं कि दरवेश कहलवा सकूँ) ॥ ६१ ॥ ज्यों एक बार सड़ी हुई खेती दोबारा नहीं खिलती, चाहे उसे अत्यधिक पानी में डुबा ही क्यों न दिया जाय, त्योंही फ़रीद कहते हैं, परमात्मा से विमुख हुई जीवात्मा-स्त्री सदैव वियोग-दुःख से पीड़ित रहती है (उसे दोबारा कभी संयोग-सुख नहीं

मिलना।) ॥ ६२ ॥ जब तक कन्या कुँआरी होती है, उसके मन में (विवाह का) चाव बना रहता है। विवाहोपरांत सैकड़ों झंझट खड़े हो जाते हैं, फ़रीद जी कहते हैं, तब वह पश्चात्ताप करती है, (और सोचती है कि) क्या दोबारा कुँआरी कन्या नहीं बन सकती? (भाव यह कि जीवात्मा को प्रभु-पति से मिलने का प्रबल चाव होता है, किन्तु प्रभु के घर में अपेक्षित गुणों के अभाव में उसे आदर-सत्कार नहीं मिलता, तो वह पुनः जीवन प्राप्त कर अपेक्षित गुणों को अर्जित करना चाहती है ॥ ६३ ॥ संसार रूपी खारी जोहड़ के किनारे (सन्त रूपी) हंस आए हैं, किन्तु वे इसके मलिन-खारे पानी में चोंच भी नहीं डुबाते (अर्थात् सांसारिक विषय-वासनाओं से विरक्त रहते हैं)। उनके मन में सदा वहाँ से उड़ जाने की प्रबल इच्छा रहती है (अर्थात् वे संसार से सत्लोक को चले जाना चाहते हैं) ॥ ६४ ॥

भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसह मेहु।
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥ २५ ॥
फरीदा मै भोलावा पग दा मतु मैली होइ जाइ।
गहिला रूहु न जाणई सिरु भी मिटी खाइ ॥ २६ ॥
फरीदा सकर खंडु निवात गुड़ु माखिओु मांझा दुधु।
सभे वसतू मिठीआं रब न पूजनि तुधु ॥ २७ ॥
फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख।
जिना खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥ २८ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३७९)

ओढ़नी भीगती है, तो भीग जाय, किन्तु प्रभु-प्रियतम की ओर से बरसाया मेंह बरसता रहे, इसमें भी आनन्द है। मैं तो निश्चित ही अपने प्रियतम को जा मिलूँगा, ताकि मेरा प्रेम अमर बना रहे ॥ २५ ॥ फ़रीद कहते हैं कि मुझे अपनी पगड़ी की चिन्ता है कि कहीं मैली न हो जाय! किन्तु मूर्ख जीव नहीं जानता कि (मरणोपरांत) पगड़ी तो क्या

सिर भी मिट्टी ही खा जाती है॥ २६॥ फ़रीद कहते हैं (कि यह सच है) कि शक्कर, चीनी, मिश्री, गुड़, शहद एवं भैंस का दूध, सब वस्तुएँ मीठी होती हैं, किन्तु इनमें से कोई भी वस्तु जीव को परमात्मा की ओर प्रवृत्त नहीं करती (अर्थात् बेकार हैं)॥ २७॥ फ़रीद जी कहते हैं कि मेरी रोटी लकड़ी की तरह कठोर है और मेरी भूख उसके संग ग्रहण करनेवाली सब्जी है। (अभिप्राय यह कि भूख को मैंने संयत कर रखा है, काठ की कठोर रोटी मुझे सांसारिक भोग-विलास से मुक्त रखती है); जो लोग घी आदि से चुपड़ी रोटी खाते हैं (अर्थात् विषय-विकारों में पड़ते हैं) वे ही दुःख सहन करेंगे॥ २८॥

॥ महला ५ ॥

जो पाथर कउ कहते देव।
ता की बिरथा होवै सेव।
जो पाथर की पांई पाइ।
तिस की घाल अजांई जाइ॥ १॥
ठाकुरु हमरा सद बोलंता।
सरब जीआ कउ प्रभु दानु देता॥ १॥ रहाउ॥
अंतरि देउ न जानै अंधु।
भ्रम का मोहिआ पावै फंधु।
न पाथरु बोलै ना किछु देइ।
फोकट करम निहफल है सेव॥ २॥
जे मिरतक कउ चंदनु चड़ावै।
उसते कहहु कवन फल पावै।
जे मिरतक कउ बिसटा माहि रुलाई।
तां मिरतक का किआ घटि जाई॥ ३॥

कहत कबीर हउ कहउ पुकारि।
समझि देखु साकत गावार।
दूजै भाई बहुतु घर गाले।
राम भगत है सदा सुखाले॥ ४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ११६०)

जो लोग पत्थर की मूर्तियों को ही परमात्मा मानकर उनकी सेवा में रत होते हैं, उनकी सेवा विफल रहती है। जो पत्थर की मूर्तियों के चरण छूते हैं, उनका समूचा श्रम वृथा होता है॥ १॥ हमारा स्वामी तो चिर चेतन है, वह समस्त जीवों को सर्वस्व देनेवाला है॥ १॥ रहाउ॥ अज्ञानी मनुष्य अन्तर्मन में बसनेवाले परमात्मा को नहीं जानता, इसीलिए भ्रम और मोह के फन्दों में फँसा रहता है। पत्थर की मूर्तियाँ न तो बोलती हैं, न कुछ दे सकती हैं; उनके सम्बन्ध में कमाया कर्म और उनकी सेवा सब व्यर्थ और निष्फल है॥ २॥ यदि कोई मुर्दे को (पत्थर की मूर्ति निर्जीव होने के कारण मुर्दा कही गई है) चन्दन लगाए, तो भला सोचो, वह उससे क्या फल पा सकता है? (इसके विपरीत यदि मुर्दे को गन्दगी में लिपटा दो, तो भला उसका क्या घट जायेगा)॥ ३॥ कबीरजी कहते हैं कि ऐ मायाधारी गँवार जीव, समझ–बूझकर काम करो। द्वैत–भाव से तो जीवन में हानि ही उठानी होती है, केवल राम–भक्ति ही सुखदायी है॥ ४॥

॥ भैरउ नाम देव जी घरु २॥

॥ १ ओं सतिगुर प्रसादि॥

जैसी भूखे प्रीति अनाज।
त्रिखावंत जल सेती काज।
जैसी मूड़ कुटब पराइण।
ऐसी नामे प्रीति नराइण॥ १॥
नामे प्रीति नाराइण लागी।
सहज सुभाइ भइओ बैरागी॥ १॥ रहाउ॥

जैसी पर पुरखा रत नारी।
लोभी नरु धन का हितकारी।
कामी पुरख कामनी पिआरी।
ऐसी नामे प्रीति मुरारी॥ २॥
साई प्रीति जि आपे लाए।
गुरपरसादी दुबिधा जाए।
कबहु न तूटसि रहिआ समाइ।
नामे चितु लाइआ सचि नाइ॥३॥
जैसी प्रीति बारिक अरु माता।
ऐसा हरि सेती मनु राता।
प्रणवै नामदेउ लागी प्रीति।
गोबिदु बसै हमारै चीति॥४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ११६४)

जिस प्रकार भूखे व्यक्ति की अन्न से प्रीति होती है, प्यासे जन को जल की इच्छा होती है, जैसे मूढ़ जीव कुटुम्ब के प्यार में लीन होता है, वैसे ही नामदेव को परमात्मा से प्यार है॥ १॥ नामदेव को नारायण से प्रीति हुई तो वह सहज स्वभाव से ही वैरागी बन गया॥ १॥ रहाउ॥ जैसे कुलटा नारी पर-पुरुष में रत होती है, लोभी व्यक्ति को धन से प्यार होता है, कामीजन को कामिनी की आसक्ति होती है, ऐसी ही प्रीति नामदेव की प्रभु में है॥ २॥ वही प्रीति उत्तम है, जो परमात्मा की प्रेरणा से उपजती है, गुरु की कृपा से उसमें सब दुविधा नष्ट हो जाती है। ऐसी प्रीति कभी नहीं टूटती, प्रेमी प्रेमिका में ही मग्न रहता है। नामदेव ने भी इसी दिशा में सच्चे नाम के साथ पक्की प्रीति लगाई है॥ ३॥ जैसा प्रेम बालक और माता में होता है, ऐसा ही मेरा मन भी हरि में रत है। नामदेवजी कहते हैं कि उन्हें ऐसी प्रीति लगी है कि प्रभु हर समय उनके चित्त में बसते हैं॥ ४॥

॥ भैरउ वाणी रविदास जी की घरु २ ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

बिनु देखे उपजै नहीं आसा।
जो दीसै सो होइ बिनासा।
बरन सहित जो जापै नामु।
सो जोगी केवल निहकामु॥ १ ॥
परचै रामु रवै जउ कोई।
पारसु परसै दुबिधा न होई॥ १ ॥ रहाउ ॥
सो मुनि मन की दुबिधा खाइ।
बिनु दुआरे त्रै लोक समाइ।
मन का सुभाउ सभु कोई करै।
करता होइ सु अनभै रहै॥ २ ॥
फल कारन फूली बनराइ।
फलु लागा तब फूलु बिलाइ।
गिआनै कारन करम अभिआसु।
गिआनु भइआ तह करमह नासु॥ ३ ॥
घ्रित कारन दधि मथै सइआन।
जीवत मुकत सदा निरबान।
कहि रविदास परम बैराग।
रिदै रामु की न जपसि अभाग॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ११६७)

प्रभु को देखे बिना मिलने की आशा नहीं बनती, और जो कुछ दृश्य है, वह नश्वर होता है (अत: प्रभु को कैसे मिलें? वह अनश्वर भी है और अदृश्य भी!) जो जीव उसकी स्तुति-सहित उसका नाम जपता है, वही निष्काम भावी विरक्त जीव है॥ १ ॥ जो गुरु द्वारा परिचय प्राप्त करके राम का स्मरण करता है, वह पारस रूपी गुरु को

मिलकर दुविधा को मिटा लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही जीव मुनि है, जो मन की दुविधा का अन्त करके अपनी आत्मा में त्रिलोकी को समा लेता है अर्थात् मन से आशा-तृष्णा मिटा देता है। मन के स्वभाव (प्रकृति) के अनुसार सब कोई कर्ता होता है (सभी रचना करते हैं), किन्तु जो वास्तविक कर्ता है, वह अभय स्थिति (ज्ञान-स्थिति) में रहता॥ २ ॥ फल उपजाने के लिए ही समूची वनस्पति में फूल लगते हैं, किन्तु जब फल उगते हैं तो फूल झड़ जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ज्ञानोपलब्धि के लिए कर्म-काण्ड का अभ्यास किया जाता है, जब ज्ञान होता है तो कर्म-काण्ड का नाश हो जाता है, उसकी अपेक्षा नहीं रहती॥ ३ ॥ समझदार लोग घृत-प्राप्ति के लिए दही मथते हैं, जीवन्मुक्त (पूर्ण ज्ञानावस्था को पानेवाला) अन्ततः निर्वाण को प्राप्त करते हैं। रविदासजी परम वैराग्य की बात कहते हैं कि हे अभागे, हृदय में राम का नाम क्यों नहीं जपते (यही परम वैराग्य है) ॥ ४ ॥

॥ आसा ॥

अंतरि मैलु जे तीरथ नावै तिसु बैकुंठ न जानां।
लोक पतीणे कछू न होवै नाही रामु अयाना॥ १ ॥
पूजहु रामु एकु ही देवा।
साचा नावणु गुर की सेवा॥ १ ॥ रहाउ॥
जल कै मजनि जे गति होवै नित नित मेंडुक नावहि।
जैसे मेंडुक तैसे ओइ नर फिरि फिरि जोनी आवहि॥ २ ॥
मनहु कठोरु मरै बानारसि नरकु न बांचिआ जाइ।
हरि का संतु मरै हाड़ंबै त सगली सैन तराई॥ ३ ॥
दिनसु न रैनि बेदु नही सासत्र तहा बसै निरंकारा।
कहि कबीर नर तिसहि धिआवहु बावरिआ संसारा॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ४८४)

(जिस जीव के) मन में मलिनता हो और वह तीर्थ-स्नान करने

चले; वह बैकुण्ठ नहीं पा सकता। लोगों की आँखों में धूल झोंकने से कुछ नहीं बनता, न ही परमात्मा नादान है, (जो सच्चाई को न समझता हो) ॥ १ ॥ (अतः, ऐ जीवो!) केवल परमपुरुष राम को ही एक मात्र देव मानकर उसकी शरण ग्रहण करो (पूजा करो), उसी की सेवा ही सच्चा तीर्थ-स्नान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि जल के स्नान से जीव को मोक्ष मिल सकता होता, तो मेंढक तो सदा नहाता ही रहता है (अर्थात् पानी में रहता है)। (भाव यह कि मेंढक को मोक्ष तो अब तक हो गया होता), किन्तु मेंढक हो या (तीर्थ-स्नानी) मनुष्य, दोनों को बार-बार जन्म लेना ही पड़ता है ॥ २ ॥ कठोर मन वाला व्यक्ति (पापी) चाहे बनारस में जाकर मरे, तो भी वह नरक से बच नहीं सकता, जबकि हरि-भक्त चाहे मगहर में शरीर त्यागे, वह अपने साथ-साथ सेवकों का भी कल्याण करता है (बनारस में मरने से स्वर्ग तथा मगहर में मरने से गर्दभ योनि मिलती है—ऐसी मान्यता है) ॥ ३ ॥ जहाँ रात-दिन का कोई भेद नहीं, वेद-शास्त्र का ज्ञान अपेक्षित नहीं, सच्चा परमात्मा वहीं बसता है। इसीलिए कबीरजी कहते हैं कि (ऐ जीवो!) संसार की मूर्खताओं से हटकर उसी परमात्मा का भजन करो ॥ ४ ॥

॥ वाणी नामदेव जी की रामकली घरु १ ॥

माइ न होती बापु न होता करमु न होती काइआ।
हम नही होते तुम नही होते कवनु कहां ते आइआ ॥ १ ॥
राम कोइ न किसही केरा।
जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥१ ॥ रहाउ ॥
चंदु न होता सूरु न होता पानी पवनु मिलाइआ।
सासतु न होता बेदु न होता करमु कहां ते आइआ ॥ २ ॥
खेचर भूचर तुलसी माला गुर परसादी पाइआ।
नामा प्रणवै परम ततु है सतिगुर होइ लखाइआ ॥ ३ ॥

जब माँ, बाप, कर्म, काया नहीं थे, हम-तुम न थे, तब धीरे-धीरे कौन कहाँ से आ गया?॥ १ ॥ कोई किसी का नहीं था, पेड़ पर रात्रि-बसेरे के पक्षियों की तरह सब रहते थे॥ १ ॥ रहाउ॥ चन्द्र-सूर्य नहीं थे, पानी और पवन के तत्त्वों को भी परमात्मा ने अपने ही भीतर आलम्बन दे रखा था। शास्त्र-वेद भी न थे; फिर यह कर्म कहाँ से बना?॥ २ ॥ प्राणायाम की खेचरी-भूचरी मुद्राएँ तथा तुलसी-माला मुझे गुरु-कृपा से ही मिली हैं। नामदेवजी कहते हैं कि परम-तत्त्व की प्राप्ति केवल सतिगुरु के द्वारा ही होती है॥ ३ ॥

॥ रामकली वाणी बेणी जीउ की ॥

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

इड़ा पिंगुला अउर सुखमना तीनि बसहि इक ठाई।
बेणी संगमु तह पिरागु मनु मजनु करे तिथाई॥ १ ॥
संतहु तहा निरंजन रामु है।
गुरगमि चीनै बिरला कोइ।
तहां निरंजनु रमईआ होइ॥ १ ॥ रहाउ॥
देवसथानै किआ नीसाणी।
तह बाजे सबद अनाहद बाणी।
तह चंदु न सूरजु पउणु न पाणी।
साखी जागी गुरमुखि जाणी॥ २ ॥
उपजै गिआनु दुरमति छीजै। अंम्रित रसि गगनंतरि भीजै।
एसु कला जो जाणै भेउ। भेटै तासु परम गुरदेउ॥ ३ ॥
दसम दुआरा अगम अपारा परम पुरख की घाटी।
उपरि हाटु हाट परि आला आले भीतरि थाती॥ ४ ॥
जागतु रहै सु कबहु न सोवै। तीन तिलोक समाधि पलोवै।
बीज मंत्रु लै हिरदै रहै। मनूआ उलटि सुंन महि गहै॥ ५ ॥

जागतु रहै न अलीआ भाखै। पाचउ इंद्री बसि करि राखै।
गुर की साखी राखै चीति।
मनु तनु अरपे क्रिसन परीति॥ ६ ॥
कर पलव साखा बीचारे। अपना जनमु न जूऐ हारे।
असुर नदी का बंधै मूलु। पछिम फेरि चड़ावै सूरु।
अजरु जरै सु निझरु झरै। जगंनाथ सिउ गोसटि करै॥ ७ ॥
चउमुख दीवा जोति दुआर। पलू अनत मूलु बिचकारि।
सरब कला ले आपे रहै। मनु माणकु रतना महि गुहै॥ ८ ॥
मसतकि पदमु दुआलै मणी। माहि निरंजनु त्रिभवण धणी।
पंच सबद निरमाइल बाजे। ढुलके चवर संख घन गाजे।
दलि मलि दैतहु गुरमुखि गिआनु।
बेणी जाचै तेरा नामु॥ ९ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९७४)

इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना, जहाँ एक स्थल पर बसती हैं, वहीं त्रिवेणी संगम (प्रयाग) है, मन को उसी जगह स्नान करना है (अर्थात् अनुभवों के संगम-स्थल पर ही प्रभु का दर्शन सम्भव है)॥ १ ॥ हे सन्तो, वहीं मायातीत ब्रह्म का निवास है। गुरु तक पहुँचकर कोई विरला ही इस तथ्य को पहचानता है कि वहीं निरंजन रमण करता है॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस देवस्थान की, जहाँ परमात्मा का अनुभव होता है, क्या निशानी है? वहाँ अनाहत ध्वनि बजती है। (वहाँ इतनी पूर्णता है कि) बाहरी चन्द्र, सूर्य, पवन, पानी की कोई अपेक्षा नहीं रहती। कोई गुरुमुख जीव ही उसका प्रकट साक्षी होता है॥ २ ॥ ज्ञान के उपजने से दुर्मति नष्ट हो जाती है। जीव गगन से ऊपर (दशम द्वार के पार) नामामृत का रस-पान करके प्रसन्न होता है। इस कला का रहस्य जो जानता है, वही गुरुदेव से मिलाप करता है॥ ३ ॥ दशम द्वार (आँखों के

बीच का अन्तिम चक्र। शेष नौ द्वार बाहरी हैं, दशम द्वार जीव को अन्तर्मुखता प्रदान करता है। नौ द्वार हैं—दो आँखें, दो कान, दो नासिकाएँ, एक मुँह और दो इन्द्रिय-रन्ध्र) अगम अपार है, वहीं परब्रह्म का स्थान है। सर्वोत्तम योनि मनुष्य है, उसमें विवेक-केन्द्र मस्तिष्क है और उसमें भी दशम द्वार में परम उपलब्धि की थाती मौजूद है॥ ४॥ इस थाती को पा लेनेवाला सदा जाग्रत रहता है, कभी नहीं सोता। उसकी समाधि में त्रिगुणमयी सृष्टि प्रभाव-हीन रहती है। हरि-नाम रूपी मन्त्र का बीज हृदय में जमता है और बहिर्मुखी मन उलटकर शून्य में स्थिर होता है॥ ५॥ वह जीव सदा जागता है, कभी मिथ्या आचरण नहीं करता, पाँचों इन्द्रियों को निरोध करता है; गुरु के उपदेश को सदा चित्त में धारण करता है और प्रभु की प्रीति में तन-मन अर्पित कर देता है॥६॥ हाथों को शरीर रूपी वृक्ष के पत्ते और शाखाएँ माने (अर्थात् शाखाओं द्वारा पेड़ के फैलाव की तरह हाथों द्वारा सेवा करता हुआ मानवता का फैलाव करे), अपने मनुष्य-जन्म को जुए में न हार दे; दुर्विचारों की नदी के प्रवाह को रोके, पश्चिम से फेरकर सूर्य चढ़ावे अर्थात् अज्ञानान्धकार दूर करके ज्ञान का प्रकाश करे तथा अजर अवस्था को जरे, तो उसे दशम द्वार से झरनेवाला अमृत-लाभ होता है और वह प्रभु से भेंट कर लेता है॥ ७॥ उस (दशम) द्वार पर चौमुखा ज्ञान-दीप बलता है, मूल (परमात्मा) उसके केन्द्र में है, जबकि पल्लव (बाहरी सृष्टि) चतुर्दिक् फैले हैं। सर्वशक्तिमान् परमात्मा वहीं बसता है, मन का शुद्धिकरण करनेवाला योगी वहीं हरि-रत्न को पा सकता है॥ ८॥ मस्तिष्क में कमल और आसपास रत्न हैं, तीनों लोकों का स्वामी परब्रह्म उसी कमल में निवास करता है। वहाँ निर्मल पाँच ध्वनियाँ ध्वनित होती हैं। वहाँ चँवर डुलते एवं शंखनाद होता है (आत्मिक आनन्द के प्रतीक हैं चँवर और शंख)। गुरु द्वारा ज्ञान प्राप्त करनेवाला जीव काम-क्रोधादि दैत्यों को दलित करता है। बेणीजी कहते हैं कि वे तो केवल परमात्मा के नाम की याचना करते हैं॥ ९॥

ੴ

सलोक महला ९

वाणी श्री गुरु तेग बहादुर जी

[संसार में मुग्ध मनुष्य को हरिनाम जपने की प्रेरणा]

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक महला ९

गुन गोबिंद गाइओ नही जनमु अकारथ कीन।
कहु नानक हरि भजु मना जिहि बिधि जल कौ मीन ॥ १ ॥

हे जीव, यदि तुमने परमात्मा का स्तुति-गान नहीं किया, तो तुम्हारा जन्म-व्यर्थ हो गया है। गुरु नानक का कथन है कि ऐ मन, हरि को इस प्रकार नित्य भजो, जैसे मछली जल को भजती है (अर्थात् जल ही मछली का प्राण है, वैसे ही हरिनाम में अपने प्राण टिका लो)।

बिखिअन सिउ काहे रचिओ निमख न होहि उदास।
कहु नानक भजु हरि मना परै न जम की फास ॥ २ ॥

ऐ जीव, तुम क्यों विषय-विकारों में रत हो, क्षण-भर भी उनसे विरत नहीं होते! गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, हरि-भजन करो, यमराज की फाँसी से बच जाओगे।

तरनापो इउ ही गइओ लीओ जरा तनु जीति।
कहु नानक भज हरि मना अउध जातु है बीति ॥ ३ ॥

यौवन यों ही बीत गया, बुढ़ापे ने अब तुम्हारे शरीर पर अधिकार जमा लिया है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, आयु यों ही बीती जा रही है, हरि का भजन कर लो।

बिरधि भइओ सूझै नही कालु पहूचिओ आन।
कहु नानक नर बावरे किउ न भजै भगवान ॥ ४ ॥

वृद्धावस्था आ गई, कुछ सूझ नहीं पड़ा; अन्ततः काल भी आ पहुँचा। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मुग्ध मनुष्य, तुम अभी भी क्यों भगवान का भजन नहीं करते?

धनु दारा संपति सगल जिनि अपुनी करि मानि।
इन मै कछु संगी नही नानक साची जानि॥ ५॥

जिसने धन, स्त्री, सकल सम्पत्ति आदि को अपना करके मान लिया है, उसे उद्‌बोधन करते हुए गुरु नानक कहते हैं कि सच्ची बात यह है कि इनमें से कोई भी तुम्हारा सच्चा साथी नहीं है।

पतित उधारन भै हरन हरि अनाथ के नाथ।
कहु नानक तिह जानीऐ सदा बसतु तुम साथ॥ ६॥

परमात्मा पतितों का उद्धार करनेवाला, भय का निवारक एवं अनाथों का नाथ है। गुरु नानक कहते हैं कि उसे इस प्रकार पहचानो कि वह सदा तुम्हारे अंग-संग बसता है।

तनु धनु जिह तो कउ दीओ ता सिउ नेहु न कीन।
कहु नानक नर बावरे अब किउ डोलत दीन॥ ७॥

जिस प्रभु ने तुम्हें तन दिया है, समृद्धि दी है, तुमने उसके साथ कभी प्यार नहीं किया। गुरु नानक का कथन है कि ऐ मूर्ख मनुष्य, अब दीन-हीन होकर क्यों डोलता है (अर्थात् जब धन देनेवाले की तुम्हें क़द्र नहीं, तो धन-हीन अवस्था में स्थिरता क्यों गँवाते हो?)।

तनु धनु संपै सुख दीओ अरु जिह नीके धाम।
कहु नानक सुनु रे मना सिमरत काहि न राम॥ ८॥

जिस प्रभु ने तन, धन, सम्पत्ति तथा सुन्दर भवन दिए हैं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, उसी प्रभु का नाम नित्य स्मरण क्यों नहीं करते?

सभ सुख दाता रामु है दूसर नाहिन कोइ।
कहु नानक सुनि रे मना तिह सिमरत गति होइ॥ ९॥

सब सुखों को देनेवाला प्रभु राम है, दूसरा अन्य कोई नहीं। गुरु नानक-कथन है, ऐ मन सुनो! उसी के सिमरन से गति सम्भव है।

जिह सिमरत गति पाईऐ तिहि भजु रे तै मीत।
कहु नानक सुन रे मना अउध घटत है नीत॥ १०॥

ऐ मित्र, जिसके स्मरण से उद्धार होता है, तुम उसी का भजन करो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! तुम्हारी आयु नित्यप्रति घटती जा रही है (समय रहते भजन कर लो)।

पांच तत को तनु रचिओ जानहु चतुर सुजान।
जिह ते उपजिओ नानका लीन ताहि मै मान॥ ११॥

ऐ चतुर मनुष्य, यह जान लो कि तुम्हारा शरीर पाँच तत्त्वों से बनाया गया है। गुरु नानक कहते हैं कि तुम भलीभाँति समझ लो कि जहाँ से उपजे हो, अन्ततः वहीं लीन भी होना है।

घटि घटि मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि।
कहु नानक तिह भजु मना भउ निधि उतरहि पारि॥ १२॥

सन्तजन पुकार कर कहते हैं कि प्रत्येक शरीर में स्वयं हरि बसते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उसी हरि का भजन करो, संसार-सागर से पार उतर जाओगे।

सुखु दुखु जिह परसै नही लोभ मोह अभिमानु।
कहु नानक सुन रे मना सो मूरति भगवान॥ १३॥

(जिस जीव को) सुख-दुःख स्पर्श नहीं करते (विचलित नहीं करते), जिसे लोभ, मोह, अभिमान कुछ भी नहीं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! वह जीव तो साक्षात् भगवान् का मूर्त्त रूप है।

उसतति निंदिआ नाहि जिहि कंचन लोह समानि।
कहु नानक सुनु रे मना मुकति ताहि तै जानि॥ १४॥

जो स्तुति-निन्दा में रुचि नहीं रखता, जिसके लिए लोहा और सोना बराबर हैं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो, उसी से मुक्ति की प्राप्ति सम्भव मानो। (वही मुक्तात्मा है, वही दूसरों को मुक्ति

दिलाने में समर्थ है।)।

हरख सोग जा कै नही बैरी मीत समान।
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जान॥ १५॥

जिसे कोई हर्ष-शोक विचलित नहीं करता, जिसके लिए वैरी और मित्र एक समान हैं; गुरु नानक मन को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि उसी से मुक्ति मिल सकती है।

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आनि।
कहु नानक सुन रे मना गिआनी ताहि बखानि॥ १६॥

जो किसी को भय नहीं देता (डराता नहीं) और न ही अन्य किसी का भय मानता है; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! उसी को ज्ञानी कहो (निर्भय और निर्वैर व्यक्ति ही ज्ञानी होता है)।

जिहि बिखिआ सगली तजी लीओ भेख बैराग।
कहु नानक सुन रे मना तिह नर माथै भाग॥ १७॥

जिसने सब विषय-विकारों का त्याग कर दिया है और त्याग-भावना धारण कर ली है; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! उस मनुष्य के मस्तक में समुज्ज्वल भाग्य मानो।

जिहि माइआ ममता तजी सभ ते भइओ उदास।
कहु नानक सुन रे मना तिहि घटि ब्रहम निवासु॥ १८॥

जिस जीव ने माया-ममता त्याग दी है, सब ओर से विरत हो गया है, गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, उसके भीतर परब्रह्म निवास करता है।

जिहि प्रानी हउमै तजी करता राम पछान।
कहु नानक वहु मुकति नरु इह मन साची मान॥ १९॥

जिस प्राणी ने अभिमान त्यागकर सृजनहार हरि को पहचान लिया है, गुरु नानक-कथन है कि वह मनुष्य मुक्त है। ऐ मन, यह बात

सच्ची करके मानो (अर्थात् इसे स्वीकार करो)।

भै नासन दुरमति हरन कलि मै हरि को नाम।
निस दिन जो नानक भजै सफल होहि तिह काम ॥२० ॥

कलियुग में हरि का नाम भय को नाश करनेवाला एवं दुर्मति को दूर करनेवाला है। गुरु नानक-कथन है कि जो उस नाम को रात-दिन भजता है, उसके सब काम सफल हो जाते हैं।

जिहबा गुन गोबिंद भजहु करन सुनहु हरि नाम।
कहु नानक सुन रे मना परहि न जम कै धाम॥ २१ ॥

जह्वा से परमात्मा के गुण गाओ, कानों से हरिनाम सुनो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो (ऐसा करने से) यम के स्थान पर नहीं पड़ोगे, अर्थात् नरक नहीं जाओगे।

जो प्रानी ममता तजै लोभ मोह अहंकार।
कहु नानक आपन तरै अउरन लेत उधार॥ २२ ॥

जो प्राणी लोभ, मोह, ममता और अभिमान का त्याग करता है, गुरु नानक कहते हैं कि वह स्वयं तो मुक्त होता ही है, अन्यों का भी उद्धार करता है।

जिउ सुपना अरु पेखना ऐसे जग कउ जानि।
इन मै कछु साचो नही नानक बिनु भगवान॥ २३ ॥

जैसे स्वप्न या तमाशा होता है, इस संसार को भी ऐसा ही जानो। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु को सिवा इसमें और कुछ भी सत्य नहीं है।

निस दिन माइआ कारने प्रानी डोलत नीत।
कोटन मै नानक कोऊ नाराइन जिह चीत॥ २४॥

माया के कारण रात-दिन नित्यप्रति प्राणी डोलता रहता है। गुरु नानक-मत है कि करोड़ों में कोई विरला ही ऐसा होता है,

जिसके हृदय में परमात्मा बसता है।

जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत।
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत॥ २५॥

जैसे पानी के गिरने से नित्य बुलबुले उपजते और नष्ट होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मित्र, सुनो! इस संार की रचना वैसी ही हुई है (वह भी पानी के बुलबुले की तरह बनता-टूटता रहता है)।

प्रानी कछू न चेतई मदि माइआ कै अंध।
कहु नानक बिनु हरि भजन परत ताहि जम फंध॥ २६॥

हे प्राणी, तुम माया के अन्धे मद के कारण कुछ भी होश नहीं करते। गुरु नानक-कथन है कि हरि-भजन के बिना तुम्हें यमदूतों के फन्दे में पड़ना होगा। (अर्थात् जो माया-मद से नहीं उबरता, वह यमदूतों के दण्ड का अधिकारी होता है।)।

जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह।
कहु नानक सुन रे मना दुरलभ मानुख देह॥ २७॥

यदि पूर्ण सुख चाहते हो, तो प्रभु की शरण लो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! यह मनुष्य-शरीर दुर्लभ है (इसी में प्रभु-भजन की सम्भावना है)।

माइआ कारनि धावही मूरख लोग अजान।
कहु नानक बिनु हरि भजनि बिरथा जनमु सिरान॥ २८॥

मूर्ख, अज्ञानी लोग माया के पीछे दौड़ते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन के बिना उनका समूचा मनुष्य-जन्म ही निरर्थक बीतता है।

जो प्रानी निसि दिनि भजे रूप राम तिह जानु।
हरि जनि हरि अंतरु नही नानक साची मानु॥ २९॥

जो प्राणी रात-दिन परमात्मा का भजन करता है, उसे राम का ही

मूर्त्त-रूप समझो। गुरु नानक कहते हैं कि ह रि तथा हरि के सेवकों में कोई अन्तर नहीं होता, यह बात सच्ची मानो।

मनु माइआ मै फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंद नाम।
कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने काम॥ ३०॥

मन माया के बन्धनों में फँसा है, हरिनाम विस्मृत हुआ पड़ा है। गुरु नानक पूछते हैं कि हरिनाम-भजन के बिना ऐसा जीवन किस काम का है?

प्रानी राम न चेतई मद माइआ कै अंध।
कहु नानक हरि भजन बिनु परत ताहि जम फंध॥ ३१॥

हे प्राणी, तुम मायामद के कारण रामनाम का स्मरण नहीं करते; गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन के बिना ऐसे प्राणी को यम का फंदा लगता है।

सुख मै बहु संगी भए दुख मै संगि न कोइ।
कहु नानक हरि भजु मना अंति सहाई होइ॥ ३२॥

सुख में अनेक साथी-संगी बन जाते हैं, दुःख में कोई साथ नहीं देता। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन! हरि-भजन करो, वही अन्त में तुम्हारा सहायक होगा।

जनम जनम भरमत फिरिओ मिटिओ न जम को त्रासु।
कहु नानक हरि भजु मना निरभै पावहि बासु॥ ३३॥

जीव जन्म-जन्म से भ्रम में पड़ा है, किन्तु उसको यमों का भय दूर नहीं हुआ। गुरु नानक कथन है कि ऐ मन, तुम हरि-भजन करो, पूर्णतः निर्भय हो जाओगे।

जतन बहुतु मै करि रहिओ मिटिओ न मन को मानु।
दुरमति सिउ नानक फधिओ राखि लेहु भगवान॥ ३४॥

मैंने बहुत यत्न किए हैं, किन्तु मन का अभिमान दूर नहीं हुआ;

नानक कहते हैं कि जीव दुर्मति से बँधा है, हे भगवान्, उसकी रक्षा करो।

बाल जुआनी अरु बिरध फुनि तीनि अवसथा जानि।
कहु नानक हरि भजन बिनु बिरथा सभ ही मान॥ ३५॥

बचपन, यौवन और फिर बुढ़ापा, ये तीन अवस्थाएँ जानो, (किन्तु) गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन के बिना ये तीनों व्यर्थ हैं।

करणो हुतो सु ना कीओ परिओ लोभ कै फंध।
नानक समिओ रमि गइओ अब किउ रोवत अंध॥ ३६॥

(ऐ जीव) तुम्हें जो करना चाहिए था, वह तुमने लोभ के फन्दे में पड़ने के कारण नहीं किया। गुरु नानक कहते हैं कि अवसर बीत गया, (ऐ अन्धे जीव) अब क्यों रोते हो?

मनु माइआ मै रमि रहिओ निकसत नाहिन मीत।
नानक मूरति चित्र जिउ छाडित नाहनि भीत॥ ३७॥

ऐ मित्र, तुम्हारा मन मायावी बातों में रमा है, निकलता ही नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि (तुम्हारी स्थिति ऐसी है) जैसे चित्र-लिखी मूर्ति दीवार को नहीं छोड़ती (अर्थात् जैसे मूर्ति दीवार नहीं छोड़ पाती, वैसे ही तुम भी माया को नहीं छोड़ पाते)।

नर चाहत कछु अउर अउरै की अउरै भई।
चितवत रहिओ ठगउर नानक फासी गलि परी॥ ३८॥

मनुष्य कुछ चाहता है, हो कुछ और का और जाता है; दूसरों को ठगने की योजनाएँ बनाते-बनाते, गुरु नानक कहते हैं, अपने ही गले में फन्दा पड़ जाता है।

जतन बहुत सुख के कीए दुख को कीओ न कोइ।
कहु नानक सुन रे मना हरि भावै सो होइ॥ ३९॥

मनुष्य सुख प्राप्त करने के बहुत यत्न करता है, दु:ख पाने की

आशंका वाली भी कोई बात वह नहीं करता। (किन्तु) गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! होता वही है, जो परमात्मा को स्वीकार होता है।

जगतु भिखारी फिरतु है सभ को दाता राम।
कहु नानक मन सिमरु तिह पूरन होवहि काम॥ ४०॥

सारा संसार भिक्षुक है और सबका दाता राम है। गुरु नानक कहते हैं कि नित्य मन में उसी का स्मरण करो, सब कार्य पूर्ण हो जाएँगे।

झूठै मानु कहा करै जगु सुपने जिउ जान।
इन मै कछु तेरो नही नानक कहिओ बखान॥ ४१॥

झूठा अभिमान क्यों करते हो, इस संसार को सपना-मात्र समझो। इस संसार में तुम्हारा कुछ भी नहीं, गुरु नानक का ऐसा कथन है।

गरबु करतु है देह को बिनसै छिन मै मीति।
जिहि प्रानी हरि जसु कहिओ नानक तिहि जगु जीति॥४२॥

ऐ मित्र, शरीर का क्या गुमान करते हो, यह तो क्षण-भर में ही विनष्ट हो जाएगी। गुरु नानक कहते हैं कि जिस प्राणी ने प्रभु का यशोगान किया है, (समझो कि) उसने जगत को जीत लिया है।

जिह घटि सिमरनु राम को सो नरु मुकता जानु।
तिहि नर हरि अंतरु नही नानक साची मानु॥ ४३॥

जिसके अन्तर्मन में प्रभु राम का स्मरण होता है, उस मनुष्य को मुक्त समझो। गुरु नानक कहते हैं, सच मानो कि ऐसे मनुष्य तथा स्वयं हरि में कोई अन्तर नहीं होता।

एक भगति भगवान जिह प्रानी कै नाहि मन।
जैसे सूकरु सुआन नानक मानो ताहि तन॥ ४४॥

जिस प्राणी के मन में एक भगवान् की भक्ति नहीं है, गुरु नानक-मतानुसार उस व्यक्ति का शरीर कुत्ते और सूअर के समान है।

सुआमी को ग्रिहु जिउ सदा सुआन तजत नही नित।
नानक इह बिधि हरि भजउ इक मनि हुइ इकि चित ॥४५॥

जैसे कुत्ता स्वामी का द्वार कभी नहीं छोड़ता, गुरु नानक-मतानुसार, वैसे ही मनुष्य को भी एक-मन, दत्त-चित्त होकर हरि का भजन करना चाहिए।

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु।
नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर इसनानु॥ ४६ ॥

तीर्थ, व्रत और दानादि करके जो जीव मन में अभिमान धारण करता है; गुरु नानक कहते हैं कि (उसके वे धर्म-कर्म) उसके लिए वह सब ऐसे ही निष्फल रहते हैं, जैसे हाथी द्वारा किया स्नान! (हाथी स्नान करने के बाद धूल-मिट्टी उड़ाकर अपने शरीर पर डाल लेता है)।

सिरु कंपिओ पग डगमगै नैन जोति ते हीन।
कहु नानक इह बिधि भई तऊ न हरि रस लीन॥ ४७ ॥

(वृद्धावस्था में) मनुष्य का सिर काँपने लगता है, पाँव डगमगाते हैं, नयनों में ज्योति नहीं रह जाती। गुरु नानक कहते हैं कि यह अवस्था आ गई, तो भी (मनुष्य ने) हरि-रस का पान नहीं किया। (अर्थात् बुढ़ापा आ गया, किन्तु मनुष्य फिर भी भजन नहीं करता।)।

निज करि देखिओ जगतु मै को काहू को नाहि।
नानक थिरु हरि भगति है तिह राखो मन माहि॥ ४८ ॥

मैंने संसार को अपना बनाकर भी देखा, किन्तु कोई किसी का नहीं (ऐसा परिणाम प्रतीत हुआ)। गुरु नानक कहते हैं कि एकमात्र हरि-भक्ति स्थिर है, उसी को हृदय में धारण किए रहो।

जग रचना सभ झूठु है जानि लेहु रे मीत।
कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीत॥ ४९ ॥

ऐ मित्र, भलीभाँति समझ लो कि संसार की रचना मिथ्या है,

नानक-मतानुसार यह बालू की दीवार की नाईं कभी स्थिर नहीं रह सकती।

राम गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवार।
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारि॥ ५०॥

राम भी चल बसे, रावण भी मृत्यु को प्राप्त हुआ, इनके बड़े-बड़े परिवार थे। (इसी प्रकार) गुरु नानक-मतानुसार इस संसार में कुछ भी स्थायी नहीं, यह तो स्वप्नवत् संसार है।

चिंता ताकी कीजीऐ जो अनहोनी होइ।
इह मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ॥ ५१॥

चिन्ता उस बात की होनी चाहिए, जो अनहोनी है (अर्थात् होता तो सब होनहार है, फिर चिन्ता क्यों हो?); गुरु नानक कहते हैं कि यह संसार-पथ ऐसा ही है, इस पर कोई स्थिर नहीं रह पाया।

जो उपजिओ सो बिनसिहै परो आजु के काल।
नानक हरि गुन गाइ ले छाड सगल जंजाल॥ ५२॥

(इस संसार में) जो पैदा हुआ है, वह नाश को प्राप्त होता है; वह आज या कल गिरने ही वाला है अर्थात् नश्वर है। अत: गुरु नानक कहते हैं कि समस्त सांसारिक जंजाल को त्यागकर एकाग्र भाव से हरि-गुणगान कर लो।

॥ दोहरा॥

बलु छुटकिओ बंधन परे कछू न होत उपाइ।
कहु नानक अब ओट हरि गजि जिउ होहु सहाइ॥ ५३॥

दोहरा॥ बल छूट गया है, बंधन पड़े हैं, अब कोई उपाय कारगर नहीं हो रहा है। गुरु नानक कहते हैं कि अब केवल हरि का ही सहारा है, जो गज को ग्राह से संरक्षण देने के लिए आए थे (मुझे भी वही बचा सकेंगे)।

बलु होआ बंधन छुटे सभ किछु होत उपाइ।
नानक सभ किछु तुमरै हाथ मै तुम ही होत सहाइ ॥ ५४ ॥

बल भी मिल जाता है, बंधन छूट जाते हैं, सब प्रकार की निराशा में भी उपाय दीख पड़ते हैं। गुरु नानक-कथन है कि हे प्रभु, सब कुछ तुम्हारे हाथ है, तुम्हीं सबके सहायक हो (कोई विपरीत परिस्थिति तुम्हारे संरक्षण के विरुद्ध किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकती)।

संग सखा सभ तजि गए कोउ न निबहिओ साथ।
कहु नानक इह बिपत मै टेक एक रघनाथ ॥ ५५ ॥

संगी-साथी तो बीच में ही छोड़ जाते हैं, कोई साथ नहीं निभाता। गुरु नानक कहते हैं कि विपत्तियों में एकमात्र प्रभु राम का ही सहारा होता है।

नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुर गोबिंद।
कहु नानक इह जगत मै किन जपिओ गुरमंतु ॥ ५६ ॥

न नाम जपते हैं, न सत्संगति करते हैं, गुरु और प्रभु का नाम भी रह गया है; गुरु नानक का कथन है कि कोई विरला ही गुरु-मन्त्र जपता है (शेष सबके लिए तो उक्त तत्त्व रह गए अर्थात् व्यर्थ हैं)।

राम नामु उरि मै गहिओ जाकै सम नही कोइ।
जिह सिमरत संकट मिटै दरसु तुहारो होइ ॥ ५७ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १४२६-१४२९)

(मैंने) रामनाम को हृदय में धारण किया है, जिसके समान (रामनाम के समान) जगत में कुछ नहीं अर्थात् (मैंने) अद्वितीय राम-नाम को हृदय में धारण किया है। इसके (रामनाम के) स्मरण से सब संकट मिटते तथा प्रभु के दर्शन होते हैं।

੧ੳ

अनंदु साहिब

[गुरु कृपा से आध्यात्मिक उपलब्धियों को पाकर वास्तविक आनन्द की दशा का वर्णन]

और

मुंदावणी

[अर्थात् ग्रन्थ की समाप्ति पर गुरुवाणी को मनन करने का सन्देश]

अनंदु साहिब

रामकली महला ३ अनंदु

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरु मै पाइआ।
सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ।
राग रतन परवार परीआ सबद गावण आईआ।
सबदो त गावहु हरी केरा मनि जिनी वसाइआ।
कहै नानकु अनंदु होआ सतिगुरु मै पाइआ॥ १॥

हे भाई, मुझे सच्चा सतिगुरु प्राप्त हुआ है, इसलिए मैं आनन्द-मग्न हूँ। सहजभाव से प्रेम में रत रहते हुए मैंने सतिगुरु को प्राप्त किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे मन में खुशियों के खजाने खुल गये हैं। रत्नों-जैसे अमूल्य राग-रागनियाँ तथा उन्हें गानेवाली परियाँ खुशी के गीत गाने मेरे मन में आयी हैं, जिससे मन में परमात्मा का आभास होने लगा है। जिन्होंने मन में हरि को बसा लिया है, वह सब आकर हमारे संग प्रभु-प्रशस्ति के गीत गाएँ। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु की प्राप्ति मेरे लिए परमानन्द का कारण बनी है।

ए मन मेरिआ तू सदा रहु हरि नाले।
हरि नालि रहु तू मंन मेरे दूख सभि विसारणा।
अंगीकारु ओहु करे तेरा कारज सभि सवारणा।

(आनन्द की यह वाणी गुरु अमरदासजी ने अपने पौत्र आनन्द के जन्म पर सन् १५५४ में लिखी थी। आम सांसारिक खुशियों के समय संगीत और गाना-बजाना होता है। इस वाणी में गुरुजी ने आध्यात्मिक उपलब्धियों की खुशी को मानवीय अनुभवों के बीच आयी खुशियों से उपमा दी है। सारी चर्चा अलंकारिक है। परमात्मा से मिलन एक अनिर्वचनीय आनन्द का कारण है और यह सुख गुरुवाणी से प्राप्त है। इन्हीं तथ्यों को आनन्द की इस वाणी में गुरुजी ने अपने ढंग से प्रस्तुत किया है।)

सभना गला समरथु सुआमी सो किउ मनहु विसारे।
कहै नानकु मंन मेरे सदा रहु हरि नाले॥ २॥

ऐ मेरे मन, तू सदा हरि से प्रीत लगाए रख, क्योंकि उसके संग प्रीत लगाने से वह तेरे सब दुःखों को भुला देगा। वह सब प्रकार से तेरी सहायता करता है और तेरे कार्यों को सँवारता है। वह मालिक सब प्रकार से समर्थ है, तू उसे क्यों मन से विसारता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मेरे मन, तू सदा हरि के साथ बना रह।

साचे साहिबा किआ नाही घरि तैरै।
घरि त तैरै सभु किछु है जिसु देहि सु पावए।
सदा सिफति सलाह तेरी नामु मनि वसावए।
नामु जिन कै मनि वसिआ वाजे सबद घनेरे।
कहै नानकु सचे साहिब किआ नाही घरि तैरै॥ ३॥

हे मेरे सच्चे स्वामी, तुम्हारे घर क्या नहीं है? तुम्हारे घर तो सब कुछ है। किन्तु जिसे तुम देते हो वही पा सकता है। जो जीव सदा तुम्हारी कीर्ति का गान करता है और मन में तुम्हारे नाम को बसाता है, उनके मन में नाम के बसने के साथ-साथ अनेक आध्यात्मिक नाद बजने लगते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मेरे सच्चे मालिक हमारे घर सब कुछ है, जिसे चाहो उसे दो।

साचा नामु मेरा आधारो।
साचु नामु अधारु मेरा जिनि भुखा सभि गवाईआ।
करि सांति सुख मनि आइ वसिआ
जिनि इछा सभि पुजाईआ।
सदा कुरबाणु कीता गुरु विटहु
जिस दीआ एहि वडिआईआ।

कहै नानकु सुणहु संतहु सबदि धरहु पिआरो।
साचा नामु मेरा आधारो॥ ४॥

प्रभु का सच्चा नाम ही मेरा सहारा है। यह सच्चा हरि-नाम ही मेरा ऐसा सहारा है, जिसने मेरी सब तृष्णाओं को दूर कर दिया है। इसके मन में आने से मुझे शान्ति और सुख प्राप्त हुआ है और मेरी सब आकांक्षाएँ पूर्ण हो गयी हैं। मैं अपने गुरु पर से सदा क़ुर्बान जाता हूँ, जिसके कारण यह सब प्रतिष्ठा मुझे मिली है। गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, गुरु के शब्द से प्यार करो और सच्चे प्रभु के नाम का सहारा लो।

वाजे पंच सबद तितु घरि सभागै।
घरि सभागै सबद वाजे कला जितु घरि धारीआ।
पंच दूत तुधु वसि कीते कालु कंटकु मारिआ।
धुरि करमि पाइआ तुधु जिन कउ सि नामि हरि कै लागे।
कहै नानकु तह सुखु होआ तितु घरि अनहद वाजे॥५॥

हे प्रभु, मेरे मन में सौभाग्यपूर्वक पाँचों शब्दों का संगीत जाग उठा है। जहाँ तुमने अपनी कृपा प्रदान की है, वहीं मन भाग्यशाली खुशियों से भर गया है। तुमने काम-क्रोधादि पाँचों दूतों को वश में कर लिया है और काल का काँटा दूर किया है। तुम्हारे कारण जिनके भाग्य में हरि-नाम शुरू से ही डाल दिया गया है, हे हरि, वे तुम्हारे नाम का नित्य गान करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके हृदय में अमृत-वाणी की ध्वनि जाग्रत हुई, उसे परमसुख की प्राप्ति हुई है।

साची लिवै बिनु देह निमाणी।
देह निमाणी लिवै बाझहु किआ करे वेचारीआ।
तुधु बाझु समरथ कोइ नाही क्रिपा करि बनवारीआ।
एस नउ होरु थाउ नाही सबदि लागि सवारीआ।
क़है नानकु लिवै बाझहु किआ करे वेचारीआ॥ ६॥

परमात्मा के साथ सच्ची लग्न के बिना यह शरीर व्यर्थ है। लग्न के बिना बेचारी देह किस काम की है। तुम्हारे बिना, हे वाहिगुरु, कौन समर्थ है, जो हम पर कृपा करे। हमारे शरीर को और कोई सहारा ही नहीं, केवल शब्द की लय में ही उसे सँवारा जा सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की लग्न के बिना बेचारी देह व्यर्थ है।

आनंदु आनंदु सभु को कहै आनंदु गुरू ते जाणिआ।
जाणिआ आनंदु सदा गुर ते क्रिपा करे पिआरिआ।
करि किरपा किलविख कटे गिआन अंजनु सारिआ।
अंदरहु जिन का मोहु तुटा तिन का सबदु सचै सवारिआ।
कहै नानकु एहु अनंदु है आनंदु गुर ते जाणिआ॥ ७॥

आनन्द की बातें तो सब करते हैं, किन्तु वास्तविक आनन्द की जानकारी गुरु से ही प्राप्त होती है। गुरु जब अपने प्रिय पात्रों पर कृपा करता है, तो आध्यात्मिक आनन्द की उपलब्धि होती है। गुरु कृपा करके हमारे पापों का नाश कर देता है और हमारे ज्ञान-नेत्रों पर सूझ का अंजन लगाता है; जिससे जीव मोह-माया से अलग हो जाता है और उसे जीवन की सही चेतना प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि यही दशा आनन्द की दशा है और इसकी प्राप्ति गुरु के माध्यम से ही होती है।

बाबा जिसु तू देहि सोई जनु पावै।
पावै त सो जनु देहि जिसनो होरि किआ करहि वेचारिआ।
इकि भरमि भूले फिरहि दहदिसि इकि नामि लागि सवारिआ।
गुरपरसादी मनु भइआ निरमलु जिना भाणा भावए।
कहै नानकु जिसु देहि पिआरे सोई जनु पावए॥ ८॥

हे परमात्मा, जिसे तुम देते हो वही जीव प्राप्त कर सकता है। प्राप्ति तुम्हारी इच्छा पर है; जिसे भी देते हो उसी को मिलती है। दूसरा

कोई क्या कर सकता है। कुछ जीव ऐसे हैं, जो भ्रम में पड़े चतुर्दिक् भटकते रहते हैं और कुछ जीव ऐसे भी हैं, जो हरि-नाम के रस में पगे अपने जीवन को सँवार लेते हैं। जिन जीवों को परमात्मा की इच्छा शिरोधार्य होती है, वे गुरु-कृपा से निर्मल-चित्त हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा जिसे देता है वही जीव पा सकता है।

आवहु संत पिआरिहो अकथ की करह कहाणी।
करह कहाणी अकथ केरी कितु दुआरै पाईऐ।
तनु मनु धनु सभु सउपि गुर कउ हुकमि मंनिऐ पाईऐ।
हुकमु मंनिहु गुरू केरा गावहु सची बाणी।
कहै नानकु सुणहु संतहु कथिहु अकथ कहाणी॥ ९॥

(गुरु अमरदास इसके आगे आनन्द की वाणी में परमात्मा का स्तुतिगान करने को कहते हैं और बताते हैं कि यह स्तुतिगान क्योंकर किया जा सकता है।) हे सन्तो, आओ मिल-बैठकर उस अनिर्वचनीय परमात्मा की बातें करें। उस अकथनीय की बातें करके यह जानें कि उसे क्योंकर पाया जा सकता है। (इसका ढंग यह है कि) तन-मन-धन हम सब कुछ गुरु को सौंपकर केवल उसके आदेशों का पालन करने लगें। गुरु की आज्ञा का पालन करें और उसकी सच्ची वाणी का गान करें, तो गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, उस अनिर्वचनीय परमात्मा की कथा कहने का हक़ हमें मिलता है।

ए मन चंचला चतुराई किनै न पाइआ।
चतुराई न पाइआ किनै तू सुणि मंन मेरिआ।
एह माइआ मोहणी जिनि एतु भरमि भुलाइआ।
माइआ त मोहणी तिनै कीती जिनि ठगउली पाईआ।
कुरबाणु कीता तिसै विटहु जिनि मोहु मीठा लाइआ।
कहै नानकु मन चंचल चतुराई किनै न पाइआ॥ १०॥

हे मन, चंचलता और चतुराई से आज तक किसी को परमात्मा नहीं मिला। ऐ मेरे मन, ध्यान देकर सुन कि परमात्मा की प्राप्ति में चतुराई बेकार है। इस तरह के भ्रम मोहिनी माया के द्वारा डाले जाते हैं। ये मोहिनी माया ही जीवों को ठगती है और पथभ्रष्ट कर देती है। मैं तो उस पर क़ुर्बान हूँ जो इस मुँह की मिठास को दूर कर देता है। गुरु नानक कहते हैं कि चंचलता, चतुराई से प्रभु नहीं मिलता (इसके लिए समर्पण–भाव की अपेक्षा होती है)।

ए मन पिआरिआ तू सदा सचु समाले।
एहु कुटंबु तू जि देखदा चलै नाही तैरै नाले।
साथि तैरै चलै नाही तिसु नालि किउ चितु लाईऐ।
ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ।
सतिगुरू का उपदेसु सुणि तू होवै तैरै नाले।
कहै नानकु मन पिआरे तू सदा सचु समाले॥ ११॥

हे मेरे प्यारे मन, तुम सदा सत्य को धारण करो, उसी का स्मरण करो, क्योंकि यह कुटुम्ब–परिवार, जिसे तुम अपना समझते हो, तुम्हारा साथ देनेवाला नहीं है। जो तुम्हारे साथ नहीं चलेगा, उससे लग्न लगाने का क्या लाभ? इसलिए ऐसा काम कभी नहीं करना चाहिए, जिससे बाद में पछताना पड़े। तू सतिगुरु का उपदेश श्रवण कर, यह तेरा साथ देगा। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ प्यारे मन, तू सदा सत्य को धारण कर।

अगम अगोचरा तेरा अंतु न पाइआ।
अंतो न पाइआ किनै तेरा आपणा आपु तू जाणहे।
जीअ जंत सभि खेलु तेरा किआ को आखि वखाणए।
आखहि त वेखहि सभु तू है जिनि जगतु उपाइआ।
कहै नानकु तू सदा अगंमु है तेरा अंतु न पाइआ॥ १२॥

हे परमात्मा, तू अगम्य और अगोचर है, तेरा अन्त कोई नहीं जानता, अपने आपको केवल तू ही पहचानता है। ये जीव-जन्तु सब तुम्हारा ही खेल है, फिर भला ये क्या बता सकते हैं। देखना और कहना सब तुम्हारा सामर्थ्य है, क्योंकि तुम्हीं ने इस समूचे संसार को पैदा किया है। गुरु नानक कहते हैं कि तुम सदा हमारी पहुँच से बाहर हो, तुम्हारा अन्त कोई नहीं जानता।

सुरि नर मुनि जन अंम्रितु खोजदे सु अंम्रितु गुर ते पाइआ।
पाइआ अंम्रितु गुरि क्रिपा कीनी सचा मनि वसाइआ।
जीअ जंत सभि तुधु उपाए इकि वेखि परसणि आइआ।
लबु लोभु अहंकारु चूका सतिगुरू भला भाइआ।
कहै नानकु जिसनो आपि तुठा
तिनि अंम्रितु गुर ते पाइआ॥ १३॥

देवता, ऋषि, मुनि और मनुष्य सब अमरता की खोज कर रहे हैं, किन्तु वह अमृत-तत्त्व गुरु से प्राप्त हुआ है। सत्य को मन में बसा लेने पर गुरु की कृपा से अमृत की प्राप्ति होती है। सभी जीव-जन्तु तुम्हीं ने पैदा किये हैं, किन्तु उनमें से कोई विरला ही गुरुकी शरण लेता है। ऐसे जीव का अहंकार, लोभ और मोह समाप्त हो जाता है और उसे गुरु की शरण ही भाती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिस पर प्रभु प्रसन्न हो जाता है, वही गुरु से अमृत प्राप्त करता है।

भगता की चाल निराली।
चाला निराली भगताह केरी बिखम मारगि चलणा।
लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना बहुतु नाही बोलणा।
खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा।
गुरपरसादी जिनी आपु तजिआ हरि वासना समाणी।
कहै नानकु चाल भगता जुगहु जुगु निराली॥ १४॥

भक्तों का आचरण संसार से अलग होता है, वे हमेशा कठोर पथ के पथिक होते हैं, इसीलिए उनकी चाल निराली होती है। वे लोभ, मोह, अहंकार, तृष्णा आदि को त्यागकर स्थिर हो जाते हैं और उनकी वाचालता भी शान्त हो जाती है। उनका मार्ग तलवार से भी तेज और बाल से भी अधिक बारीक होता है। गुरु की कृपा से जिन्होंने अहम्भाव का त्याग कर दिया है, उन्हीं में हरि की श्रद्धा वास करती है। गुरु नानक कहते हैं कि भक्तों की चाल युग-युग से निराली रही है।

जिउ तू चलाइहि तिव चलह
सुआमी होरु किआ जाणा गुण तेरे।
जिव तू चलाइहि तिवै चलह जिना मारगि पावहे।
करि किरपा जिन नामि लाइहि सि हरि हरि सदा धिआवहे।
जिसनो कथा सुणाइहि आपणी सि गुरदुआरै सुखु पावहे।
कहै नानकु सचे साहिब जिउ भावै तिवै चलावहे॥ १५॥

हे मेरे मालिक, जैसे तुम चलाते हो, मुझे वैसे ही चलना है; इससे अधिक मैं तुम्हारे गुणों से परिचित नहीं हूँ। जैसे तुम चलाते हो और जिस मार्ग पर तुम डालते हो उसी पर चलना मेरा लक्ष्य है। कृपा करके जिसे तुम अपने नाम से बाँध लेते हो, वह सदा हरि-नाम का ध्यान करने लगता है। जिसे तुम अपनी कथा सिखा देते हो, वही गुरु का आश्रय लेकर सुखों को प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे मेरे सच्चे स्वामी, तुम जैसा चाहते हो वैसे ही जीवों को चलाते हो।

एहु सोहिला सबदु सुहावा।
सबदो सुहावा सदा सोहिला सतिगुरू सुणाइआ।
एहु तिन कै मंनि वसिआ जिन धुरहु लिखिआ आइआ।
इकि फिरहि घनेरे करहि गला गली किनै न पाइआ।
कहै नानकु सबदु सोहिला सतिगुरू सुणाइआ॥ १६॥

ये यशोगान की वाणी ही परमात्मा को प्रिय है। सतिगुरु के द्वारा सुनाया गया यह यशोगान सदा सबको प्रिय है। जिन जीवों को परमात्मा के दरबार में ही यह वरदान प्राप्त हो जाता है, उन्हीं के मन में यह कीर्तिगान निवास करता है। शेष बहुत घूमते और बातें करते हैं। बातों से किसी को नहीं मिलता। गुरु नानक कहते हैं कि वाणी का कीर्तिगान केवल सतिगुरु से ही उपलब्ध होता है।

पवितु होए से जना जिनी हरि धिआइआ।
हरि धिआइआ पवितु होए गुरमुखि जिनी धिआइआ।
पवितु माता पिता कुटंब सहित
सिउ पवितु संगति सबाईआ।
कहदे पवितु सुणदे पवितु से पवितु जिनी मंनि वसाइआ।
कहै नानकु से पवितु जिनी गुरमुखि हरि हरि धिआइआ ॥१७॥

जिन जीवों ने हरि का ध्यान किया वे पवित्र हो गये। गुरु के द्वारा हरि का ध्यान करनेवाले जीवों का जीवन पवित्र हो गया। उसका जीवन माता-पिता, कुटुम्ब-सहित पवित्र होता है और जिस संगति में वह बैठता है वह भी पवित्र हो जाती है। उसकी चर्चा करने-सुननेवाले भी पवित्र हो जाते हैं और जो उसे मन में बसा लेते हैं वे भी पवित्र होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के माध्यम से हरि-नाम का ध्यान करता है, वह निश्चित तौर पर पवित्र हो जाता है।

करमी सहजु न ऊपजै विणु सहजै सहसा न जाइ।
नह जाइ सहसा कितै संजमि रहे करम कमाए।
सहसै जीउ मलीणु है कितु संजमि धोता जाए।
मंनु धोवहु सबदि लागहु हरि सिउ रहहु चितु लाइ।
कहै नानकु गुरपरसादी सहजु उपजै इहु सहसा इव जाइ ॥१८॥

कर्म-काण्ड आदि करने से कभी सहज आनन्द की प्राप्ति नहीं होती। और सहज-अवस्था प्राप्ति किये बिना मन के संशयों का नाश नहीं होता। कितने भी भिन्न-भिन्न तरीकों से कर्म-काण्ड करने पर भी संशय दूर नहीं होता। जीव संशय के कारण मलिन हो गया है, किस तरीके से इसे निर्मल किया जा सकता है। मन को गुरु के शब्द-जल से धोओ और परमात्मा में ध्यान लगाओ; तभी गुरु नानक कहते हैं, गुरु की कृपा से सहज की प्राप्ति होगी और इसी से संशय का नाश होगा।

जीअहु मैले बाहरहु निरमल।
बाहरहु निरमल जीअहु त मैले तिनी जनमु जूऐ हारिआ।
एह तिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ।
वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि
नाही फिरहि जिउ बेतालिआ।
कहै नानकु जिन सचु तजिआ कूड़े
लागे तिनी जनमु जूऐ हारिआ॥ १९॥

जो लोग बाहर से उजले और भीतर से मलिन होते हैं अर्थात् जिनका मन दूषित और शरीर निर्मल होता है, वे जुए में जीवन की बाजी को हार देते हैं। उन्हें तृष्णा का महारोग लगा होता है, वे अपनी मृत्यु को भी विस्मृत कर देते हैं। वे लोग श्रुति में कही गयी बातों में हरि-नाम की महिमा को भुलाकर भूतप्रेत की तरह दूसरी बातों में भटकते रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो सत्य को त्यागकर मिथ्या में विचरण करते हैं, वे अपने जीवन को जुए की बाजी में हार देते हैं।

जीअहु निरमल बाहरहु निरमल।
बाहरहु त निरमल जीअहु निरमल
सतिगुर ते करणी कमाणी।
कूड़ की सोइ पहुचै नाही मनसा सचि समाणी।

जनमु रतनु जिनी खटिआ भले से वणजारे।
कहै नानकु जिन मंनु निरमलु सदा रहहि गुर नाले ॥२० ॥

किन्तु जो जीव मन और कर्म दोनों से पवित्र हैं अर्थात् जो बाहर-भीतर उजले हैं, वे सतिगुरु के आदेशानुसार कमाई करते हैं, अर्थात् गुरु के उपदेशों पर आचरण करते हैं। वहाँ मिथ्या बात की चर्चा नहीं होती, उनका मन सदैव सत्य में ही रमा रहता है। वे सौदागर भले हैं, जो मानव-जीवन-जन्म रूपी रत्न का सही मोल डालते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों का मन निर्मल है, वे सदा गुरु की शरण में बने रहते हैं।

जे को सिखु गुरू सेती सनमुखु होवै।
होवै त सनमुखु सिखु कोई जीअहु रहै गुर नाले।
गुर के चरन हिरदै धिआए अंतर आतमै समाले।
आपु छडि सदा रहै परणै गुर बिनु अवरु न जाणै कोए।
कहै नानकु सुणहु संतहु सो सिखु सनमुखु होए॥ २१ ॥

यदि कोई सिक्ख गुरु की ओर उन्मुख रहे, गुरु की शरण में विराजे तो उसकी आत्मा सदा गुरु के ध्यान में ही बनी रहती है। वह गुरु के चरणों को हृदय में धारण करता है और अन्तरात्मा में सदा उसे याद करता रहता है। वह अहम्भाव का त्याग कर देता है और गुरु के सिवाय दूसरे किसी का सहारा नहीं लेता। गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, ऐसा सिक्ख ही वास्तव में गुरुमुख कहलाता है।

जे को गुर ते वे मुखु होवै बिनु सतिगुर मुकति न पावै।
पावै मुकति न होरथै कोई पुछहु बिबेकीआ जाए।
अनेक जूनी भरमि आवै विणु सतिगुर मुकति न पाए।
फिरि मुकति पाए लागि चरणी सतिगुरू सबदु सुणाए।
कहै नानकु वीचारि देखहु विणु सतिगुर मुकति न पाए॥२२ ॥

जो कोई जीव गुरु से विमुख होता है वह सतिगुरु के बिना कभी मुक्ति नहीं पाता। मुक्ति किसी अन्यत्र जगह उसे नहीं मिल सकती, भले ही आप प्रतिभाशाली महात्माओं और प्रभु-प्राप्त जीवों से पूछ देखो। वह चाहे अनेक योनियों में भटकता रहे, किन्तु सतिगुरु के बिना उसे मुक्ति नहीं मिल सकती। जीव को यदि मुक्ति पाना है तो सतिगुरु की शरण में जाकर शब्द का अभ्यास करना होगा। गुरु नानक कहते हैं कि विचार कर देख लो, सतिगुरु के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती।

आवहु सिख सतिगुरू के पिआरिहो गावहु सची बाणी।
बाणी त गावहु गुरू केरी बाणीआ सिरि बाणी।
जिन कउ नदरि करमु होवै हिरदै तिना समाणी।
पीवहु अंम्रितु सदा रहहु हरि रंगि जपिहु सारिगपाणी।
कहै नानकु सदा गावहु एह सची बाणी॥ २३॥

हे सतिगुरु के प्यारे सिक्खो, आओ मिलकर सच्ची वाणी का गान करो। (यहाँ सच्ची वाणी पहुँचे हुए सन्तों-महात्माओं तथा गुरुओं की वाणी को कहा गया है। जो लोग ढोंगी थे, वे भी गुरुओं की नक़ल में वाणी कहने लगे थे—उनकी 'वाणी' को कच्ची वाणी कहा गया है।) प्रभु के प्रिय गुरुमुखों की वाणी है, शिरोमणि है; यह वाणी केवल उन्हीं जीवों के हृदय में समाती है, जिन पर परमात्मा की कृपादृष्टि होती है। वे ही जीव नामामृत का पान करते हैं, हरि-रंग में उल्लास मानते तथा प्रभु का यशोगान करते हैं। इसलिए गुरु नानक कहते हैं कि सदा सच्ची वाणी का गान करो।

सतिगुरू बिना होर कची है बाणी।
बाणी त कची सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी।
कहदे कचे सुणदे कचे कचीं आखि वखाणी।
हरि हरि नित करहि रसना कहिआ कछू न जाणी।

चितु जिन का हिरि लइआ माइआ बोलनि पए रवाणी।
कहै नानकु सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी॥ २४॥

सतिगुरु की वाणी के अतिरिक्त अन्य सब वाणी-सर्जन कच्ची वाणी है। सतिगुरु के मुखारविन्द से उच्चरित वाणी ही सच्ची है, अन्य सब कच्ची वाणी है। जो लोग मिथ्या (कच्ची) वाणी का उच्चारण भी मिथ्या है। (उक्त मिथ्या वाणी का उच्चारण करनेवाले) जिह्वा से तो हरि-हरि करते हैं, किन्तु उनके मन-मस्तिष्क पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता। उसका मन तो माया ने चुराया होता है, वे केवल जीभ ही चलाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु द्वारा उच्चारित वाणी के अतिरिक्त शेष सब वाणी कच्ची है।

गुर का सबदु रतंनु है हीरे जितु जड़ाउ।
सबदु रतनु जितु मंनु लागा एहु होआ समाउ।
सबद सेती मनु मिलिआ सचै लाइआ भाउ।
आपे हीरा रतनु आपे जिसनो देइ बुझाइ।
कहै नानकु सबदु रतनु है हीरा जितु जड़ाउ॥ २५॥

गुरु का शब्द हीरे-रत्न के समान है, उसी में मन जोड़ो। हरि-नाम (शब्द) रूपी रत्न में मन लगा है और अन्ततः उसी में लीन हो गया है। शब्द में मन के लीन हो जाने से सच्चे प्रभु से परमप्रेम हुआ है। शब्द का उद्‌गम हरि स्वयं ही हीरा-रत्न है, अपने-आप जीवों को विवेक प्रदान करता है और वही स्वयं उसी हीरे-रत्न रूपी शब्द में रमने के लिए मन को प्रेरित करता है—ऐसा गुरु नानक का मत है।

सिव सकति आपि उपाइ कै करता आपे हुकमु वरताए।
हुकमु वरताए आपि वेखै गुरमुखि किसै बुझाए।
तोड़े बंधन होवै मुकतु सबदु मंनि वसाए।

गुरमुखि जिसनो आपि करे सु होवै एकस सिउ लिव लाए।
कहै नानकु आपि करता आपे हुकमु बुझाए॥ २६॥

परमात्मा ने शिव और शक्ति (पुरुष और प्रकृति अथवा महाचेतन और माया) को स्वयं उत्पन्न किया है और अब स्वयं ही सबको हुक्म की डोरी (आदेशात्मक नियन्त्रण) में बाँध रखा है। हुक्म द्वारा परिचालित सब जीवों को स्वयं देखता तथा गुरु के द्वारा दूसरों को भी झुकाता है। यदि कोई जीव उसके नाम (शब्द) को मन में बसा लेता है, तो उसके बन्धन टूट जाते हैं, वह मुक्त होता है। गुरु के द्वारा वह स्वयं जिस पर कृपा करता है, वही उस परमतत्त्व से जुड़ता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह स्वयं कर्तार है और उसी के आदेश से सृष्टि नियंत्रण में चलती है।

सिम्रिति सासत्र पुंन पाप बीचारदे ततै सार न जाणी।
ततै सार न जाणी गुरू बाझहु ततै सार न जाणी।
तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता सुतिआ रैणि विहाणी।
गुर किरपा ते से जन जागे जिना
हरि मनि वसिआ बोलहि अंम्रित बाणी।
कहै नानकु सो ततु पाए जिसनो
अनदिनु हरि लिव लागै जागत रैणि विहाणी॥ २७॥

धर्म-शास्त्र और स्मृतियाँ पाप-पुण्य पर तो विचार करते हैं, किन्तु तत्त्व-ज्ञान की जानकारी किसी में नहीं। गुरु के बिना तत्त्व-ज्ञान की जानकारी कोई अन्य नहीं दे सकता। सारा संसार तीन गुणों (सत्, रज, तम गुण) के भ्रम में भटका है; अज्ञान की अँधेरी रात में सब जीव पक्की नींद सो रहे हैं। मात्र वे ही जीव जग पाये हैं, जिन पर गुरु की कृपा हुई है; उनके मन में हरि-नाम बसा है, वे नित्य अमृत-वाणी का उच्चारण करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव रात-दिन हरि की ध्यान में रहता और आध्यात्मिक जागृति में

जीता है, वही परमतत्त्व को पहचानता है।

माता के उदर महि प्रतिपाल करे सो किउ मनहु विसारीऐ।
मनहु किउ विसारीऐ एवडु दाता
जि अगनि महि आहारु पहुचावए।
ओसनो किहु पोहि न सकी
जिस नउ आपणी लिव लावए।
आपणी लिव आपे लाए गुरमुखि सदा समालीऐ।
कहै नानकु एवडु दाता सो किउ मनहु विसारीऐ॥ २८॥

जो प्रभु माता के गर्भ में भी हमारा पोषण करता है, उसे क्यों मन से भुलाते हो! वह महान् दाता, जो गर्भाग्नि में भी आहार पहुँचाता है, क्योंकर भुलाया जा सकता है? जिसे वह अपनी प्रीति के बन्धन प्रदान करता है, उसे कोई नहीं पहुँच सकता। अपनी प्रीति भी वह स्वयं ही प्रदान करता है, गुरु के द्वारा उसे चिर-स्मरणीय बनाया जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह महान् दाता मन से क्यों विस्मृत हो।

जैसी अगनि उदर महि तैसी बाहरि माइआ।
माइआ अगनि सभ इको जेही करतै खेलु रचाइआ।
जा तिसु भाणा ता जंमिआ परवारि भला भाइआ।
लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ।
एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ।
कहै नानकु गुर परसादी जिना
लिव लागी तिनी विचे माइआ पाइआ॥ २९॥

जैसी गर्भ की अग्नि है, वैसी ही बाहर माया की जलन है। माया और गर्भाग्नि एक सरीखी हैं, यही सृजनहार का खेल है। जैसा उसे स्वीकार हुआ, वैसे ही परिवार में जन्म लिया और सबकी खुशी का कारण बना। माया का छल प्रमाणित हुआ, गर्भ में परमात्मा से लगी

लग्न बाहर आते ही तृष्णा में बदल गयी। यह 'माया' ऐसी चीज है, जिससे परमात्मा विस्मृत होता, सांसारिक मोह जगता है तथा प्रभु को छोड़कर अन्यों से लग्न लगती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें गुरु-कृपा से प्रभु की लग्न लग जाती है, वे संसार के (कीच में भी कमल के समान) तत्त्व-ज्ञान पा लेते हैं।

हरि आपि अमुलकु है मुलि न पाइआ जाइ।
मुलि न पाइआ जाइ किसै विटहु रहे लोक विललाइ।
ऐसा सतिगुरु जे मिलै तिसनो
सिरु सउपीऐ विचहु आपु जाइ।
जिसदा जीउ तिसु मिलि रहै हरि वसै मनि आइ।
हरि आपि अमुलकु है भाग तिना के
नानका जिन हरि पलै पाइ॥ ३०॥

परमात्मा अमूल्य है, उसका मोल निश्चित नहीं किया जा सकता। लोग प्रयास कर-करके हार गये, किन्तु उसका सही मोल कोई नहीं पा सका। यदि सच्चा सतिगुरु प्राप्त हो जाय और जीव उसके प्रति समर्पित हो, तभी उसका अहम् नष्ट होता है। तब जीव अपने मूल को पहचानता है, जीव के मन में हरि बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु अमूल्य है; जो उसे पा लेते हैं, वे भाग्यशाली हैं।

हरि रासि मेरी मनु वणजारा।
हरि रासि मेरी मनु वणजारा सतिगुर ते रासि जाणी।
हरि हरि नित जपिहु जीअहु लाहा खटिहु दिहाड़ी।
एहु धनु तिना मिलिआ जिन हरि आपे भाणा।
कहै नानकु हरि रासि मेरी मनु होआ वणजारा॥ ३१॥

मेरा मन व्यापारी है, हरि-नाम उसकी व्यापारिक राशि है। इस राशि की पहचान मुझे सतिगुरु से प्राप्त हुई है। मन से नित्य मैं हरि-

हरि-नाम का जाप करता और प्रतिदिन का लाभ ले लेता हूँ। यह व्यापारिक धन (हरि-नाम) केवल उन्हीं जीवों को प्राप्त है, जिन्हें स्वयं परमात्मा स्वेच्छा से प्रदान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि मेरा व्यापारी मन हरि-नाम-राशि का व्यापार करता है।

ए रसना तू अनरसि राचि रही तेरी पिआस न जाइ।
पिआस न जाइ होरतु कितै जिचरु हरि रसु पलै न पाइ।
हरि रसु पाइ पलै पीऐ हरि रसु बहुड़ि न त्रिसना लागै आइ।
एहु हरि रसु करमी पाईऐ सतिगुरु मिलै जिसु आइ।
कहै नानकु होरि अनरस सभि
वीसरे जा हरि वसै मनि आइ ॥३२॥

ऐ मेरी जिह्वा, तू अन्य रसों में लगी है, इसीलिए तेरी प्यास नहीं बुझती। यह अमित प्यार तब तक नहीं बुझ सकता, जब तक तू हरि-नाम का रस नहीं पान कर लेती। एक बार हरि-नाम का रस पान कर लेने से फिर कभी तृष्णा नहीं जगती। यह हरि-रस सत्कर्मों के फलस्वरूप सतिगुरु की कृपा से प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब हरि-रस की लग्न लगती है, तब अन्य सब रस अपने-आप छूट जाते हैं।

ए सरीरा मेरिआ हरि तुम महि जोति रखी
ता तू जग महि आइआ।
हरि जोति रखी तुधु विचि ता तू जग महि आइआ।
हरि आपे माता आपे पिता
जिनि जीउ उपाइ जगतु दिखाइआ।
गुर परसादी बुझिआ ता चलतु होआ चलतु नदरी आइआ।
कहै नानकु स्रिसटि का मूलु रचिआ
जोति राखी ता तू जग महि आइआ॥ ३३॥

ऐ मेरे शरीर, परमात्मा ने तुम्हारे में अपनी ज्योति के अंश स्थापित किये हैं, तभी तुम प्रस्तुत रूप में जगत की शोभा बन पाये हो। प्रभु ने तुम्हें ज्योति दी है, तभी तुम जगत में आये हो। परमात्मा स्वयं ही तुम्हारे माता-पिता हैं, उसी ने तुम्हें वर्तमान अनुभव प्रदान किया है। गुरु-कृपा से ऐसा चमत्कार हुआ कि यह समूचा संसार तमाशा-रूप दीख पड़ने लगा। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु ने सृष्टि का मूल ज्योति से ही रचा है, उसी ज्योति का अंश तुममें रखा है, तभी तुम संसार में आये हो।

मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु सुणिआ।
हरि मंगलु गाउ सखी ग्रिहु मंदरु बणिआ।
हरि गाउ मंगलु नित सखीए सोगु दूखु न विआपए।
गुर चरन लागे दिन सभागे आपणा पिरु जापए।
अनहत बाणी गुर सबदि जाणी हरि नामु हरि रसु भोगो।
कहै नानकु प्रभु आपि मिलिआ करण कारण जोगो ॥३४॥

प्रभु-आगमन की बात सुनकर मन में चाव बढ़ा है अर्थात् परमात्मा के नाम के मन में प्रवेश होने से चाव बढ़ गया है। यह शरीर (घर) ही मन्दिर बना है, हे सखियो, सब मिलकर परमात्मा का मंगल-गान गाओ। हे सखियो, नित्य प्रभु के मंगल-गीत गाने से जीवन में शोक-दुःख नहीं व्यापता। गुरु के चरणों में शरण लेने से जीवन में सौभाग्य जन्मता है और परमात्मा (अपना प्रियतम) की अनुभूति होने लगती है। गुरु के शब्द द्वारा अनाहत वाणी का आनन्द मिला है, प्रभु-मिलन का रस पाया है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुखों को करन-कारन (समर्थ) परमात्मा स्वयं ही मिलता है।

ए सरीरा मेरिआ इसु जग महि आइकै
किआ तुधु करम कमाइआ।
कि करम कमाइआ तुधु सरीरा जा तू जग महि आइआ।

जिनि हरि तेरा रचनु रचिआ सो हरि मनि न वसाइआ।
गुर परसादी हरि मंनि वसिआ पूरबि लिखिआ पाइआ।
कहै नानकु एहु सरीरु परवाणु होआ
जिनि सतिगुर सिउ चितु लाइआ॥ ३५॥

ऐ मेरे शरीर, तुमने इस संसार में आकर क्या कर्म किया है? जबसे तुम संसार में आये हो, क्या कर्म कमाया है? जिस प्रभु ने तुम्हें रचा है, उस परमात्मा को ही तुमने मन में नहीं बसाया। गुरु की कृपा से मन में हरि बसा है और पूर्व-लिखित फल प्राप्त हुआ है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि इस शरीर में रहकर जीवात्मा सतिगुरु में मन लगा ले, तो शरीर-प्राप्ति सिद्ध हो जाएगी।

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।
एहु विसु संसारु तुम देखदे
एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ।
गुर परसादी बुझिआ जा वेखा
हरि इकु है हरि बिनु अवरु न कोई।
कहै नानकु एहि नेत्र अंध से सतिगुरि
मिलिऐ दिब द्रिसटि होई॥ ३६॥

ऐ मेरे नेत्रो, हरि ने तुम्हें प्रकाश (दृष्टि) दिया है, उसके अतिरिक्त अन्य किसी को मत देखो। प्रभु के अतिरिक्त अन्य को मत देखो, उसी के प्रसाद से तुम्हें दृष्टि प्राप्त हुई है। यह समूचा विश्व, जो तुम देख रहे हो, हरि का ही रूप है, हरि-रूप में ही दीख पड़ता है। गुरु की कृपा से हरि के एक-रूप होने का ज्ञान मिला है, उसके बिना और कोई

नहीं। नानक कहते हैं कि ये नेत्र तब तक अन्धे हैं, जब तक कि सतिगुरु के मिलाप से इन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त नहीं हो जाती।

ए स्रवणहु मेरिहो साचै सुनणै नो पठाए।
साचै सुनणै नो पठाए सरीरिं लाए सुणहु सति बाणी।
जितु सुणी मनु तनु हरिआ होआ रसना रसि समाणी।
सचु अलख विडाणी ता की गति कही न जाए।
कहै नानकु अंम्रित नामु सुणहु पवित्र
होवहु साचै सुनणै नो पठाए॥ ३७॥

ऐ मेरे कानो, तुम्हें सत्य की वाणी सुनने को नियत किया गया है। तुम्हें शरीर के साथ इसीलिए लगाया गया है कि तुम नित्य सत्य की वाणी का श्रवण करो। जिसने उस वाणी का श्रवण किया है, उसका तन-मन सुवासित हो गया है, उसकी जिह्वा हरि-रस में लीन हो गयी है। परमसत्य एवं अदृश्य आश्चर्यवान परमात्मा की गति बड़ी विचित्र है। इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हें सत्य की वाणी सुनने को यहाँ भेजा गया है, उसी अमृत-रस का श्रवण करो।

हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ।
वजाइआ वाजा पउण
नउ दुआरे परगटु कीए दसवा गुपतु रखाइआ।
गुरदुआरै लाइ भावनी इकना दसवा दुआरु दिखाइआ।
तह अनेक रूप नाउ नवनिधि तिसदा अंतु न जाई पाइआ।
कहै नानकु हरि पिआरै जीउ गुफा
अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ॥ ३८॥

हरि ने जीवात्मा को शरीर रूपी गुफा में रखकर श्वास-प्रश्वास का बाजा बजाया है, अर्थात् आत्मा को शरीर में स्थिर करके उसमें श्वास चलने लगा है। इस श्वास का बाजा सुनने के लिए प्रभु ने नौ द्वार

(शरीर के बाहरी छिद्र) प्रकट रखे हैं और दसवाँ द्वार गुप्त रखा है। जो जीव गुरु में विश्वास बनाते हैं, उन्हें दसवाँ द्वार भी प्रकट हो जाता है। वहाँ तरह-तरह के रूपों तथा नौ निधियों वाला हरि-नाम निवसित है, जिसका अन्त नहीं पाया जा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि प्यारे हरि ने आत्मा को शरीर की गुफा में रखकर उसमें श्वास फूँक दिया है।

एहु साचा सोहिला साचै घरि गावहु।
गावहु त सोहिला घरि साचै जिथै सदा सचु धिआवहे।
सचो धिआवहि जा तुधु भावहि गुरमुखि जिना बुझावहे।
इहु सचु सभना का खसमु है जिसु बखसे सो जनु पावहे।
कहै नानकु सचु सोहिला सचै घरि गावहे॥ ३९॥

परमसत्य सत्य प्रभु का सच्चा यशोगान हृदय रूपी घर में नित्य गाओ। उस हृदय-मन्दिर में प्रभु का कीर्तिगान करो, जहाँ सदैव परमात्मा का ध्यान बना रहता है। गुरु के माध्यम से जो जीव सच्चे परमात्मा का ध्यान करते हैं, वे ही परमात्मा को प्रवाण होते हैं। यह परमसत्य ही सबका स्वामी है; जिसे वह कृपापूर्वक देता है, वही पाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हृदय-मन्दिर में सत्य रूपी प्रभु का यश गाओ।

अनदु सुणहु वडभागीहो सगल मनोरथ पूरे।
पारब्रहमु प्रभु पाइआ उतरे सगल विसूरे।
दूख रोग संताप उतरे सुणी सची बाणी।
संत साजन भए सरसे पूरे गुर ते जाणी।
सुणते पुनीत कहते पवितु सतिगुरु रहिआ भरपूरे।
बिनवंति नानकु गुर चरण लागे वाजे अनहद तूरे॥ ४०॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ९१७-९२२)

हे भाग्यशाली जीवो, 'अनंदु' वाणी को सुनो, इससे तुम्हारे सब मनोरथ पूरे होते हैं; परब्रह्म प्रभु की प्राप्ति होती है और सब दुःख-

संताप दूर हो जाते हैं। सच्ची वाणी के श्रवण से त्रैताप का नाश होता है। यह सत्य-रूप वाणी गुरु से मिलती है, इससे सन्त-महात्मा उल्लास में विकसित हो जाते हैं। इस वाणी का उच्चारण करनेवाले पवित्र होते हैं, सुननेवाले भी पवित्र हो जाते हैं और उन्हें सब जगह वाहिगुरु व्याप्त दीख पड़ता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि जो जीव गुरु की शरण लेते हैं, उन्हें पूर्ण आनन्द प्राप्त होता है (उनके हृदय में अनाहत नाद के बाजे बजने लगते हैं)।

मुंदावणी

॥ महला ५ ॥

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो।
अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो।
जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो।
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरिधारो।
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो॥ १॥

एक थाल में सत्य, सन्तोष और ज्ञान नाम की तीन वस्तुएँ पड़ी हैं। (उन सबको मिलाकर भोजन बनाने के लिए पानी की जगह) अमृत-समान हरिनाम डाला गया है, जिसका सबको आसरा होता है। (जैसे जल बिना जीवन नहीं रहता, हरिनाम के बिना भी आध्यात्मिक जीवन नहीं होता।) (इस प्रकार तैयार किए गए भोजन को) यदि कोई खाता-है, भोगता है, तो उसकी गति हो जाती है, उद्धार होता है। (अन्य भोजनों के बिना गुजर चल सकती है, किन्तु) यह भोजन (वस्तु) छोड़ा नहीं जा सकता, नित्य हृदय में इसको धारण किया जाता है (सदैव इसी का भोजन किया जाता है)। इस अंधकारमय संसार को, हे प्रभु, तुम्हारे ही चरणों से लगकर तरा जा सकता है (उक्त भोजन के भोग से ही मुक्ति होती है), गुरु नानक कहते हैं, तब सब ओर ब्रह्म का आलोक

प्रकट होता है। (यह भोजन जिस थाल में बना है, वह कौन सा थाल है? उत्तर है—गुरुवाणी का यह ग्रंथ, जिसे पढ़ने और मनन करने से सत्य, सन्तोष, ज्ञान और नामामृत प्राप्त होता है।)।

॥ सलोक महला ५ ॥

तेरा कीता जातो नाही मैनो जोगु कीतोई।
मै निरगुणिआरे को गुणु नाही आपे तरसु पइओई।
तरसु पइआ मिहरामति होई सतिगुरु सजणु मिलिआ।
नानक नामु मिलै तां जीवां तनु मनु थीवै हरिआ॥ १ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १४२९)

तुम्हारा किया पता नहीं चलता, (किन्तु) मुझे तुम्हीं ने सामर्थ्य दिया है, मैं तुम्हारी ही शक्ति से कुछ कर सका हूँ (ग्रंथ-रचना की है)। मुझ निर्गुणी (गुणहीन) में कोई गुण नहीं, तुमने स्वयं तरस खाकर, दया-वश (मुझसे करवा लिया है)। तुम्हारी दया हुई, अत्यन्त कृपा से मुझे सच्चा गुरु मिल गया। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम में ही मेरे प्राण हैं, उसी से मेरा तन-मन हरा हो जाता है (मुझमें कोई कर्तृ-शक्ति पैदा होती है)।

''मुंदावणी'' समाप्ति को कहते हैं। यह पद एक पहेली जैसा है। एक थाल है, उसमें सत्य, सन्तोष और विवेक नाम की तीन वस्तुएँ हैं...आदि। बताओ वह थाल कौन-सा है?

੧ੳ

आरती

और

अरदास

[पाठ एवं अनुष्ठान के निर्विघ्न प्रारम्भ एवं समापन पर हार्दिक प्रभु-प्रार्थना]

आरती

॥ रागु धनासरी महला १ ॥

गगनमै थालु रवि चंदु दीपक बने

तारिका मंडल जनक मोती।

धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे

सगल बनराइ फूलंत जोती॥ १ ॥

कैसी आरती होइ। भवखंडना तेरी आरती।

अनहता सबद वाजंत भेरी॥ १ ॥॥ रहाउ॥

सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि

कउ सहस मूरति नना एक तुोही।

सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु

सहस तव गंध इव चलत मोही॥ २ ॥

सभ महि जोति जोति है सोइ।

तिस दै चानणि सभी महि चानणु होइ।

गुरसाखी जोति परगटु होइ।

जो तिसु भावै सु आरती होइ॥३ ॥

हरि चरण कवल मकरंद लोभित

मनो अनदिनुो मोहि आही पिआसा।

क्रिपा जलु देहि नानक सारिंग कउ

होइ जा ते तैरै नाइ वासा॥४॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३)

[कहते हैं, यह आरती गुरु नानकदेव जी ने जगन्नाथजी के मन्दिर में उच्चरित की।]

हे प्रभु, तुम्हारे पूजन के लिए गगन के थाल में चन्द्र और सूर्य के दो दीप जले हैं और समूचा तारामण्डल मानों थाल में मोती भरे हैं। स्वयं मलयगिरि के चन्दन की गन्ध धूप की सुगन्धि है, पवन चँवर झुला रहा है, तथा सृष्टि की समूची वनस्पति ही, हे परमात्मा, तुम्हारी आराधना के पुष्प हैं। तुम्हारी यह प्राकृतिक आरती नित्य और अति मनोहर है। हे भवखण्डन (आवागमन का नाश करनेवाले) प्रभु, यही तेरी मनमोहक आरती है। तुम्हारे सब जीवों के भीतर बज रहा अनाहत शब्द ही मन्दिर की भेरी है॥ १॥ रहाउ॥

(जिस प्रभु की स्तुति में आरती गाई जा रही है, वह सब जीवों के भीतर निवास करता है, इसलिये हे परमेश्वर!) तुम्हारी असंख्य (सहस्रों) आँखें हैं (अर्थात् सब जीव तुम्हारा ही रूप है, इसलिये उनकी आँखें तुम्हारी ही तो हैं), किन्तु तुम्हारी कोई भी आँख नहीं। इसी प्रकार तुम्हारी सहस्रों शक्लें हैं, किन्तु फिर भी तुम्हारी कोई शक्ल नहीं (अर्थात् तुम निर्गुण, निराकार हो)। तुम्हारे असंख्य विमल चरण हैं, निर्गुण रूप में कोई चरण नहीं। सगुण रूप में प्रकट होने पर (इन सब जीवों के रूप में) तुम्हारी कोई नासिका नहीं। यह तुम्हारा विचित्र कौतुक है, जिसे देख-देखकर मेरा मन मोहित हो रहा है॥ २॥

सब जीवों में उस परमात्मा की ज्योति का ही आलोक है, सब उसी से सिंचित हैं; वह पावन, परम आलोक गुरु की कृपा और शिक्षा से ही प्रकट होता है। उस परम ज्योति को जो भी स्वीकार्य होता है, वही पूजा बन जाती है॥ ३॥

हे परमात्मा, तुम्हारे चरण-कमलों के मकरंद का प्यार मुझे रात-दिन रहता है। गुरु नानकदेव कहते हैं कि हे कृपानिधि, मुझ पपीहे को अपनी कृपा की स्वाति-बूँद प्रदान कर, जिससे मैं परमात्मा के नाम में ही लीन हो जाऊँ॥ ४॥

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे।
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे॥ १ ॥ रहाउ॥
नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा
नामु तेरा केसरो ले छिटकारे।
नाम तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो
घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे॥ १ ॥
नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती
नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे।
नाम तेरे की जोति लगाई भइओ
उजिआरो भवन सगलारे॥ २ ॥
नामु तेरो तागा नामु फूल माला भार अठारह सगल जूठारे।
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ
नामु तेरा तुही चवर ढोलारे॥ ३ ॥
दसअठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे।
कहै रविदासु नामु तेरो आरती
सतिनामु है हरि भोग तुहारे॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६९४)

हे प्रभु! मेरे लिए तुम्हारा नाम आरती है और (यही नाम) तीर्थस्थान है। परमात्मा के नाम-स्मरण के बिना सब आडम्बर मिथ्या हैं॥ १ ॥ रहाउ॥ तुम्हारा नाम मेरे लिए आसन है, तुम्हारा नाम ही मेरे लिए सिल है, (मुझे केसर घोलकर मूर्ति पर छिड़कने की आवश्यकता नहीं क्योंकि) मेरे लिए तुम्हारा नाम ही केसर है। हे मुरारी! तुम्हारा नाम ही चन्दन है और वही पानी है, इसलिए नाम-चन्दन को नाम-

पानी से घिसकर (तुम्हारे नाम का स्मरण रूपी चन्दन ही) मैं तुम्हारे ऊपर लगाता हूँ॥ १ ॥ हे प्रभु! तुम्हारा नाम दीपक है, नाम ही बत्ती है और नाम ही तेल है, जो मैंने (नाम रूपी दीपक में) डाला है। मैंने तुम्हारे नाम की ज्योति को जलाया है, जिससे समस्त भुवनों में प्रकाश हो गया है॥ २ ॥ तुम्हारा नाम मैंने धागा बनाया है, नाम को ही फूलों की माला बनाया है (क्योंकि) तुम्हारे नाम की माला के अतिरिक्त वनस्पति की मालाएँ झूठी हैं। तुम्हारे द्वारा उत्पादित प्रकृति में से तुम्हारे समक्ष क्या रखूँ? मैं तुम्हारा नाम रूपी चँवर ही तुम्हारे ऊपर झुलाता हूँ॥ ३ ॥ हे प्रभु! अड़सठ तीर्थों एवं सारे संसार में तुम्हारे नाम का ही बरतना (व्यवहार सच्चा) है। रविदास का कथन है कि हे हरि! तुम्हारा नाम ही आरती है और सत्यनाम ही तुम्हारा भोग है॥ ४॥ ३॥

॥ स्री सैणु॥

धूप दीप घ्रित साजि आरती।
वारने जाउ कमलापती॥ १॥
मंगला हरि मंगला।
नित मंगलु राजा राम राइ को॥ १॥ रहाउ॥
ऊतमु दीअरा निरमल बाती।
तुंही निरंजनु कमलापाती॥ २॥
रामा भगति रामानंदु जानै।
पूरन परमानंदु बखानै॥ ३॥
मदन मूरति भै तारि गोबिंदे।
सैनु भणै भजु परमानंदे॥ ४॥

हे मायापति प्रभु! मैं तुम पर बलिहारी हूँ। (यही बलिहारी होना) धूप, दीपक, घी, सामग्री एकत्रित करके तुम्हारी आरती करने के तुल्य है ॥ १ ॥ हे राजन् राम! तुम्हारी कृपा से हमेशा आनन्दमंगल हो रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे कमलापति! तुम निरंजन ही मेरे लिए सुन्दर दीपक और साफ सुथरी बत्ती हो ॥ २ ॥ जो मनुष्य सर्वव्यापक परमानन्दरूप प्रभु के गुण गाता है, वह प्रभु की भक्ति के प्रभाव से उसके मिलाप का आनन्द भोगता है ॥ ३ ॥ सैन का कथन है कि उस परमानन्द परमात्मा का स्मरण करो, जो सुन्दर स्वरूप वाला है, जो सांसारिक भयों से पार उतारनेवाला है और जो सृष्टि की सुधि लेनेवाला है ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती ॥

सुंन संधिया तेरी देव देवा कर अधपति आदि समाई।
सिध समाधि अंतु नही पाइआ लागि रहे सरनाई ॥ १ ॥
लेहु आरती हो पुरख निरंजनु सतिगुर पूजहु भाई।
ठाढा ब्रहमा निगम बीचारै अलखु न लखिआ जाई ॥
१ ॥ रहाउ ॥
ततु तेलु नामु कीआ बाती दीपकु देह उज्यारा।
जोति लाइ जगदीस जगाइआ बूझै बूझनहारा ॥ २ ॥
पंचे सबद अनाहद बाजे संगे सारिंगपानी।
कबीर दास तेरी आरती कीनी निरंकार निरबानी ॥ ३ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ १३५०)

हे देवाधिदेव, हे स्वामी, हे आदि सर्व-व्यापक प्रभु, तुम्हारा पूजन शून्य में समाधिस्थ हो जाने में है। सिद्धि की साधना में भी प्रभु का रहस्य नहीं जाना जाता, अत: उसकी शरण में बने रहना ही उचित है ॥ १ ॥ हे भाई, निरंजन की आरती इसी में है कि तुम सतिगुरु की

पूजा करो। ब्रह्मा खड़ा देव-विचार करता है, किन्तु अलक्ष्य परमात्मा उसे भी दृश्यमान नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ज्ञान का तेल डालकर यदि हरिनाम की बाती का दीपक जलाया जाए तो शरीर में प्रभु का प्रकाश होता है। उसमें प्रभु की लौ की ज्योति उमगती है, यह तत्त्व कोई ज्ञानवान् ही जानता है ॥ २ ॥ परमात्मा के सम्पर्क में पाँचों संगीतमय वादन बने, अनाहत ध्वनि छा गई। कबीरजी कहते हैं कि ऐ मायातीत निर्वाण-दाता प्रभु, इसी में तुम्हारी परम आरती निहित है ॥ ३ ॥

॥ धंना ॥

॥ गोपाल तेरा आरता ॥

जो जन तुमरी भगति करंते तिन के काज सवारता ॥ १ ॥ रहाउ ॥

दालि सीधा मागउ घीउ। हमरा खुसी करै नित जीउ। पन्हीआ छादनु नीका। अनाजु मगउ सत सी का ॥ १ ॥ गऊ भैस मगउ लावेरी। इक ताजनि तुरी चंगेरी। घर की गीहनि चंगी। जनु धंना लेवै मंगी ॥ २ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६९५)

हे पृथ्वी के पालक प्रभु! मैं तुम्हारे द्वार का भिखारी हूँ। जो-जो मनुष्य तुम्हारी भक्ति करते हैं, तुम उनके कार्य पूर्ण करते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं तुम्हारे द्वार से दाल, आटा और घी माँगता हूँ, जो मेरी आत्मा को नित्य तृप्त रखता है। जूती और सुन्दर कपड़े भी माँगता हूँ और सात बार जोतकर बोया हुआ अन्न भी माँगता हूँ ॥ १ ॥ हे गोपाल! मैं गाय, भैंस (दुधारू) माँगता हूँ और एक सुन्दर अरबी घोड़ी भी माँगता हूँ। तुम्हारा दास धन्ना तुमसे सुघड़ (गुणसम्पन्न) स्त्री भी माँगता है ॥ २ ॥

॥ रागु सोरठि ॥

भूखे भगति न कीजै। यह माला अपनी लीजै।
हउ मांगउ संतन रेना। मै नाही किसी का देना॥ १ ॥
माधो कैसी बनै तुम संगे।
आपि न देहु त लेवउ मंगे॥ रहाउ॥
दुइ सेर मांगउ चूना। पाउ घीउ संगि लूना।
अध सेरु मांगउ दाले। मोकउ दोनउ वखत जिवाले॥२ ॥
खाट मांगउ चउपाई। सिरहाना अवर तुलाई।
ऊपर कउ मांगउ खींधा। तेरी भगति करै जनु थींधा॥३ ॥
मै नाही कीता लबो। इकु नाउ तेरा मै फबो।
कहि कबीर मनु मानिआ।
मनु मानिआ तउ हरि जानिआ॥ ४ ॥

(गु. ग्र. सा. पृष्ठ ६५६)

यदि मनुष्य की तृष्णा रोटी की ओर से ही न खत्म हुई तो वह प्रभु की भक्ति नहीं कर सकता, फिर वह भक्ति दिखावे की ही रह जाती है। (हे प्रभु! एक तो मुझे रोटी से निश्चिन्त करो और इसके अतिरिक्त) मैं सन्तों के चरणों की धूलि माँगता हूँ, ताकि मैं किसी के अधीन न होऊँ॥ १ ॥ हे प्रभु! तुमसे संकोच करने पर निर्वाह नहीं हो सकता। इसलिए यदि तुम कुछ न दोगे तो मैं ही माँगकर ले लूँगा॥ रहाउ॥ मुझे दो सेर आटे की जरूरत है, एक पाव घी तथा कुछ नमक चाहिए, मैं तुमसे आधा सेर दाल माँगता हूँ—ये चीजें मुझे दो समय की आपूर्ति के लिए पर्याप्त हैं॥ २ ॥ चारपाई माँगता हूँ, तकिया और गद्दा भी। ऊपर लेने के लिए रजाई की भी जरूरत है—बस फिर तुम्हारा भक्त निश्चिन्त होकर प्रेम-रस में भीगकर तुम्हारी भक्ति करेगा॥ ३ ॥

कबीर का कथन है कि हे प्रभु! मैंने माँगने में कोई लालच नहीं किया, क्योंकि (इन चीजों के अतिरिक्त) वास्तव में तो तुम्हारा नाम ही मुझे प्यारा है। मेरा मन तुम्हारे नाम में हिल-मिल गया है और जबसे यह मन नाम से हिल-मिल गया है, तबसे तुम्हारे साथ मेरी गहरी जान-पहचान हो गई है॥ ४॥

॥ दोहरा॥

लोप चंडका होइ गई सुरपति को दे राज।
दानव मार अभेख करि कीने संतन काज॥

इस प्रकार इन्द्र को राज्य देकर चंडिका लोप हो गई। उसने दानवों को मारकर बेहाल कर दिया था और साधु पुरुषों के (धर्म) कार्य का संरक्षण किया था।

॥ सवैया॥

याते प्रसंन भए है महाँ मुनि देवन के तप मै सुख पावैं।
जग्य करै इक बेद ररै भव ताप हरै मिलि ध्यानहि लावैं॥
झालर ताल म्रिदंग उपंग रबाब लिए सुर साज मिलावैं।
किंनर गंध्रप गान करै गनि जच्छ अपच्छर निरत दिखावैं॥
संखन की धुन घंटन की करि फूलन की बरखा बरखावैं।
आरती कोटि करै सुर सुंदर पेख पुरंदर के बलि जावैं॥
दानत दच्छन दै के प्रदच्छन भाल मै कुंकुम अच्छत लावैं।
होत कुलाहल देवपुरी मिलि देवन के कुलि मंगल गावैं॥

(दशमग्रन्थ-७९)

(दानवों के नष्ट हो जाने से) महा मुनिगण प्रसन्न हो गये हैं और देवताओं में ध्यान लगाकर सुख प्राप्ति कर रहे हैं। कहीं यज्ञ किया जा रहा है, कहीं वेदपाठ हो रहा है और कहीं सामूहिक रूप से समाधि

लगाई जा रही है। झालर, ताल, मृदंग, रबाब आदि वाद्य यन्त्रों के स्वर मिलाये जा रहे हैं। कहीं किन्नर और गंधर्व गायन कर रहे हैं तथा कहीं पर यक्ष एवं अप्सरायें नृत्य कर रही हैं। (वे) शंखों एवं घंटिकाओं की ध्वनि के बीच फूलों की वर्षा कर रहे हैं। सौन्दर्ययुक्त देवता भिन्न प्रकार की आरतियाँ कर रहे हैं और इन्द्र को देखकर न्यौछावर हो रहे हैं। दान देकर और इन्द्र की परिक्रमा करके मस्तक पर कुंकुम एवं अक्षत आदि का टीका लगा रहे हैं। सारी देवपुरी में उल्लासमय कोलाहल व्याप्त हो गया है और देवताओं के घरों में मंगलगान की ध्वनि सुनाई पड़ रही है।

॥ सवैया ॥

हे रवि हे ससि हे करूणानिध मेरी अबै बिनती सुनिलीजै।
और न मांगत हउ तुम ते कछु चाहत हउ चित मै सोई कीजै॥
सत्रुन सिउ अति ही रन भीतर जूझ मरौ कहि साच पतीजै।
संत सहाइ सदा जग माई क्रिपा करि सयाम इहै बरू दीजै।

(दशमग्रन्थ–४९५)

हे सूर्य चन्द्र एवं करुणानिधि रूपी परमात्मा! मेरी एक विनती सुन लो। मैं तुमसे अन्य कुछ नहीं माँग रहा हूँ, जो मैं मन में चाहता हूँ, कृपापूर्वक वही कीजिए। मैं शत्रुओं से युद्ध में लड़ता हुआ जूझ जाऊँ तो मैं समझूँगा कि मैंने सत्य को प्राप्त कर लिया है। हे जगत् के पोषणकर्ता मैं सदैव इस संसार में संतों की सहायता करता हूँ। (और दुष्टों का नाश करता रहूँ)।

॥ सवैया ॥

पांइ गहै जब ते तुमरे तब तो कोउ आंख तरे नही आन्यो।
राम रहीम पुरान कुरान अनेक कहैं मत एक न मान्यो॥
सिंम्रति सासत्र बेद सभै बहु भेद कहै हम एक न जान्यो।

स्री असिपान क्रिया तुमरी करि
मै न कहयो सब तोहि बखान्यो।

॥ दोहरा ॥

सगल दुआर कउ छाडिकै गहिऊ तुहारो दुआर।
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार॥

(दशमग्रन्थ-२५४)

जब से मैंने तुम्हारे चरण पकड़े हैं, तब से अब मेरी नजर में कोई ठहरता नहीं अर्थात् मुझे अन्य कोई भी अच्छा नहीं लगता। पुराण और कुरान तुम्हें राम और रहीम आदि अनेकों नामों और कथाओं के माध्यम से तुम्हें जानने की बात करते हैं, परन्तु मैं इनमें से किसी के भी मत को नहीं मानता। स्मृतियाँ, शास्त्र, वेद तुम्हारे अनेकों भेदों का वर्णन करते हैं, परन्तु मैं एक भी भेद से सहमत नहीं हूँ। हे खड्गधारी परमात्मन्! यह सब तुम्हारी कृपा से ही वर्णन हुआ है। मुझमें भला इतना (लिख जाने का) सामर्थ्य कहाँ (कि मैं इतना विशाल वर्णन कर सकूँ) ॥ दोहा ॥ सारे द्वारों को छोड़कर मैंने, हे प्रभु! केवल तुम्हारा द्वार पकड़ा है। हे परमात्मन्! तुमने मेरी बाँह पकड़ी है। यह गोविंद तुम्हारा दास है; बाँह पकड़ने की लाज निभाना।

॥ दोहरा ॥

ऐसे चंड प्रताप ते देवन बढ्यो प्रताप।
तीन लोक जै जै करै रै नाम सत जाप॥

(दशमग्रन्थ-७९)

इस प्रकार चंडिका के प्रताप से देवताओं के पराक्रम में वृद्धि हुई और तीनों लोकों से जय जयकार और सत्य के जाप की ध्वनि सुनाई पड़ने लगी।

चत्र चक्र वरती चत्र चक्र भुगते।

सुयंभव सुभं सरबदा सरब जुगते।

दुकालं प्रणासी दइयालं सरूपे।

सदा अंग संगे अभंगं बिभूते।

(दशमग्रन्थ-१०)

हे प्रभु! तुम्हें प्रणाम है। तुम चारों दिशाओं अर्थात् सारे विश्व में व्याप्त हो, चारों और तुम्हारा ही हुक्म चल रहा है। तुम स्वयं अपने ही द्वारा उद्भूत हो, सौंदर्य हो और सर्वदा सभी जीवों में संयुक्त हो। हे प्रभु! जीवों के काल (आवागमन) का कष्ट दूर करने वाले भी तुम ही हो और तुम ही साक्षात दया के स्वरूप हो। तुम सदैव सभी जीवों के अंग-संग हो और तुम्हारी विभूतियाँ (निधियाँ) कभी भी क्षय (समाप्त) होने वाली नहीं हैं।

अरदास

[अरदास की मर्यादा है कि गुरुसिख जब भी बाणी का पाठ करे सच्चे पातशाह (ईश्वर) के चरणों में समर्पण भाव से प्रार्थना करे कि सुख शांति का व्यवहार बना रहे। परमेश्वर प्रार्थी के सिर पर कृपापूर्वक वरद हस्त रखे। सांसारिक मनुष्यों का कर्त्तव्य है कि कोई भी व्यवधान हो, यात्रा पर निकलना हो, शुभ कार्य प्रारम्भ करना हो अथवा कोई भी मंगल कामना करे तो अरदास करके प्रारम्भ करे। परमात्मा अरदास करने वाले की मनोभिलाषा पूर्ण करेंगे।]

१ ओंकार श्री वाहिगुरु जी की फतह

स्री भगौती जी सहाय॥ वार स्री भगौती जी की॥ पातिशाही १०॥

प्रिथम भगौती सिमरि कै गुरुनानक लईं धिआइ।
फिर अंगदगुर ते अमरदासु रामदासै होईं सहाइ॥
अरजन हरगोबिंद नो सिमरो स्री हरिराइ।
स्री हरिक्रिशन धिआईए जिसु डिठै सभि दुख जाइ॥
तेगबहादुर सिमरिए घर नउ निधि आवै धाइ।
सभ थाईं होइ सहाइ॥ १॥

दसवें पातिसाह स्री गुरु गोबिंद सिंघ साहिब जी, सभ थाईं दोइ सहाइ॥

दसां पातिशाहियां दी जोत स्री गुरु साहिब जी दे पाठ दीदार दा धिआन धर के-बोलो जी वाहिगुरु॥

पंजां पिआरिआं, चौहां साहिबजादिआं, चाली मुकतिआं

हठीआं, जपीआं, तपीआं,
जिना नाम जपिआ, वंड के छकिआ
देग चलाई, तेग वाही, देख के अणडिठ कीता,
तिनां पिआरिआं, सचिआरिआं दी
कमाई दा धिआन धर के
खालसाजी! बोलो जी वाहिगुरु॥

जिन्हां सिंघां सिंघणीआं ने धरम हेत सीस दिते, बंद बंद कटाए, खोपड़िआं लुहाइआं, चरखड़ीआं ते चढ़े, तन आरिआं नाल चिराए, गुरुदुआरिआं दी सेवा लई कुरबानिआं कीतीआं धरम नहीं हारिआ, सिखी केसां सुआसां नाल निबाही, तिन्हा दी कमाई दा धिआन धरके,
खालसाजी! बोलो जी वाहिगुरु॥

पजां तखतां अते सरबत गुरदुआरिआं दा धिआन धर के—
खालसाजी! बोलो जी वाहिगुरु॥

प्रिथमे सरबत खालसा जी की अरदास है जी, सरबत खालसा जी को वाहिगुरु
वाहिगुरु वाहिगुरु चित आवे
चित्त आवन का सदका सरब सुख होवे॥

जहां जहां खालसा जी साहिब,
तहां तहां रछिया, रिआइत,
देग तेग फतह, बिरद की पैज, पंथ की जीत,

स्री साहिब जी सहाइ, खालसा जी के बोल बाले—
बोलो जी वाहिगुरु॥

सिक्खां नूं सिक्खी दान, केस दान, रहित दान,
बिबेक दान, विसाह दान, भरोसादान,
दानांसिर दान, नाम दान, स्री अंम्रितसर जी दे इसनान,
चौकीआं, झंडे, बुंगे, जुगो जुग अटल,
धरम का जैकारा—बोलो जी वाहिगुरु॥

सिक्खां दा मन नीवां, मत ऊची,
मत पत दा राखा आपि वाहिगुरु॥

हे अकाल पुरख!
अपणे पंथ दे सदा सहाइ दातार जीऊ!
स्री ननकाणा साहिब ते होर गुरदुआरिआं, गुरधामां दे
जिन्हा तो पंथ नू विछोड़िआ गिआ है,
खुल्ले दरशन दीदार ते सेवा संभाल
दा दान खालसा जी नूं बखशो॥

हे निमाणिआं के माण, निताणिआं दे ताण,
निऊटिआं दी ओट, सच्चे पिता वाहिगुरु!
आपजी दे हजूर (रहिरासि साहिब) *
दे पाठ दी अरदास है जी॥

---

* समयानुसार जिस पाठ की समाप्ति पर अरदास करें तो उसी पाठ का नाम लें और जिस मनोकामना से पाठ एवं अनुष्ठान किया हो तो उसका नाम विवरण कहें।

अक्खर वाधा घाटा भुल चुक माफ करनी।

सरबत दे कारज रास करने।

सेइ पिआरे मेल, जिन्हां मिलिआं तेरा नाम चित आवे॥

नानक नाम चढ़दी कला।

तेरे भाणे सरबत दा भला॥

वाहिगुरु जी का खालसा : वाहिगुरु जी की फतह

ॐ